पंजीयन क्रमांक : MPHIN36496
• मूल्य : 50 रुपए

जाग्रत मालवा

स्वराज 75 विशेषांक

2022-23

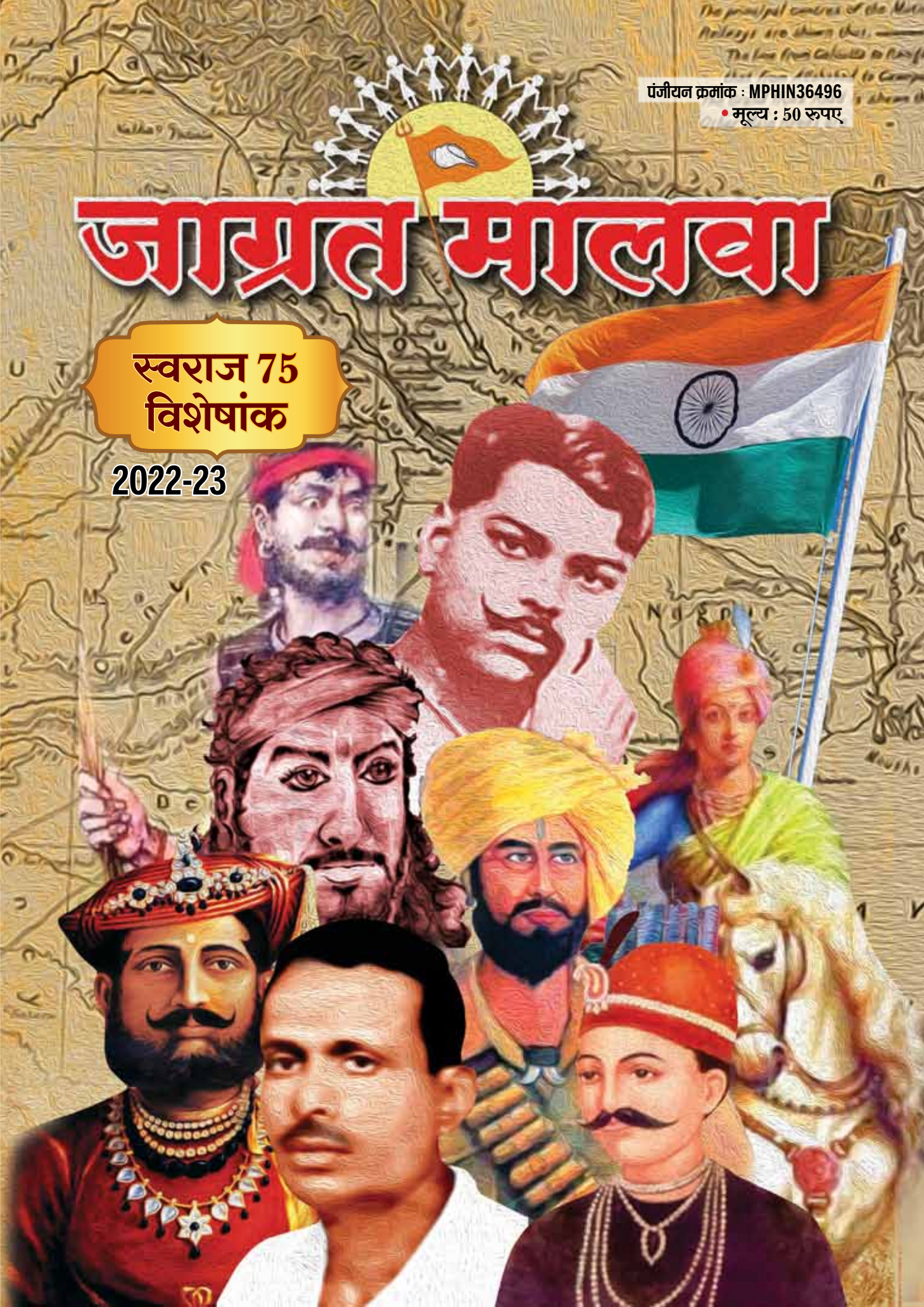

आज़ादी का अमृत महोत्सव

श्री शिवराज सिंह चौहान
मुख्यमंत्री, मध्यप्रदेश

श्री नरेन्द्र मोदी
प्रधानमंत्री

मुख्यमंत्री
उद्यम क्रांति योजना

मध्यप्रदेश के शिक्षित युवाओं को स्वरोज़गार के लिए बैंको के माध्यम से कोलेटरल फ्री ऋण और ब्याज अनुदान सहायता

किन परियोजनाओं के लिए

- रुपये 1 लाख से 50 लाख तक मैन्युफैक्चरिंग यूनिट के लिए।
- रुपये 1 लाख से 25 लाख तक सेवा इकाई और खुदरा व्यवसाय के लिए।

किसे मिलेगी सहायता

- प्रदेश के 18 से 40 वर्ष तक की उम्र के युवा।
- शैक्षणिक योग्यता - न्यूनतम 12वीं पास।
- परिवार की वार्षिक आय रुपये 12 लाख से अधिक न हो।

कितनी मिलेगी सहायता

- वितरित किए जाने वाले ऋण पर 3 प्रतिशत प्रति वर्ष की दर से ब्याज अनुदान अधिकतम 7 वर्षों तक (मोरेटोरीयम अवधि सहित)।
- ऋण गारंटी शुल्क प्रचलित दर से अधिकतम 7 वर्षों तक (मोरेटोरीयम अवधि सहित)।

सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्यम विभाग, मध्यप्रदेश

msmedeptmp @minmpmsme

जाग्रत मालवा
मासिक जागरण पत्रिका

मासिक जागरण पत्रिका
शीर्षक (टाईटल) पंजीयन MPHIN36496
वर्ष : 01 • अंक : 08
स्वराज 75 विशेषांक
फाल्गुन-चैत्र
युगाब्द 5123

प्रधान संपादक
देवकृष्ण व्यास
संपादक
अरुण सपकाले
अतिथि संपादक
सिद्धार्थ शंकर गौतम
संपादक मंडल
डॉ. सुब्रतो गुहा
डॉ. सोनाली नरगुन्दे
डॉ. रत्नदीप निगम
डॉ. उत्तम मीणा
अशोक वर्मा

मुख्य कार्यालय
जाग्रत मालवा
जी-1 केसरदीप एवेन्यू
72, नारायण बाग, इन्दौर म.प्र.
पिन कोड : 452007
फोन : 0731-3551341

Email :
jagrutmalwa@gmail.com

Website :
jagrutmalwa.com

jagrutmalwa

मुद्रक एवं प्रकाशक
स्वामी- विश्व संवाद केन्द्र के लिए प्रकाशक और मुद्रक दिनेश गुप्ता द्वारा मुद्रांकण ऑफसेट ए-11/डी, पोलोग्राउंड इंदौर म.प्र. से मुद्रित एवं 72, नारायण बाग, जी-1, केसरदीप एवेन्यू इन्दौर म.प्र. से प्रकाशित। संपादक **अरुण सपकाले** फोन नं. 0731-3551341

अपनी बात

भारत को स्वतंत्र हुये 75 वर्ष हो चुके हैं। पूरा देश स्वतंत्रता के 75वें वर्ष में आजादी का अमृत महोत्सव मनाकर उन मतवालों को याद कर रहा है जिन्होंने माँ भारती की परतंत्रता की बेड़ियों को काटने के लिये जीवन होम कर दिया। कुछ ऐसे अनाम क्रांतिवीरों का भी स्मरण किया जा रहा है जिन्हें इतिहास ने षड्यंत्र के तहत बिसरा दिया था किन्तु वर्तमान राष्ट्रीय चेतना ने उन्हें पुनः स्मृतियों में जीवित कर उनके प्रति श्रद्धासुमन अर्पित किये हैं। वीरों की धरा मालवा-निमाड़ के भी कई ऐसे महान 'नायक' हुये जिन्होंने स्वतंत्रता प्राप्त करने की ललक में अपना सर्वस्व न्योछावर कर दिया। हम ऐसे महानायकों को किसी कालखंड में नहीं बाँध रहे क्योंकि ये सभी वीर सपूत बंधनों से परे हैं। इनकी वीरता जीती-जागती मिसाल है। आज की युवा पीढ़ी इनके बारे में पढ़े, इनके संघर्ष को नमन करे और अपने आदर्शों में इनका स्थान सर्वोच्च रखे यही इस अमृत महोत्सव की सार्थकता है। इसी सोच को दृष्टिगत रखते हुये स्वराज 75 विशेषांक की कल्पना की गई ताकि वर्तमान और भावी पीढ़ी को अपने उच्चादर्शों से जोड़ा जा सके। जी हाँ, वे सभी नाम-अनाम नायक हमारे उच्चादर्श ही तो हैं। वे लड़े, बलिदान हुये; अपने लिये? नहीं। राष्ट्र के लिये, भावी पीढ़ी के लिये, सुनहरे कल के लिये। ऐसे असंख्य वीरों की गाथा जब समाज के समक्ष प्रस्तुत की जायेगी तो निश्चित रूप से समाज स्वतंत्रता का मूल्य समझेगा और उसे अक्षुण्ण रखने के हर संभव प्रयत्न करेगा। उक्त विशेषांक ऐसे नायकों की 'नायकी' को नमन करता है। राष्ट्र सदा आपका ऋणी रहेगा।

वन्दे मातरम्।

संपादक

स्व से स्वराज

लोकतंत्र में तो जनता ही राजा होती है... "जैसी जनता, वैसे राजा..." नेतृत्व में बैठे लोग तो हमारे में से ही हैं। वे तो विदेश से नहीं आये। यानि योग्य नेतृत्व स्थापित करना, जिसे स्थापित किया उसके भाल पर धर्मदण्ड से प्रहार करने का साहस व नैतिक बल रखना व सत्ता व तंत्र को निरंकुश न बनने देना यह हमारा ही दायित्व है। भारत की भारतीयता तभी अक्षुण्ण रहेगी जब शासन की व्यवस्था, नीतियां व भविष्य की योजनाएं भारत केन्द्रित हों, यहां की रीति, नीति, संस्कृति व दर्शन पर आधारित हों। इसके लिए आवश्यक है कि नीति निर्माताओं की सोच भारत केन्द्रित हो।

• विनीत नवाथे

अंग्रेजों को भारत छोड़े 75 वर्ष हो रहे हैं। वैसे तो आत्मावलोकन, मूल्यांकन व संशोधन करते आगे बढ़ते जाना यह सतत प्रक्रिया है किन्तु अमृत महोत्सव जैसे विशेष प्रसंग पर यह अधिक व्यापक रूप से हो रहा है। इस मंथन से निकले विष को सकारात्मकता से ग्रहण किया तो अमृत भी निश्चित ही निकलेगा। भारत के साथ ही उठ कर खड़े होने वाले इजराइल और जापान से तुलना की जाये तो हम स्वयं को बहुत पीछे खड़ा पाते हैं। आर्थिक, सामाजिक व राष्ट्रीय एकात्मता आदि सभी मोर्चों पर हमें अभी बहुत दूरी तय करनी है। हमारी इस अवस्था के लिए निश्चित ही विदेशी षड्यंत्र, आंतरिक शत्रु व अदूरदर्शी तथा स्वार्थी नेतृत्व काफी हद तक उत्तरदायी हैं। पर क्या दोषी केवल ये ही हैं?

लोकतंत्र में तो जनता ही राजा होती है... "जैसी जनता, वैसे राजा..." नेतृत्व में बैठे लोग तो हमारे में से ही हैं। वे तो विदेश से नहीं आये। यानि योग्य नेतृत्व स्थापित करना, जिसे स्थापित किया उसके भाल पर धर्मदण्ड से प्रहार करने का साहस व नैतिक बल रखना व सत्ता व तंत्र को निरंकुश न बनने देना यह हमारा ही दायित्व है। भारत की भारतीयता तभी अक्षुण्ण रहेगी जब शासन की व्यवस्था, नीतियां व भविष्य की योजनाएं भारत केन्द्रित हों, यहां की रीति, नीति, संस्कृति व दर्शन पर आधारित हों। इसके लिए आवश्यक है कि नीति निर्माताओं की सोच भारत केन्द्रित हो। यह तभी संभव है जब जिस समाज से ये नीति निर्माता आते हैं वह भी भारत केन्द्रित चिंतन व आचरण वाला हो। स्पष्ट है कि जैसे-जैसे हम यानी भारत के ‹जन› मन, वचन व कर्म से विशुद्ध भारतीयता को अपनाते जायेंगे, देश सही दिशा में प्रगति करता जायेगा।

विदेशी आक्रांताओं से सैकड़ों वर्ष तक चले संघर्ष का मुख्य आधार भी यही स्व* की भावना थी। स्व की रक्षा हम जब तक कर पाये तब तक हम विजयी होते रहे, विदेशी आक्रांता मुंह की खाते रहे।

इस्लामी आक्रांताओं ने हमारे हजारों देवस्थान, शिक्षा के केन्द्र नष्ट कर दिये तब भी हम स्वाभिमान से खड़े रहे क्योंकि जन-जन के जीवन, आचरण में भारतीयता के संस्कार सुरक्षित थे। देश का हर परिवार, हर गांव सुगठित, स्वावलंबी व स्वाभिमानी था। व्यापारी के वेश में आये यूरोपीय पहले के सभी हमलावरों से भिन्न थे। उन्होंने छल-बल से न केवल सत्ता हासिल की अपितु अनंत काल तक हमें अपना दास बनाये रखने की व्यवस्था भी वे करते गये। उन्होंने हमारी शक्ति के केन्द्रों को पहचान कर उन्हें समूल नष्ट करने का प्रयास किया। हम अपने आप को, अपनी परंपरा, संस्कृति को हीन मानकर घृणा करने लग जायें इसकी पक्की व्यवस्था उन्होंने कर ली थी किन्तु स्वामी विवेकानन्द, लोकमान्य तिलक, वीर सावरकर, महात्मा गांधी, महर्षि अरविंद, गुरुदेव रवीन्द्र नाथ टैगोर, डा. हेडेगेवार जैसे असंख्य चिंतकों व भारतीय समाज के मार्गदर्शक उनके राह की बाधा थे। फिर भी वे हमारे इतिहास व शिक्षा व्यवस्था को दूषित करने में सफल हो गये। उनके अधूरे काम को पूरा करने में नेहरू व उन जैसे काले अंग्रेजों ने कोई कसर बाकी नहीं रखी। सतत संघर्ष, विदेशी सत्ता के कारण हमारा सामाजिक ताना-बाना भी बिखर गया था। समाज को नियोजित व संस्कारित करने वाली व्यवस्थाएं ध्वस्त हो गयी थीं। दूषित इतिहास व शिक्षा के कारण आम भारतीय जनमानस भी गुलामी की मानसिकता का शिकार हो गया। जब नेतृत्व की तरह कला, शिक्षा, शोध के गलियारों में वामपंथी व औपनिवेशिक गुलामों की तूती बोलती थी। इतने संवेदनशील क्षेत्रों में सफलता की सीढ़ी चढ़ने के लिये उस मानसिकता का होना अनिवार्य हो गया था। जो स्वाभिमानी थे, भारत की आत्मा को जानते, पहचानते व मानते थे वे हाशिये पर चले गये। उनपर दकियानूसी, साम्प्रदायिक, दक्षिणपंथी जैसे लेवल लग गये।

एक ओर जिनका हम अंधानुकरण कर रहे हैं वे भी अपनी विनाशकारी विचारधाराओं के कारण अंधकार से जूझ रहे हैं। रूस का साम्यवादी तिलिस्म तो पहले से ध्वस्त हो चुका था, अमेरिका और यूरोप उधार और बिखरते परिवार व्यवस्थाओं से परेशान हैं... चीन में व्यक्तिगत स्वंत्रता को कोई स्थान नहीं है।

आधुनिकता व पाश्चात्य आकर्षण का प्रवाह इतना तीव्र था कि हर भारतीय फिर वह नगर, ग्राम, वन कहीं भी रहता हो, किसी भी प्रान्त, भाषा या वर्ग का हो उसी प्रवाह में बह चला। घर में माताएं 'सेव फल' नहीं एप्पल खिलाने लगीं, जन्मदिन पर दीपक जलाने वाला समाज मोमबत्ती बुझाने लगा। नमस्कार, हाय-हेलो बन गया...! फिल्मों में साधू व पंडित को ढोंगी, मुल्ला-पादरी को भला बताने में धर्म निरपेक्षता दिखाई देने लगी। "इम्पोर्टेड बनारसी साड़ी" पहनकर महिलाएं इतराने लगीं। जून की गर्मी में भी भरी दोपहरी में दूल्हा कोट-टाई में छोडी पर बैठने में शान समझने लगा। मातृ भाषा, राष्ट्र भाषा में बात करना पिछड़ेपन की निशानी बन गया। बस में कंडक्टर धोती पहने ग्रामीण को उठाकर व कोट-टाई वाले को सीट देने लगा। बाजार विदेशी सामानों से भर गये। युवा स्वरोजगार के स्थान पर नौकरी के लिये दौड़ने लगे। कुटीर व हुनर आधारित उद्योग बड़ी कम्पनियों की भेंट चढ़ गये। अपने इतिहास, अपने पूर्वजों, अपनी परंपराओं का उपहास उड़ाने का फैशन चल पड़ा। समाज का बहुत बड़ा वर्ग अंग्रेजों की मानसिक गुलामी का शिकार होकर अपने "स्व" को ही भूल गया। कुछ मन, वचन, कर्म से अंग्रेज हो चुके थे तो कुछ दिखावे के लिये या "जमाने के साथ चलने के लिये" उस प्रकार का जीवन जीने के लिये मजबूर थे।

ऐसे समय में भी एक वर्ग ऐसा था जो भारत को भारत की नजर से देखता था। वह व्यक्तिगत या संस्थागत रूप से इस प्रवाह को थामने का प्रयास करता रहा। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ, गायत्री परिवार, स्वाध्याय परिवार, इशा फाउंडेशन विविध मठ-मंदिरों से जुड़े संस्थान, सामाजिक संगठन, स्वदेशी, स्वराज, स्वधर्म के लिये सतत कार्यरत रहे। एक समय था जब डा. हेडगेवार को किसी ने भरी सभा में पूछ लिया था "कौन मूर्ख कहता है कि भारत हिंदू राष्ट्र है? जापान को कभी नारा नहीं देना पड़ा कि गर्व से कहो हम जापानी हैं या इजराइल को कभी गर्व से कहो हम यहूदी हैं" पर भारत में "हम हिंदू हैं!" का संस्कार देने के लिये अभियान चलाने पड़े....! "स्व" के जागरण का यह कार्य स्वामी विवेकानन्द द्वारा शिकागो धर्म सभा में हिंदुत्व के उद्घोष से आरम्भ हुआ था, जो भारत को अपनी पहचान से अवगत कराने का यह हिमालयी प्रयास का शुभारम्भ था। एक ओर जिनका हम अंधानुकरण कर रहे हैं वे भी अपनी विनाशकारी विचारधाराओं के कारण अंधकार से जूझ रहे हैं। रूस का साम्यवादी तिलिस्म तो पहले से ध्वस्त हो चुका था, अमेरिका और यूरोप उधार और बिखरते परिवार व्यवस्थाओं से परेशान हैं... चीन में व्यक्तिगत स्वंत्रतता को कोई स्थान नहीं है। पूंजीवादी और साम्यवादी विचार अपनी प्रासंगिकता खो चुके हैं... मानव जीवन के कल्याण के लिये प्राचीन भारतीय जीवन दर्शन व मूल्य ही एकमात्र आस बची है।

वहीं दूसरी ओर राष्ट्रीय पुनर्जागरण के सभी प्रयासों के कारण ही आज स्वतंत्रता के 75 वर्ष बाद भारतीय समाज मानसिक गुलामी से मुक्त होता दिखाई दे रहा है। दीपावली पर चीनी पटाखों, चीनी झालर की की जगह स्वदेशी झालर ने ले ली, न्यू ईयर से अधिक वर्ष प्रतिपदा को मनाया जाने लगा। हिंदू मानबिंदुओं का अपमान करने वाली फिल्मों को अब दर्शक स्वयं ही नकार देते हैं। वाहनों के आगे पीछे वंदेमातरम के स्टीकर लगे दिखाई देने लगे हैं। सोशल मीडिया पर परिवार, आयुर्वेद, हिंदू त्योहारों, महापुरुषों की जयंतियों आदि की पोस्ट की बाढ़ आ गयी है.... सोशल मीडिया भगवा रंग में रंग गया है। जेहाद, तुष्टीकरण, पाकिस्तान चीन आदि विषयों पर स्वयं प्रेरणा से प्रतिउत्तर देने वाले असंख्य लोग हैं। यह सभी अच्छे संकेत हैं... वातावरण बदलने में बहुत सहायक हैं। फिर भी इस सकारात्मक वातावरण को वास्तविक और स्थाई बनाने के लिये हर भारतीय को व्यावहारिक धरातल पर कार्य करना होगा। हिन्दू जीवन दर्शन का केवल उद्घोष नहीं दैनन्दिन जीवन के आचरण में लाना होगा।

स्वदेशी का आरम्भ स्वभाषा से होता है। घर, कार्यस्थल, समाज में मातृभाषा में संवाद, लेखन, हस्ताक्षर से शुरुआत करनी होगी। माता-पिता अपनी संतान को अपनी भाषा, वेशभूषा,

परंपारा से अवगत करायें। पर्यावरण, समरसता के संस्कारों की पाठशाला "घर" ही है। उन्हें "स्वधर्म" से परिचित कराना होगा। तिलक, जनेउ, कर्मकाण्ड, आदि का अपना महत्व है पर स्वधर्म प्रकटीकरण सर्वे भवन्तु सुखिनः...., जैसे सेवा के संस्कारों से होता है। वसुधैव कुटुम्बकम यानि सारा जगत एक परिवार है इन उदात्त भावों से होता है। तेन त्यक्तेन भुंजिथा यानि उतना ही ग्रहण करो जितना आवश्यक है, तभी प्रकृति का संतुलन टिकेगा। योग केवल व्यायाम नहीं है अपितु अहिंसा, अपरिग्रह अस्तेय सहित मानवीव जीवन मूल्यों पर आधारित जीवन शैली है। परिवार, गांव, समाज, देश व प्रकृति का हित किन बातों में है, उन्हें राम, कृष्ण, गौतम, नानक, शिवाजी की गाथाएं सुनानी होंगी... मातृ देवो भव, पितृ देवो भव, गुरु देवो भव, राष्ट्र देवो भव.... केवल रटाना ही नहीं; स्वयं उदाहरण प्रस्तुत कर सिखाना होगा।

परिवार की ही तरह सामाजिक संस्थाओं को भी "राष्ट्र सर्वोपरि" का भाव समाजजनों में जगाना होगा। अपने समाज को क्या मिला से अधिक हमने अपने समाज को क्या दिया? हमारे समाज ने देश को क्या दिया? इस पर अधिक ध्यान देना होगा। स्वतंत्रता का अमृत महोत्सव यह हर्षोल्लास का अवसर तो है ही साथ ही आत्मावलोकन, सिंहावलोकन का भी अवसर है... दृढ संकल्पों का भी अवसर है..! स्वतंत्रता के सौवें वर्ष में पहुंचने से पहले भारत माता विश्वगुरु के सिंहासन पर आरूढ़ होने के लिये किस तरह के परिवर्तन हमने अपने मन, वचन व कर्म में करना होंगे यह सुनिश्चित करने का भी सुअवसर है।

स्वाधीनता से स्वतंत्रता की ओर

स्वाधीनता से स्वतंत्रता की ओर बढ़ने वाला हमारा गणतंत्र आज कहाँ तक पहुँचा है और हमारे साथ स्वाधीन हुये देश आज कहाँ पर हैं? क्या हम पिछले 75 वर्षों में उतना बढ़ सके जितना हमें आगे बढ़ना था या जितना वो चीन, जर्मनी, जापान, इज़राइल बढ़ सके, जिनकी स्थिति उस समय हमारे जैसी समृद्ध थी। तो क्या रही हैं चुनौतियाँ, कमियाँ या बाधायें, आइये समझें और इस पर विचार कर आगे बढ़े।

• कैलाश चन्द्र

आजाद का विपरीत गुलाम होता है और आजादी का गुलामी, पराधीनता-स्वाधीनता, पराया राज (तंत्र) -स्व राज तंत्र, परतंत्रता-स्वतंत्रता; स्वराज से स्वतंत्रता की ओर बढ़ना है। राज हमारा-तंत्र तुम्हारा नहीं चलेगा-नहीं चलेगा। स्वतंत्रता मानव एवं राष्ट्र जीवन का शाश्वत सत्य है जो व्यक्ति को उसके स्वत्व का बोध कराती है। जो स्वयं उसको और राष्ट्र को गुलाम नहीं बनने देती है। जिनका स्वत्व नष्ट हो गया ऐसा गर्व विहीन व्यक्ति और समाज सदा गुलाम है। वो अपने कोढ़ और फोड़ दोनों को पालकर उसकी सडांध और खुजली का ही आनन्द लेता है, बीमारी या गुलामी से मुक्ति का नहीं। पराधीनता के कालखण्ड में एक बात आम थी कि सम्पन्न लोग एवं अंग्रेज, अंग्रेज़ी और अंग्रेज़ीयत को चाहने वाले लोग स्वयं को आजाद ही मानते थे, शेष भारतीयों को गुलाम मानते थे। ये लोग अंग्रेज़ों के साथ बैठकर गरीब भारतीयों का, सभ्यता-संस्कृति का मज़ाक बनाते थे और उनके साथ अकेले या मिलकर दुर्व्यवहार भी करते थे। इसमें बहुत बड़ी संख्या में ब्रिटिश सरकार की नौकरी करने वाले, उनके द्वारा मिलने वाले सम्मान के भूखे या उनसे कृपा पाये लोग और अपनी अंग्रेज़ी मानसिकता के समर्थक ही अधिकांश थे। अंग्रेजों का पराया राज उन्हें भाता था, स्व का बोध न होने के कारण पराया तंत्र उनको अपना लगता था। अंग्रेज़ों के आधीन रहना वो गौरव का विषय मानकर चल रहे थे। उनकी प्रशंसा, यशोगान जैसी चाकरी करना ही बहुत से लोगों का नित्य का काम था। ऐसी मानसिकता वालों ने, स्वराज के आग्रहियों से दुर्व्यवहार किया, उनकी जासूसी की, उनको पकड़वाया ही है। स्वराज के पक्षधरों के प्रेरणास्रोत- सर्वोदय समाज का दीन-हीन, पीड़ित, दुखी, दरिद्र नारायण ही था जो कदम-कदम पर अपमानित था।

अंग्रेज और उनके भाट, चाकर, प्रशंसक लोग ऐसे दैन्य नागरिकों की गिनती पशुओं में करते थे।

गुलाम और स्वतंत्रता सेनानी में अन्तर है। गुलाम को मात्र आजाद होने की आवश्यकता है। पर सम्यक् क्रांतिकारी, स्वतंत्रता चाहने वालों को स्वाधीनता और स्वराज चाहिये, स्व का तंत्र लिये हुये स्वतंत्रता चाहिये। वह अधिकार से कहता है कि यह देश हमारा है। इसके लिये, अपने लिये, अपने देशवासियों के लिये कार्य करने की हमें किसी दूसरे देश के चाकरों की अनुमति नहीं चाहिये? और इसे हम सब भारतवासी लेकर ही रहेंगे।

हमला होने पर एकता की सहज कल्पना पश्चिम का विचार है - Nations die in peace & live in war. बाहरी आक्रमण के समय एक होना सहज प्रतिक्रिया मात्र है जो आवश्यक स्वार्थ है पर इसमें एकता, समानता और स्वत्व का बोध, राष्ट्रीय चित्ति का बोध कम या नहीं है।

हमारा राष्ट्र जीवन हजारों वर्षों का है। इसका आधार भावनात्मक है, युद्ध, विपत्ति, अवरोध मात्र नहीं है। व्यक्तिगत एवं राष्ट्र जीवन की एक उदात्तदृष्टि अपने पास है। हम संसार में किसी का विरोध करने, मरने-मारने मात्र को नहीं अपितु सबको जोड़ने के लिये हमारी संस्कृति का उद्गम हुआ है। "वयं राष्ट्रे जागृयाम पुरोहिताः" हमारा मूलमन्त्र है, हम करें राष्ट्र आराधन" हमारा गौरव गान है, जो सकारात्मक है, विधायी एवं चिरंजीवी विचार है; जो माता भूमिः पुत्रों अहं पृथिव्याः की घोषणा करता है। और जो हजारों हजार वर्षों से स्वयं को इस धरा का पुत्र मानता है। हमारे मृत्युंजय राष्ट्र का चिरंजीवी विचार हमें सर्वे भवन्तु सुखिनः सिखाता है, सर्व मंगल करना सिखाता है। इसके साथ ही वह देह की नश्वरता सिखाता है, आत्मा एवं राष्ट्र की अमरता भी सिखाता है। शास्त्रों में वर्णित आत्म तत्व की अमरता के विचार से सुशोभित स्वराज के मतवाले श्रीमदभगवद गीता जी को हाथ में लेकर फाँसी के फन्दों को चुनते हुये, मस्ती से भरे मतवालों की तरह अजर-अमर हो जाना चाहते हैं। जेल में उनकी दिनचर्या का आदर्श मिलता है। उनके लिखे-गाये गीत उत्साह का संचार करते हैं। उनका अपने अन्तिम दिनों में जेल में हंसी-ठिठोली करना, हमें जोश और उत्साह से भर देता है। चाहे वो खुदीराम बोस का आम फल को खा वहीं फुलाकर रख देना हो या बिस्मिल का अन्तिम दिन तक व्यायाम करते हुये उसी शारीरिक बल के साथ पुनर्जन्म लेकर अंग्रेज़ों को देश से खदेड़ने की अहर्निश जेल में चर्चा करना हो।

सत्यं वद धर्मं चर-सत्य बोलो और धर्म सम्मत आचरण करो। जैसा राजा हरीश्चन्द्र ने किया है, सत्य के लिये स्वयं सहित समूचे परिवार को नीलाम कर दिया। परिवार ने दुःख सहा, कष्ट सहे किंतु अपने सत्य धर्म का पालन किया। यह भारतीय जीवन का उच्च आदर्श है जिसका अनुसरण भारतीय जीवन मूल्य का पालन शास्त्रधारी आदि शंकराचार्य, मध्वाचार्य, कबीर, समर्थ गुरू रामदास, स्वामी विवेकानन्द, स्वामी रामतीर्थ, महर्षि अरविन्द से लेकर गांधी तक और दूसरी ओर शस्त्र को स्वयं से अलग ना करने वाले विक्रमादित्य, बप्पा रावल, राजेन्द्र चोल, छत्रपति शिवाजी, महाराणा प्रताप, छत्रसाल, चन्द्रशेखर आजाद करते हैं। कहना न होगा कि भारतीय जीवन दर्शन का यही आधार है और दर्शन का आधार स्वयं भारतीय जीवन शैली रही है।

असतो मा सद्गमय - **मुझे असत्य से सत्य की ओर ले चलो।**
तमसो मा ज्योतिर्गमय - **मुझे अन्धकार से प्रकाश की ओर ले चलो।**
मृत्योर्मामृतं गमय - **मुझे मृत्यु से अमरता की ओर ले चलो।।**
ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः

जैसे कालजयी मंत्र हैं। जिन्होंने आवश्यक होने पर क्रांति का भी सूत्रपात किया है। रानी दुर्गावती ने रण में स्वयं की आहूति क्यों दी? रानी कमलापति, पदमावति का जौहर हो या चितौड़ के दर्जनों साका आखिर क्यों, किसके लिये? वह कौन सी स्व के सतीत्व की आग है जिसकी तपिश जौहर की आग से भी अधिक प्रचण्ड है। जो आग झांसी की रानी, कितूर की चनेम्मा, लक्ष्मी सहगल, मणिपुर की नागा जनजाति से रानी माँ गाईडन्ल्यु पैदा करती है। जो स्वराज हित जीना और मरना सिखाती है तो दूसरी ओर भारत में सावित्री सा आदर्श प्रस्तुत कर अपने पति की आयु, सास-ससुर का आयुष यम से लेकर आती है। तो कहीं पति भगवती चरण वोहरा के साथ कदम से कदम मिलाकर स्वातंत्र्य समर की बेदी पर लड़ना सिखाती है और पति के बम बनाना सिखाते हुये बलिदान के बाद भी जिसकी क्रांतिकारी गतिविधियाँ रुकती नहीं है। स्वाधीनता अर्जित कर भी जो सत्ता से सम्मान नहीं लेती, अलंकारों, धन, मानपत्रों, पुरस्कारों से सम्मानित नहीं होती, ऐसी माँ दुर्गा भाभी सा स्वाभिमान से भरा स्व क्या किसी को भी लजाता नहीं है। वो माँ दुर्गा भाभी 1999 तक स्वयं के पुरूषार्थ से अपने परिवार का जीवनयापन कर लगातार कौन सा संदेश देती रही?

सन्यासियों का, मठों का स्वातंत्र यज्ञ में कूदना भारतीय अध्यात्म की मुत्योर्मामृतं गमय का स्मरण कराता है। इस क्रम में 50 वर्ष का सन्यासी संघर्ष हमें वन्देमातरम जैसा अंतर्तम को जागृत कर देता है और आनन्द मठ जैसा काव्य देता है जो स्वराज प्राप्ति के संघर्ष को जीवंत करता है। वन्देमातरम का यह जयघोष, स्वदेशी, स्वावलम्बन की ज्वाला जगा देता है और जिन अंग्रेजों का सूर्य कभी अस्त नहीं होता था उनके ही औपनिवेशिक देश का एक राज्य बंगाल का विभाजन "बंग-भंग" पाँच वर्षों में ही विफल हो जाता है और तब वह ब्रिटिश सूर्य के अस्त होने की सर्वत्र घोषणा करता है। हमारा स्वातंत्र्य आन्दोलन भारतीय चिति के मूल से प्रकट हुआ है, जिसमें मोची ने जूता पालिश से इंकार करके, नाई ने बाल काटने से इंकार करके तो धोबी ने कपड़े धोने से इंकार करके और किसानों ने लगान देने से मना करके स्वातंत्र्य आंदोलन में अपना सहयोग दिया। ढाका में विपिन चन्द्र पाल, मुंबई में लोकमान्य तिलक, केरल में सुब्रमण्यम भारती जैसे कवि और लाहौर से लाला लाजपत राय जैसे अनेकों ज्ञात-अज्ञात महापुरुष क्रांति की मशाल हाथ में ले दहाड़ रहे थे।

सम्पूर्ण समाज के वर्ग, जाति, भाषा, प्रान्त एक साथ सुदूर पूर्वोत्तर में बंगाल राज्य के लिये एक हो गये थे। तत्कालीन नेतृत्व के पुनीत, नैतिक बल से व भारतीय समाज की चिति जागरण से ही यह सम्भव हुआ था। उस समय हमने एक राज्य का विभाजन भी सहन नहीं किया तो फिर 1947 आते-आते हमारे नेतृत्व का नैतिक बल इतना कमजोर कैसे हुआ कि देश का विभाजन भी हमारे समाज ने सहर्ष सह लिया? हम करें राष्ट्र आराधन का सामुहिक स्वर, तुम करो राष्ट्र आराधन में कैसे बदल गया? यह वर्तमान में सदैव चिंतन का, मंथन का एवं विमर्श का विषय बना रहना चाहिये।

यदि वर्तमान के मालवा-निमाड़ी अंचल के स्वातंत्र्य समर की बात करें तो मुगल एवं इस्लामिक आक्रमण के बाद की विस्तृत जानकारी मिलती है। पानीपत की तीसरी लड़ाई में अधिकाँश सिपाही यहीं से थे। बाजीराव पेशवा के भाई चिमन जी अप्पा यहीं से थे। 1818 तक अंग्रेज इस अंचल में प्रवेश ना कर सके थे। यहाँ पर जनजाति समाज का बहुत बड़ा योगदान दिखाई देता है। स्व स्फूर्त आन्दोलनों की भरमार दिखती है। भीलों का अंग्रेजों से संघर्ष, 1820 में दशरथ, 1822 में हिरिया, 1825 में उन्तहारपुर पर हमला, 1831 और 1846 में धार का स्वातंत्र्य, किसानों का अपनी भूमि के लिये किया गया 1852 खानदेश का संग्राम प्रचलित है। सम्पूर्ण अंचल इससे आन्दोलित रहा है। खण्डवा में स्वयं तात्या टोपे ने 1857 के समर में नेतृत्व किया। बड़वानी से भीमानायक, अमझेरा के राजा बख्तावर सिंह, महिदपुर से सदाशिव गोविन्द ने अंग्रेजों को खदेड़ दिया और बाद में फाँसी के फन्दे को चूमकर विदाई ली। 1930 के जंगल सत्याग्रह के समय टांट्या मामा और उसके साथी विचनिया और गोपियाँ का संघर्ष और फाँसी सहित अन्य गाथायें यहाँ प्रचलित हैं। राजाभाऊ महाकाल की निर्भीक शौर्य गाथाओं और जगन्नाथ राव जोशी के संग 1955 में किये गोवा मुक्ति संग्राम से हम सभी परिचित हैं।

पराये तंत्र से स्व के तंत्र हेतु स्वाधीनता आवश्यक थी वो हमने 1947 में, विभाजित ही सही पर प्राप्त की है। स्वाधीनता के पश्चात हमें अपना तंत्र विकसित करना था उसका पहला चरण संविधान बना जो 13 देशों के संविधान का निचोड़ है। पर नौकरशाही को तो हमने लगभग शत-प्रतिशत ब्रिटिश शासन की नकल को ही जस का तस स्वीकार कर लिया जो आज भी वही है। 1835 से लेकर 1860 तक की वही अंग्रेजों की ही बनाई भारतीय दण्ड संहिताएँ हैं। पुलिस और प्रशासन की सेवा भी वही 1858 से लेकर 1935 तक में ही बने काले कानून हैं। जिनके दम पर लम्बे समय तक नौकरशाही ने भारतीय स्वाधीनता सेनानायकों का शोषण किया है। आज भी लोकतंत्र के नाम से शिक्षा एवं स्वास्थ्य तक में इनका सीधा हस्तक्षेप है। जिन विषयों पर इनकी समझ शून्य है वहाँ भी ये सबके सिर पर बैठे हैं। इसको ही निज का तंत्र मानने के कारण विकास की अवधारणा की दिशा ही ठीक नहीं है। इस नौकरशाही को शक्तियों का केन्द्र मानने के कारण वर्तमान पीढ़ी में स्व की चेतना और जागृति का पूर्ण अभाव है। अंग्रेजों के चले जाने के बाद देश की राजनीति, समाज-व्यवस्था, जीवनदर्शन आदि पर विदेशी शासकों के विचारों का जो प्रभाव था, वास्तव में दूर हो जाना चाहिये था पर वो हमारी वेशभूषा, परम्पराओं, भाषा आदि में घुसता गया। हमारे धर्म ग्रन्थ, शास्त्रों के स्थान पर मार्क्स, ऐजिल्स, एडम स्मिथ और मिल्स छा गये जिससे कारण निज गौरव, स्वदेशाभिमान वर्तमान में भी कभी-कभार ही दिखता है।

भारतीय वर्तमान व्यवस्था में से शिक्षा, स्वास्थ्य से नौकरशाही को हटाकर शनैः शनैः न्यूनतम आवश्यक कानून लागू करने वाले स्थानों पर ही सीमित करना होगा। भारतीय जीवन पद्धति, विशाल भूभाग, विस्तृत जनजीवन में कार्य की आवश्यकता और अनुभव में से विशेषज्ञों को अवसर देकर नवीन पद्धति लागू करनी होगी जो भारतीय मान्यताओं, परम्पराओं और स्व के विमर्श से गुथी होगी। पं. दीनदयाल उपाध्याय कहते थे- "प्रत्येक राष्ट्र के लिये 'स्व' का विचार करना आवश्यक होता है। स्वत्व के बिना स्वराज का कोई अर्थ नहीं होता। अपनी प्रकृति के साथ मेल न खाने वाली विचारधारा व कार्यप्रणाली का आधार लेने वाले राष्ट्र पर अनेक विपदायें आती हैं। हमारे देश के सामने जो संकट है, उसका मुख्य कारण यही है।"

आओ अपने राष्ट्र देवता का ध्यान धरें, अपने स्व को पहचानें, हमारे सम्पूर्ण समाज को, विशेषकर नयी पीढ़ी को इस इतिहास को जानना, समझना और स्मरण रख, राष्ट्र की चेतना के स्वर को मुखर करना है। अपनी स्वाधीनता के 75वें वर्ष में स्व के तंत्र हेतु जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में चिंतन, मनन से रचनात्मक कार्य करते हुये और आगामी 100 वें वर्ष तक सम्पूर्ण स्वदेशी, स्वावलम्बी, सर्वसमावेशी तंत्र को विकसित करना है। इस अमृत महोत्सव पर स्वाधीनता से सर्वांग स्वतंत्रता की ओर बढ़ने का पवित्र संकल्प ले आगे बढ़ना है।

गोवा मुक्ति संग्राम के अमर बलिदानी : राजाभाऊ महाकाल

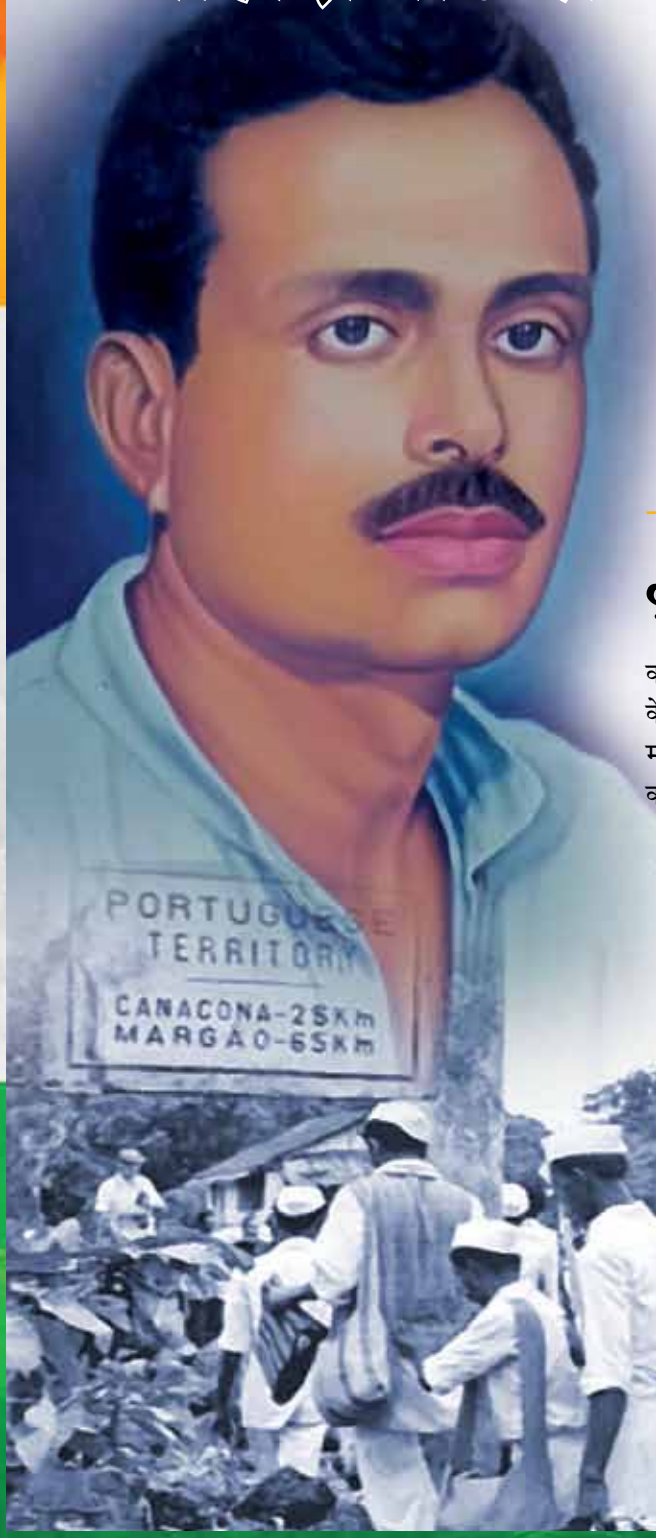

'हिन्दू शक्ति के जागरण बिना देशोद्धार नहीं हो सकता। हमारा भारत परतंत्र है और इसे मुक्त कराने के लिये शक्ति संचय आवश्यक है'- संघ के इस मंत्र को लेकर सन् 1935 में राजाभाऊ राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के स्वयंसेवक बने और "हिन्दुत्व ही राष्ट्रीयता है, भगवाध्वज हमारा राष्ट्र गुरु है"; इस भाव को हृदय में सँजोकर राजाभाऊ राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के प्रचारक बन गये।

• विनय दीक्षित

भारत प्रसिद्ध प्राचीन मोक्षदायिनी अवन्तिकापुरी में एक अत्यंत ही निर्धन महाराष्ट्रीय कुटुम्ब के प्रमुख श्री बालाभाऊ महाकाल की भक्ति पर भोले बाबा ने प्रसन्न होकर आशीर्वाद प्रदान किया। भक्त के भाग्य का सितारा चमका और 26 जनवरी, 1923 को राजाभाऊ महाकाल के रूप में जगमगाया। प्यारी शिप्रा माता की गोद में घंटों खेल करना और तैरना राजाभाऊ का नित्यक्रम था। गुरु के अखाड़े में रोजाना दण्ड बैठक व्यायाम करके अपने शरीर को खूब मजबूत बना लिया था। बाल्यकाल से ही राजा भाऊ महाकाल की हिन्दू धर्म के प्रति अटूट श्रद्धा थी।

कठोर कर्मकाण्ड करने वाले तो वे नहीं बन सके किन्तु राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ में आकर राष्ट्र धर्म के लिये अपने प्राणोत्सर्ग करने की तैयारी अवश्य कर ली। 'हिन्दू समाज, हिन्दू धर्म, हिन्दू संस्कृति और हिन्दू राष्ट्र को पुनः गौरव स्थान पर ले जाने के लिये हिन्दुओं का संगठित होना आवश्यक है। हिन्दू शक्ति के जागरण बिना देशोद्धार नहीं हो सकता। हमारा भारत परतंत्र है और इसे मुक्त कराने के लिये शक्ति संचय आवश्यक है'- संघ के इस मंत्र को लेकर सन् 1935 में राजाभाऊ राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के स्वयंसेवक बने और "हिन्दुत्व ही राष्ट्रीयता है, भगवाध्वज हमारा राष्ट्र गुरु है''; इस भाव को हृदय में सँजोकर राजाभाऊ राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के प्रचारक बन गये।

संघ के प्रचारक के नाते आपका जीवन प्रारंभ हुआ। ग्राम-ग्राम में पैदल भ्रमण हुआ। नंगे पाव, नंगे सिर, योद्धा जैसे शरीर पर केवल कुर्ता, वह भी बिना बटनों के और मोटी धोती यह थी उस समय राजाभाऊ की पोशाक...। हृदय में धधकने वाली देशभक्ति आंखों में भव्य तेज की वर्षा करती थी। अपनी मंद मुस्कान से सब के हृदय पर विजय प्राप्त करके राजाभाऊ अत्यंत प्रभावी व्यक्तित्व बनते गए। गांव-गांव में शाखाएं स्थापित होने लगीं। संघ प्रचारक की कल्पना लोगों को न होने के कारण कभी-कभी वृक्ष के नीचे गाँव के बाहर चने चबाकर रहना पड़ता था। कभी किसी गांव के किनारे मंदिर में कबीट, इमली की चटनी-चपाती से ही पेट भरता और कभी तो भूखे पेट रहकर ही संघ कार्य करना पड़ता। संघ के प्रचारक के लिये उस समय बढ़ी कठिनाई से कार्य करना होता था। इन विकट परिस्थितियों में संघ कार्य का विस्तार बढ़ता गया। शाखाओं की जड़ें गहरी जमने लगीं। इसके कुछ समय पश्चात् ही राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ पर भयकर विपत्ति आयी। शासन द्वारा षड्यंत्रपूर्वक संघ पर प्रतिबंध लगा दिया गया किन्तु राजाभाऊ के हृदय पर प्रतिबन्ध नहीं था। पुलिस द्वारा अनेक बार पीछा किया गया किन्तु राजाभाऊ कभी भी हाथ नहीं आए। अन्यायी शासन राजाभाऊ को गिरफ्तार करने में असफल रहा और ऐसे समय में एक गांव से दूसरे गांव में पैदल भ्रमण करके भावी सत्याग्रह संग्राम की तैयारियां पूरी करने में सफल हुआ। "यह धर्म का अधर्म से और न्याय का अन्याय से सामना है" परम पूज्य गुरूजी द्वारा संघ पर से प्रतिबंध हटाने के लिये आह्वान 9 दिसम्बर, 1948 को किया गया। इससे राजाभाऊ के क्षेत्र में नई चेतना पैदा हुई और गाँव के स्वयंसेवकों का जन सत्याग्रह देख कर शासन थर्रा उठा। संघ के विरोधी बौखला उठे और कांग्रेसी शासन की जेलें संघ सत्याग्रहियों से भर गईं। संघ पर से प्रतिबन्ध हटते ही वे पुनः शक्ति संचय में जुट गए।

परम पूज्य गुरुजी के 7 मार्च, 1950 को दिल्ली में दिये गये वक्तव्य "अपने दुःखी आपदाग्रस्त भाईयों की सहायता के लिये हम दौड़ पड़ें तथा उनकी तन-मन-धन से सेवा करें" को भगवान का आदेश समझ कर अपने स्वास्थ्य की चिंता न करके बंग पीड़ितों की सहायता के लिए गाँव-गाँव जाकर तन-मन से बंगाल के निर्वासित हिन्दुओं के सहायतार्थ (वस्तुहारा सहायता समिति) देवास, शाजापुर जिले से अपार धन संग्रह किया। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ द्वारा गोहत्या निरोध आंदोलन 27 अक्टूबर से 23 नवम्बर, 1952 तक चलाया गया। राजाभाऊ ने देवास जिले में लगभग 418 ग्रामों में अपने कार्यकर्ताओं को भेजकर 26,667 हस्ताक्षर करवाये। प्रत्येक कार्य को प्रमाणिकता एवं परिश्रम से करना राजाभाऊ की सबसे बड़ी विशेषता।

डॉक्टर श्यामा प्रसाद मुखर्जी के नेतृत्व में भारत की अखंडता के लिये आह्वान किया गया और एक देश में दो निशान-दो विधान-दो प्रधान नहीं चलेंगे की घोषणा के साथ जम्मू-कश्मीर सत्याग्रह प्रारंभ किया गया। ऐसे समय में राजाभाऊ के लिये चुप बैठना असंभव था। आप जम्मू-कश्मीर सत्याग्रह में भाग लेने के लिये इन्दौर से दिल्ली लगभग 600 किमी की पैदल यात्रा करके ग्राम-ग्राम में प्रचार करते हुए अखण्ड भारत का संदेश पहुंचाते दिल्ली पहुंचे। डॉक्टर श्यामा प्रसाद मुखर्जी ने राजाभाऊ को गले लगाया और एक सार्वजनिक भाषण में कहा कि जनसंघ के पास ऐसे उत्साही कार्यकर्ता हों तो उस आन्दोलन को शासन कभी नहीं दबा सकता। आपने दिल्ली के बाजार में सत्याग्रह किया और न्यायालय द्वारा दो मास का कठोर कारावास आपको दिया गया। दिल्ली व फिरोजपुर जेल में सजा काट कर आप सोनकच्छ वापस आये और पुनः सेवा कार्य में जुट गये।

18 जून, 1945 में डॉ राममनोहर लोहिया ने महगांव की एक विशाल सभा को संबोधित करते हुए गोवा के स्वाधीनता आंदोलन की घोषणा की तो सारे देश मे एक विशेष उत्साह और जोश की लहर छा गई। गोवा मुक्ति आन्दोलन में जनसंघ द्वारा तेजी से भाग लिये जाने के समाचार प्राप्त हुए। भारतीय जनसंघ के महामंत्री कर्नाटक केसरी श्री जगन्नाथराव जोशी ने माता की अखण्ड रूप की आराधना करने के लिये गोवा में भारतीय जनसंघ के एक बहुत बड़े जत्थे के साथ प्रवेश किया। बर्बर सालाजार द्वारा गोवा में श्री जगन्नाथराव जोशी पर अत्याचार किये गये और जनसंघ के सत्याग्रहियों पर विशेष प्रहार किये गये का समाचार सुनकर राजाभाऊ महाकाल अत्यंत बेचैन हो गये और गोवा जाने व् स्वयं को मातृभूमि के लिए अर्पण करने के लिये आतुर हो उठे।

गोवा की मुक्ति हेतु सभी दलों ने सामूहिक प्रयास प्रारंभ किए। फलस्वरूप बाल गंगाधर तिलक के पुत्र जयवंत राव तिलक की अध्यक्षता में गोवा मुक्ति विमोचन समिति का पूना में गठन किया गया।

मध्य भारत के देशभक्तों ने यह आह्वान स्वीकार किया और सत्याग्रह हेतु राष्ट्रीय विचार के युवकों को एकत्रित कर राजाभाऊ ने अपने उज्जैन स्थित घर से गोवा भेजना प्रारंभ किया। इन देशभक्त युवाओं की सेवा चिंता राजाभाऊ के बड़े भाई श्री विश्वनाथ महाकाल और भाभी मालती देवी कर रही थीं। राजाभाऊ देवास, सोनकच्छ, बागली आदि स्थानों से सैकड़ों कार्यकर्ताओं को लेकर उज्जैन आए और 8 अगस्त को उज्जैन में मध्य भारत के जत्थे का भव्य स्वागत किया गया। 9 अगस्त, 1955 को उज्जैन में बड़े भाई, बहन शकुंतला देवी व भाभी से अंतिम विदाई ली। अंतिम इसलिए क्योंकि संभवतः विदा लेते समय इस आत्मबलिदानी को पूर्वाभास हो गया था। यही कारण था कि उन्होंने अपने परम मित्र व सहयोगी विश्वविख्यात पुरातत्ववेत्ता पद्मश्री श्रीधर विष्णु वाकणकर को जत्थे का नेतृत्व करने से रोका और कहा कि राजाभाऊ को बलिदान करने दो, देश को आपसे बहुत आशाएं हैं।

1955 में गोवा की मुक्ति के लिए आंदोलन प्रारम्भ होने पर देश भर से स्वयंसेवक इसके लिए गोवा गये। उज्जैन के जत्थे का नेतृत्व राजाभाऊ ने किया। 14 अगस्त की रात में लगभग 400 सत्याग्रही सीमा पर पहुंच गये। योजनानुसार 15 अगस्त को प्रातः दिल्ली के लालकिले से प्रधानमंत्री का भाषण प्रारम्भ होते ही सीमा से सत्याग्रहियों का कूच होने लगा।

राजाभाऊ सैकड़ों सत्याग्रहियों के साथ इंदौर की ओर चल पड़े। इंदौर के ऐतिहासिक राजवाड़े के पास सुभाष चौक पर उन्होंने जनता को अपने गोवा जाने का उद्देश्य बताते हुए कहा, "अब अखण्ड भारत की बलिदेवी पर अपने आपको समर्पित करने के लिये मैं गोवा जा रहा हूं। यह आगे बढ़े हुए कदम जैसा कि आप भी जानते हैं कि मैं कभी पीछे नहीं हटाता हूं और इस बार हम गोवा पर भारतीय ध्वज लहराकर ही रहेंगे"। 10 अगस्त, 1955 का यह ऐतिहासिक भाषण आज भी इंदौरवासियों के हृदय में अंकित है। 10 अगस्त को ही आपको इन्दौर की जनता के द्वारा विदाई दी गई। कौन जानता था कि राजा की यह अंतिम विदाई है।

सत्याग्रहियों को साथ लेकर राजाभाऊ गोवा विमोचन समिति के मुख्यालय पूना के केशरी भवन पहुंचे जहां आंदोलन की रूपरेखा बनाई गई थी। 1955 में गोवा की मुक्ति के लिए आंदोलन प्रारम्भ होने पर देश भर से स्वयंसेवक इसके लिए गोवा गये। उज्जैन के जत्थे का नेतृत्व राजाभाऊ ने किया। 14 अगस्त की रात में लगभग 400 सत्याग्रही सीमा पर पहुंच गये। योजनानुसार 15 अगस्त को प्रातः दिल्ली के लालकिले से प्रधानमंत्री का भाषण प्रारम्भ होते ही सीमा से सत्याग्रहियों का कूच होने लगा। सभी लोग रत्नागिरी और फिर गोवा की सीमा के स्टेशन सरसोली पहुंचे। वहां पुर्तगालियों की फौज थी। सबसे पहले श्री वसंतराव ओक और उनके पीछे चार-चार की संख्या में सत्याग्रही सीमा पार करने लगे। दो किमी चलने पर सामने सीमा चौकी थी जिसे देखकर सत्याग्रहियों का उत्साह दुगना हो गया। बंदूकधारी पुर्तगाली सैनिकों ने चेतावनी दी पर सत्याग्रही नहीं रुके। राजाभाऊ तिरंगा झंडा लेकर जत्थे में सबसे आगे थे। पुर्तगाली सेना ने गोलियां चला दीं। सबसे पहले वसंतराव ओक के पैर में गोली लगी। तीन-चार गोलियां खाने के बाद भी उन्होंने तिरंगा नहीं छोड़ा। फिर पंजाब के हरनाम सिंह के सीने पर गोली लगी और वे गिर पड़े। उनके गिरने के तुरंत पश्चात सागर (मध्य प्रदेश) की एक महिला सत्याग्रही सहोदरा देवी ने तिरंगा अपने हाथों में थाम लिया। यह सत्याग्रही बहन इतनी बहादुर थी कि इसने बाएं हाथ पर गोली लगने के बाद दाएं हाथ में तिरंगे को थाम लिया। एक और गोली लगने के बाद यह वीर बेटी अचेत होकर गिर पड़ी। इस वीरांगना के गिरने के तुरंत पश्चात उज्जैन के प्रचारक राजाभाऊ महाकाल ने भारत माता के उद्घोष के साथ तिरंगे को संभाल लिया। पुलिस की ताबड़तोड़ गोली वर्षा के कारण राजाभाऊ गिर गए। एक अन्य स्वयंसेवक सत्याग्रही ने तिरंगे को पकड़ा और सत्याग्रहियों को आगे बढ़ते रहने के लिए प्रेरित किया। इस पर भी राजाभाऊ बढ़ते रहे। अतः सैनिकों ने उनके सिर पर गोली मारी। इससे राजाभाऊ की आंख और सिर से रक्त के फव्वारे छूटने लगे।

धराशाही राजा ने कहा "यह तो मुझे कंकड़ लगा है। कोई चिंता की बात नहीं है।" और वे मूर्च्छित होकर गिर पड़े। साथ के स्वयंसेवकों ने तिरंगे को संभाला और उन्हें वहां से हटाकर तत्काल चिकित्सालय में भर्ती कराया। उन्हें जब भी होश आता, वे पूछते कि सत्याग्रह कैसा चल रहा है? अन्य साथी कैसे हैं? गोवा स्वतन्त्र हुआ या नहीं? हालांकि चिकित्सकों के प्रयास के बावजूद उन्हें बचाया नहीं जा सका। राजाभाऊ तथा अन्य बलिदानियों के शव पूना लाये गये। वहीं उनका अंतिम संस्कार होना था जिसके कारण प्रशासन ने धारा 144 लगा दी लेकिन जनसैलाब तमाम प्रतिबन्धों को तोड़कर सड़कों पर उमड़ पड़ा। राजाभाऊ के मित्र शिवप्रसाद कोठारी ने उन्हें मुखाग्नि दी। उनकी अस्थियाँ जब उज्जैन लाई गईं तो नगरवासियों ने हाथी पर उनका चित्र तथा बग्घी में अस्थिकलश रखकर भव्य शोभायात्रा निकाली। बंदूकों की गड़गड़ाहट के बाद उन अस्थियों को पवित्र क्षिप्रा नदी में विसर्जित कर दिया गया। उज्जैन में निकली वो एक ऐसी ऐतिहासिक शवयात्रा थी जिसमें शामिल हजारों लोगों का कोई ओर-छोर ही नहीं नजर आ रहा था।

भारत की अखण्डता की बलिवेदी पर डॉ. श्यामा प्रसाद मुखर्जी के बाद मध्य भारत के सेनानी राजाभाऊ महाकाल ने अपने देश के लिये प्राणों की आहुति देकर भारत माता की अर्चना भारतीय राष्ट्रध्वज लहराते हुए की। धन्य है वह भारत मां का सपूत जिसने अपने यौवन पुष्प से मां भारती को सुरभित किया।

मालवांचल का सर्वस्पर्शी स्वाधीनता संग्राम

• डॉ. उत्तम मोहन मीणा

भारत में एक विशेष विचारधारा के पूर्वाग्रही इतिहासकारों/साहित्यकारों ने स्वतंत्रता संग्राम को एक विशेष दृष्टिकोण से प्रस्तुत करने की कोशिश की। अंग्रेजों की मंशा के अनुरूप ही उन्होंने यह स्थापित करने का प्रयास किया कि भारतीय स्वाधीनता आंदोलन में आमजनों की और सर्व समाजों की सहभागिता नहीं रही। अपने इस प्रयास में उन्होंने भारतीय स्वाधीनता संग्राम को कुछेक राज परिवारों ओर रियासतों के विद्रोह और एक छोटी सी कालावधि तक सीमित करने की चेष्ठा भी की। उनकी इस कुचेष्ठा के चलते सम्पूर्ण देश के कोने-कोने में हुई क्रांतिकारी घटनाओं, प्रतिरोध, संघर्ष का उल्लेख कहीं नहीं किया और यदि कुछेक उल्लेख मिलता भी है वह अपर्याप्त है।

रानी तुलसाबाई होल्कर, भीमाबाई होल्कर, रानी काशीबाई जैसी मातृशक्ति ने भी स्वातंत्र्य यज्ञ में अपनी आहुति दी जबकि भीमा नायक, खाज्या नायक, बिरजू नायक, सीताराम कँवर, रघुनाथ सिंह मंडलोई, टंट्या मामा जैसे अनेक जनजातीय योद्धाओं के भाले-बरछे और धनुषबाण के घात-प्रतिघात को ब्रिटिशर्स कभी भुला नहीं सकते।

स्वतंत्रता के 75 वर्ष पश्चात भारतीय जनमानस के मन मे अपने नायकों के प्रति सच्ची श्रद्धांजलि देने का संकल्प आया है। गांव-गांव और नगर-नगर से ऐसी क्रांतिकारी गतिविधियों, युद्ध, संघर्ष, बलिदानों की गाथाएं निकल कर आ रही हैं जिन्हें समाज ने श्रुतियों और अपनी स्मृतियों में जीवित रखा था। सावरकर जी की महान कृति '1857 का स्वातंत्र्य समर' आने के पूर्व तक तो यह विमर्श स्थापित हो चुका था कि वह केवल सैनिक विद्रोह था, स्वतंत्रता संग्राम का इससे कोई सरोकार नहीं था। हालांकि 'क्रांति कोष' के लेखक श्रीकृष्ण सरल जी भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन के काल को 1757 में पलासी के युद्ध से (जिसमें 1757 से 1857 के मध्य 100 वर्षों में जनजातियों सहित अन्य

भारत माता की करा जय जय कार

• शिवशंकर रोकड़े

स्वतंत्रता को आयो अमरित तिव्हार
भारत माता की करा जय जय कार।

स्वाधीनता का लेण, दइ गया जान।
स्वतंत्र होय अपणु भारत महान।।
हुया बलिदान हुयो सपनु साकार...
भारत माता की करा जय जय कार

देश अपणु बढ़,बढ़ स्वाभिमान।
समर्पण करा,सारो तन मन प्राण।।
लहीरावा भगवो करा तिरंगा सी प्यार...
भारत माता की करा जय जय कार

अपणु कर्त्तव्य हम खोब निभावां।
स्व भाषा, बोली, स्वराज आपणावां।।
स्वालम्बी बणा झुक सारो संसार...
भारत माता की करा जय जय कार।

स्थानीय समुदायों द्वारा किए गए अनेकों प्रतिरोध भी सम्मिलित हैं) लगाकर 1961 में पुर्तगालियों से गोवा की मुक्ति करवाकर भारत मे विलय तक को मानते हैं। अपने क्रांतिकारियों के प्रति कृतज्ञ राष्ट्र का कर्त्तव्य भी है कि वह उनके अवदान को समुचित सम्मान प्रदान करें।

मध्यप्रदेश के मालवा में भी विदेशी शासकों के विरुद्ध प्रतिरोध की ऐसी ही परंपरा रही। मालवा, निमाड़ और झाबुआ के जनजातीय क्षेत्र में समय-समय पर अनेक संघर्ष हुए, बलिदान हुए। साहित्य, सिनेमा, संगीत, पत्रकारिता कोई ऐसा क्षेत्र नहीं रहा जिसमें इस क्षेत्र का योगदान न रहा हो। 1857 की क्रांति से 1961 के गोवा मुक्ति संग्राम तक मालवांचल की उल्लेखनीय भूमिका रही। महू, नीमच, मंदसौर, इंदौर, महिदपुर, सौंधवाड, तराना, धार, देवास की घटनाएं भारतीय स्वाधीनता के आंदोलन में एक विस्तृत अध्याय के रूप में दर्ज हैं। रानी तुलसाबाई होल्कर, भीमाबाई होल्कर, रानी काशीबाई जैसी मातृशक्ति ने भी स्वातंत्र्य यज्ञ में अपनी आहुति दी जबकि भीमा नायक, खाज्या नायक, बिरजू नायक, सीताराम कँवर, रघुनाथ सिंह मंडलोई, टंट्या मामा जैसे अनेक जनजातीय योद्धाओं के भाले-बरछे और धनुषबाण के घात-प्रतिघात को ब्रिटिशर्स कभी भुला नहीं सकते।

धार के राजा बख्तावरसिंह, देपालपुर के भागीदार सिलावट, महिदपुर के अमीन सदाशिव राव, राघौगढ़ (देवास) के ठाकुर दौलतसिंह, हाटपिपल्या के शकतसिंह शक्तावत, इंदौर के सआदत खां, झारड़ा के अमर सिंह, नरला बनसिंह, भाबरा के अमर बलिदानी चंद्रशेखर आजाद से गोवा मुक्ति संग्राम के हुतात्मा राजाभाऊ महाकाल तक मालवांचल की भूमि पर बलिदानों की विस्तृत परिपाटी रही है। साहित्य, पत्रकारिता और समाजसेवा के क्षेत्र में स्व के भाव से समाज जागरण और संरक्षण करने वाले माखनलाल चतुर्वेदी, श्रीकृष्ण सरल, कवि प्रदीप, बालेश्वर दयाल मामाजी की भी यह कर्मभूमि रही है। आज स्वाधीनता के 75वें महोत्सव के अवसर पर हमारा राष्ट्रीय कर्तव्य है कि हम उनका पुण्य स्मरण करें जिन्होंने हमारे लिए अपने जीवन को खपाया है, यही उनके प्रति हमारी वास्तविक श्रद्धांजलि होगी।

29 वर्षों से देश का No.1 एग्रीकल्चर कोचिंग संस्थान
नवल परम्परा ..... रैंक परम्परा
ICAR-21 में देश के सभी एग्रीकल्चर कोचिंग संस्थान में अभी तक का सर्वश्रेष्ठ प्रदर्शन
MOST EXPERIENCED AND TRUSTED INSTITUTE FOR
ICAR/BHU/NEET/JEE/PAT/PVT
OVER ALL 5th RANK(G)
Akash Raghuwanshi
1st Rank (EWS)
Abhishek Rajput
3rd Rank (Female)
Radhika Gour
1st Rank (SHU)
Tarun Muchula
प्रवेश प्रारंभ
1st Rank के साथ ICAR-21 में 50 से अधिक एवं PAT-21 200 से अधिक छात्रों का चयन
NAVAL CAREER INSTITUTE
New Batches From: 1st April/1st June
1st July (10+2) Maths/Bio/Agri.
Add.: 3/4 jaora Compound, 2nd Floor, Commercial House M.Y.H. Road Indore
Ph.: 0731-4045961/94250-55203

अपने नायकों को ढूंढो, जानो और पहचानो

• अमन व्यास

अंग्रेजों को भारत से खदेड़ने के लिए पहली बार 1857 में जो क्रान्ति हुई, उस क्रान्ति में सम्पूर्ण भारत अंग्रेजों के विरुद्ध उठ खड़ा हुआ था। बच्चे, महिलाएं, युवा, वृद्ध, सैनिक, अधिकारी, मजदूर, किसान, व्यापारी आदि सभी अंग्रेजों के विरुद्ध रणक्षेत्र में खड़े थे।

हम जब किसी दूर के व्यक्ति को कोई विशिष्ट कार्य करते हुए देखते हैं तो हमें लगता है कि यह विशिष्ट कार्य तो वही कर सकता है। यह हर किसी के बस की बात नहीं है। इसके लिए अंग्रेजी में एक कहावत प्रचलित है- Ideals Likes Stars : you will not succeed in touching them with your hands. इस कहावत का भावार्थ स्पष्ट है कि "आदर्श व्यक्तित्व आकाश में प्रकाशित सितारों की तरह है जिन्हें हम अपने हाथों से छू नहीं सकते।" इसीलिए जब छत्रपति शिवाजी और महाराणा प्रताप जैसे उच्च जीवनचरित्रों के उदाहरण दिए जाते हैं तो लोग यही कहते हैं कि वे एकमात्र हो गए, उनके जैसा होना अब सम्भव नहीं है। ऐसा कहने के पीछे श्रद्धा भी हो सकती है और वैसा बनने की अनिच्छा भी हो सकती है। किन्तु यदि आदर्श व्यक्तित्वों को मात्र सितारा कहकर इस विषय को छोड़ दिया गया तो फिर तो देश भविष्य में अवश्य बड़े संकटों का सामना करेगा क्योंकि वे महान जीवन जो राष्ट्र की रक्षा हेतु इतने उच्च आदर्शों को स्थापित करके चले गए, उनसे इस समय की पीढ़ी प्रेरणा प्राप्त करने के बजाय यह कह रही है कि उनके आदर्शों का पालन मात्र इसलिए नहीं किया जा सकता कि सामान्य व्यक्ति के लिए यह करना सम्भव नहीं है। किन्तु मनुष्य की एक सत्प्रवृत्ति भी है कि जब उसके निकट उसे इस प्रकार का कोई उदाहरण सुनाई देता है तो उसे लगने लगता है कि हां भाई ! यह तो मैं भी प्रयास करने पर कर सकता हूँ। जब दादाजी हमें हमारे लड़कपन में पूर्वजों के साहसिक कार्यों के किस्से सुनाते थे तो हमारे मन में एक स्फुरण जाग्रत होता था। हमें अपने कुल के गौरव का भान होता था और लगता था कि हमें जीवन में कोई बड़ा कार्य करना है। भारतीय सेना में रेजिमेंट की पद्धति है। कुछ लोग अज्ञानतावश इसे भारतीय सेना में जातिवाद का नाम दे देते हैं किन्तु रेजिमेंट पद्धति का सत्य तो यह है कि जब युद्ध अथवा किसी विशिष्ट अभियान के लिए वह रेजिमेंट तैयार होती है तब उन्हें उनके कुल के पूर्वजों का शरीर में स्फुरण पैदा कर देने वाला, वीरतापूर्ण और गौरवशाली अतीत किसी चारण द्वारा सुनाया जाता है। इसके फलस्वरूप उस युद्ध अथवा अभियान में सैनिक अधिक वीरतापूर्ण प्रदर्शन करता है।

अंग्रेजों को भारत से खदेड़ने के लिए पहली बार 1857 में जो क्रान्ति हुई, उस क्रान्ति में सम्पूर्ण भारत अंग्रेजों के विरुद्ध उठ खड़ा हुआ था। बच्चे, महिलाएं, युवा, वृद्ध, सैनिक, अधिकारी, मजदूर, किसान, व्यापारी आदि सभी अंग्रेजों के विरुद्ध रणक्षेत्र में खड़े थे। सभी का एकमात्र लक्ष्य था कि अपनी भारत माँ को अब गोरी सत्ता से मुक्त करवाकर स्वतंत्रता की प्राप्ति करवाना। 1857 का स्वातन्त्र्य समर 'न भूतो न भविष्यति' है। दुनिया ने न कभी ऐसा संग्राम देखा न भविष्य में देखने की सम्भावना दिखती है। यदि विधि कुछ वाम न होती तो भारत से 1857 में ही अंग्रेजों को खदेड़ दिया जाता और भारत का विभाजन भी नहीं होता। 1857 के इस महान स्वातन्त्र्य समर के बाद अंग्रेजों को यह समझ आ गया कि भारतीयों के मन में स्वतन्त्रता प्राप्ति की इच्छा कितनी उत्कट है। इसी कारण 1857 के स्वातन्त्र्य समर के पश्चात भयभीत अंग्रेजों ने भारत पर सदा राज्य करने के लिए दो प्रमुख कार्य किए; पहला तो यह कि अंग्रेजों ने भारतीयों पर अनेकों अत्याचार किए ताकि फिर कोई स्वराज्य के लिए विद्रोह न कर सके और दूसरा कार्य यह कि स्वातन्त्र्य समर के विषय में मिथ्या प्रचार भी किया गया। जिस स्वातंत्र्य समर में भारत का एक-एक नागरिक सहभागी हुआ था उसे केवल सैनिक विद्रोह बताने का प्रचार गोरी सत्ता ने बड़े स्तर पर किया। स्वातन्त्र्य समर के स्थानीय क्रान्तिकारियों के अद्भुत पराक्रम को षड्यंत्रपूर्वक सामान्य जन की बातचीत से भी दूर किया गया। देश के जिन प्रमुख क्रान्तिकारियों के प्रति देश के सामान्य जन के मन में श्रद्धा थी ऐसे सभी क्रान्तिकारियों के विषय में यह प्रचार किया गया कि यह सभी लुटेरे हैं, चरित्रहीन हैं। स्वातन्त्र्यवीर सावरकर जी ने जब इन सब विषयों का अध्ययन कर 1857 के स्वातन्त्र्य समर का वास्तविक इतिहास लिखकर भारतीयों के मन में स्वतन्त्रता की ज्वाला पुनः प्रज्वलित करने का निश्चय किया तो अंग्रेजों ने उनके मार्ग में अनेकानेक विघ्न प्रस्तुत किए किन्तु सावरकर का दृढ़ निश्चय था। उन्होंने 1857 का स्वातन्त्र्य समर लिखा जो क्रान्तिकारियों की गीता कहा जाता है। जिसने स्वतंत्रता के यज्ञ में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। गोरों का लक्ष्य स्पष्ट था कि अब भारत के नागरिक किसी भी तरह से हमारे विरुद्ध खड़े न हो पाएं लेकिन जिस दिन इस देश पर राज्य करने का विचार पहली बार लंदन में बैठे लोगों के मन में आया था उसी दिन यह भी निश्चित हो गया था कि भारत को कब और कैसे स्वतंत्र होना है।

भारत स्वराज्य प्राप्ति का अमृत महोत्सव मना रहा है किन्तु हमें तो आज भी कुछ ही क्रान्तिकारियों के नाम याद हैं और वह अंग्रेजी की उसी कहावत की तरह हैं जो इस लेख के प्रारम्भ में आपने पढ़ी है। मालवा-निमाड़ में स्वातंत्र्य समर में आबालवृद्ध सभी अपना सर्वस्व आहूत करने को उद्यत हुए थे। हमारे इसी मालवा-निमाड़ में चन्द्रशेखर आज़ाद हुए, टांट्या मामा की जन्मभूमि पाताल पानी है, महाराणा बख्तावरसिंह, भीमा नायक, खाज्या नायक, भागीरथ सिलावट, ठाकुर दौलतसिंह और अमीन सदाशिवराव जैसे माँ भारती के बेटों की जन्मभूमि और क्रान्तिभूमि मालवा-निमाड़ ही है। किन्तु मालवा-निमाड़ के इन योद्धाओं का महान जीवन किसी षड्यंत्र के कारण दीर्घकाल तक हम सामान्य नागरिकों के सम्मुख नहीं आ पाया। यदि आ जाता तो हम अपने इन पूर्वजों से उसी तरह प्रेरणा पाते जैसे दादाजी द्वारा पूर्वजों के बारे में किस्से सुनाने पर प्राप्त करते हैं। लेकिन हां, अब अन्धकार छट गया है। अब अमृत का काल है और इस अमृत के काल में हम सभी अपने सभी अनाम, विस्मृत और महान पूर्वजों का स्मरण करें।

भाबरा की भूमि पर जन्मे महान क्रांतिकारी चंद्रशेखर आजाद

जलियांवाला बाग नरसंहार के समय चन्द्रशेखर आजाद बनारस में पढ़ाई कर रहे थे। गांधीजी ने सन् 1921 में असहयोग आन्दोलन का फरमान जारी किया तो तमाम अन्य छात्रों की तरह आजाद भी सड़कों पर उतर आए। पहली बार गिरफ्तार होने पर उन्हें 15 कोड़ों की सजा दी गई। हर कोड़े के वार के साथ उन्होंने, 'वन्दे मातरम्' का स्वर नाद किया। इसके बाद वे सार्वजनिक रूप से 'आजाद' पुकारे जाने लगे।

• लोकेन्द्र शर्मा

जिंदगी भर धुआधुआते रहने से अच्छा है एक क्षण के लिए ही सही धधक कर जलो", यही तरीका रहा है जीवन को जीने का हमारे देश के स्वतंत्रता आंदोलन के अमर बलिदानियों का। स्वतंत्रता के समर की अग्नि में कई दीप जले हैं। पूरे भारत के हर छोटे-बड़े स्थानों से प्रत्येक व्यक्ति ने अपने हृदय में स्वतंत्रता की अलख जगाते हुए स्वतंत्रता महासमर में अपना बलिदान दिया। इन्हीं हुतात्मा बलिदानियों में से एक हैं अमर बलिदानी पण्डित चंद्रशेखर आजाद। मालवा माटी के सपूत अमर बलिदानी चन्द्रशेखर आजाद का जन्म भाबरा गाँव (अब चन्द्रशेखर आजादनगर) आलीराजपुर जिले में 23 जुलाई, 1906 को हुआ था। आजाद के पिता पण्डित सीताराम तिवारी अकाल के समय अपने पैतृक निवास बदरका को छोड़कर पहले कुछ दिनों मध्य प्रदेश की अलीराजपुर रियासत में नौकरी करते रहे, फिर जाकर भाबरा गाँव में बस गये। यहीं बालक आजाद का प्रारम्भिक जीवन बीता अतएव बचपन में आजाद ने अपने मित्र और सहपाठी वीर भील बालकों के साथ खूब धनुष-बाण चलाये। इस प्रकार उन्होंने निशानेबाजी बचपन में ही सीख ली और यहीं बचपन से उन्होंने ब्रिटिशों के विरुद्ध अभियान शुरू कर दिए थे।

जलियांवाला बाग नरसंहार के समय चन्द्रशेखर आजाद बनारस में पढ़ाई कर रहे थे। गांधीजी ने सन् 1921 में असहयोग आन्दोलन का फरमान जारी किया तो तमाम अन्य छात्रों की तरह आजाद भी सड़कों पर उतर आए। पहली बार गिरफ्तार होने पर उन्हें 15 कोड़ों की सजा दी गई। हर कोड़े के वार के साथ उन्होंने, 'वन्दे मातरम्' का स्वर नाद किया। इसके बाद वे सार्वजनिक रूप से 'आजाद' पुकारे जाने लगे। असहयोग आन्दोलन के दौरान जब फरवरी 1922 में चौरी-चौरा की

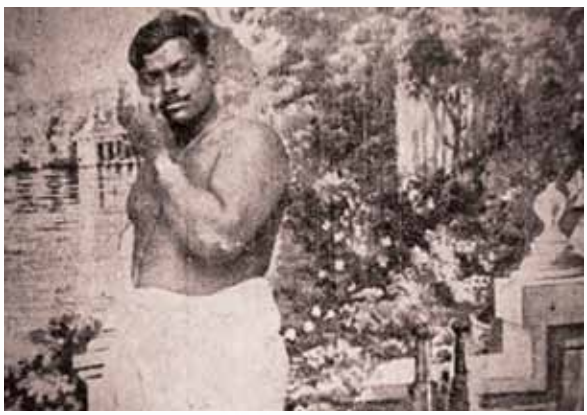

घटना के पश्चात् गांधीजी ने आन्दोलन वापस ले लिया और निरंतर अंग्रेजों के साथ बैठक करने लगे इससे देश के तमाम नवयुवकों की तरह आजाद का भी अंग्रेजों की सेफ्टी वाल्व कांग्रेस से मोहभंग हो गया। तदन्तर पण्डित राम प्रसाद बिस्मिल, शचीन्द्रनाथ सान्याल, योगेशचन्द्र चटर्जी ने 1924 में उत्तर भारत के क्रांतिकारियों को लेकर एक दल हिन्दुस्तानी प्रजातान्त्रिक संघ का गठन किया। चन्द्रशेखर आजाद भी इस दल में शामिल हो गए। लाला लाजपत राय की दुर्दांत हत्या के प्रतिशोध में 17 दिसंबर, 1928 को आजाद, भगत सिंह और राजगुरु ने शाम के समय लाहौर में पुलिस अधीक्षक के दफ्तर को घेर लिया और ज्यों ही जे.पी. सांडर्स अपने अंगरक्षक के साथ मोटर साइकिल पर बैठकर निकले, तो राजगुरु ने पहली गोली दाग दी जो सांडर्स के माथे पर लगी वह मोटरसाइकिल से नीचे गिर पड़ा। फिर भगत सिंह ने आगे बढ़कर 4-6 गोलियां दागीं। जब सांडर्स के अंगरक्षक ने उनका पीछा किया तो चंद्रशेखर आजाद ने अपनी गोली से उसे भी समाप्त कर दिया।

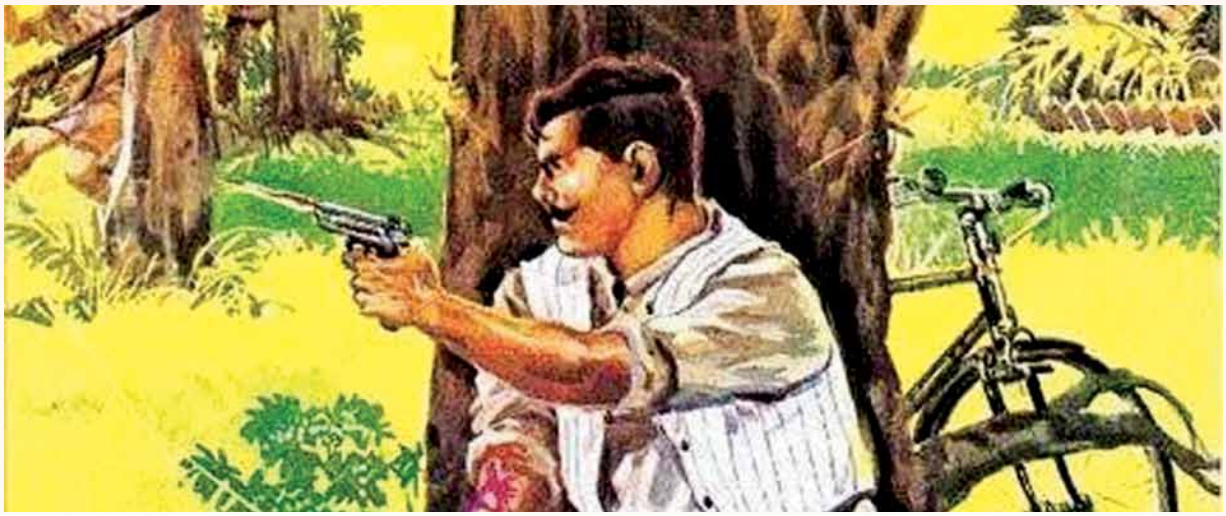

इस प्रकरण में अंग्रेजों ने तीनों महान देशभक्तों को फांसी की सजा सुना दी थी। भगत सिंह, सुखदेव तथा राजगुरु की फांसी रुकवाने के लिए आजाद ने दुर्गा भाभी को गांधीजी के पास भेजा जहां से उन्हें कोरा जवाब दे दिया गया था। आजाद ने मृत्यु दण्ड पाए तीनों प्रमुख क्रांतिकारियों की सजा कम कराने का काफी प्रयास किया। आजाद ने पण्डित नेहरू से यह आग्रह किया कि वे गांधीजी पर लॉर्ड इरविन से इन तीनों की फांसी को उम्रकैद में बदलवाने के लिये जोर डालें। हालांकि गांधी जी ने इस विषय पर कोई चर्चा नहीं की। भारतीय स्वाधीनता आंदोलन के इतिहास के विशेषज्ञ यह दावा करते हैं कि 27 फरवरी, 1931 की सुबह चंद्रशेखर आजाद; भगत सिंह और साथियों की फांसी की सजा को उम्रकैद में बदलवाने के लिए पं. नेहरु से आनंद भवन में मिलने गये थे। सर्वविदित है कि वायसराय लार्ड इरविन से नेहरु के "सम्बन्ध" बहुत अच्छे थे, किंतु नेहरु ने आजाद की दलीलों से असहमति जताई। इसी को लेकर दोनों के बीच तीखी बहस हो गई। परिणामस्वरूप नेहरु ने आजाद को आनंद भवन से निकल जाने को कहा।

आनंद भवन से निकल कर आजाद सीधे अपनी साइकिल से अल्फ्रेड पार्क गये। इसी पार्क में नाट वावर के साथ मुठभेड़ में गोलियां समाप्त हो जाने पर एवं जीवित बच निकलने का कोई रास्ता नहीं होने के कारण उन्होंने अपनी अंतिम गोली स्वयं को मार कर राष्ट्रदेवता के लिए अपना सर्वोच्च बलिदान दिया। इस अमर बलिदानी का अंग्रेजों में कितना भय था इसका अंदाजा इसी बात से लगाया जा सकता है कि अंग्रेज उनकी मृत देह के आसपास जाने का साहस भी जुटा नहीं पा रहे थे और जब यह सुनिश्चित हो गया कि उनकी मृत्यु हो चुकी है तब उनके पार्थिव शरीर पर भी लगातार गोलियां बरसाते रहे।

यहां उल्लेखनीय बात यह है कि जिन आजाद को अंग्रेज शासन इतने वर्षों तक पकड़ना तो दूर खोज भी नहीं पाया उन्हें नेहरू से भेंट के पश्चात मात्र 40 मिनट में तलाश कर पूरे पुलिस फोर्स के साथ अल्फ्रेड पार्क में घेर लिया गया। अंदाजा लगाया जा सकता है कि उनके प्रयागराज (तत्कालीन इलाहाबाद) में होने की जानकारी अंग्रेजों को कहाँ से प्राप्त हुई होगी? अल्फ्रेड पार्क में उनके बलिदान के कुछ साल बाद एक अंग्रेज अधिकारी ने एक मशहूर क्रांतिकारी से बातचीत में कहा था कि उस दिन यदि आजाद के पास पर्याप्त गोलियां रही होतीं तो एक भी पुलिस वाला जीवित नहीं बचता। वामपंथियों व साहित्यकारों की एक जमात ने इस महान बलिदानी के व्यक्तित्व को पिस्तौल-गोली वाला बनाकर सीमित करने का प्रयास किया जबकि वे मेघावी बुद्धि, कुशल रणनीतिकार, अनुशाषित सैन्य संचालक, महान देशभक्त, अदम्य साहसी और माँ भारती के अपराजेय योद्धा थे। उनका एक मन बहुत कठोर था और एक मन करुणा से भरा हुआ। अपने गांव से भागने के बाद वे केवल एक बार मां-पिता से मिलने गए थे। सदाशिव मलकापुरकर को साथ लेकर वे भावरा गांव गए थे और एक सप्ताह रहे थे।

आजाद भारतीय नायकत्व के प्रतिनिधि पुरुष हैं। उनमें वैसी ही वीरता, बलिदान का भाव है जैसा हमारे इतिहास के कुछ गिने-चुने नायकों में रहा। आजाद का स्मरण हमारी आत्मा को गौरव की आनन्दानुभूति और दुःख दोनों देता है। वह हमारी आत्मा में ऐसा गहरा धंसा हुआ कांटा है जिसे भारतीय समाज कभी निकाल नहीं सकता। जब-जब इस संसार में देशभक्ति, त्याग, अक्खड़ पुरुषार्थ, नायकत्व की बात होगी तब-तब पंडित चंद्रशेखर आजाद का नाम सम्मान से लिया जाएगा। वह अपने छोटे से जीवन से भारतीय स्वाधीनता इतिहास के महानायकों में अग्रणी बने रहेंगे। महान क्रांतिकारी को जन्म देने वाली मालवा की माटी और मालवा के समाज को अपने सपूत पर गर्व है।

स्वराज संग्राम के महायज्ञ में मालवांचल की समिधा अमीन सदाशिव राव

महिदपुर के इस संघर्ष में यद्यपि जीत भारतीय पक्ष की हुई और अंग्रेजों को रणभूमि छोड़कर भागना पड़ा पर अंग्रेजों की तरह ही बड़ी संख्या में भारतीय सैनिक भी वीरगति को प्राप्त हुए। आगे चलकर इस युद्ध के लिए वातावरण बनाने में मुख्य भूमिका निभाने वाले अमीन सदाशिवराव भी बंदी बना लिये गये। अंग्रेजों ने उन्हें देशभक्ति का श्रेष्ठतम पुरस्कार देते हुए 7 जनवरी, 1858 को तोप के सामने खड़ाकर गोला दाग दिया। वीर अमीन सदाशिवराव की देह एवं रक्त का कण-कण उस पावन मातृभूमि पर छितरा गया, जिसकी पूजा करने का उन्होंने व्रत लिया था।

• अचला शर्मा ऋषिश्वर

1857 के स्वाधीनता संग्राम ने सिद्ध कर दिया था कि देश का कोई भाग ऐसा नहीं है जहां स्वतंत्रता की अभिलाषा न हो तथा लोग स्वाधीनता के लिए मर मिटने का तैयार न हों। मध्य प्रदेश में इंदौर और उसके आसपास का क्षेत्र मालवा कहलाता है। 1857 में यह पूरा क्षेत्र अंग्रेजों के विरुद्ध दहक रहा था। यहां का महिदपुर सामरिक दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण क्षेत्र था। इसलिए अंग्रेजों ने यहां छावनी की स्थापना की थी, जिसे 'यूनाइटेड मालवा कांटिनजेंट, महिदपुर हेडक्वार्टर' कहा जाता था। इंदौर में नागरिकों ने जुलाई, 1857 में जैसा उत्साह दिखाया था, उसका प्रभाव महिदपुर छावनी के सैनिकों पर भी साफ दिखाई देता था। वे एकांत में इस बारे में उग्र बातें करते रहते थे। यह देखकर अंग्रेजों ने बड़े अधिकारियों तथा अपने खास गुप्तचरों सह सिपाहियों को सावधान कर दिया था।

छावनी में भारतीय सैनिकों के कमांडर शेख रहमत उल्ला तथा उज्जैन स्थित सिंधिया के सरसूबा आपतिया की सहानुभूति क्रांतिकारियों के साथ थी। महिदपुर के अमीन सदाशिवराव की भूमिका भी इस बारे में उल्लेखनीय है। उन्होंने क्रांति के लिए बड़ी संख्या में सैनिकों की भर्ती की तथा उन्हें हर प्रकार का सहयोग दिया। अंग्रेज चौकन्ने तो थे पर उन्हें यह अनुमान नहीं था कि अंदर ही अंदर इतना भीषण लावा उबल रहा है। 8 नवम्बर, 1857 को निर्धारित योजनानुसार प्रातः 7.30 बजे दो हजार क्रांतिकारियों ने ऐरा सिंह के नेतृत्व में मारो-काटो का उद्घोष करते हुए महिदपुर छावनी पर आक्रमण कर दिया। इन सशस्त्र क्रांतिवीरों में उज्जैन व खाचरोद की ओर से आये मेवाती सैनिकों के साथ ही महिदपुर के नागरिक भी शामिल थे। यह देखकर छावनी में तैनात देशप्रेमी सैनिक भी इनके साथ मिल गये। अंग्रेज अधिकारी सावधान तो थे ही, अतः भीषण युद्ध छिड़ गया पर भारतीय सैनिकों का उत्साह अंग्रेजों पर भारी पड़ रहा था। कई घंटे के संग्राम में डा. कैरी,

लेफ्टिनेंट मिल्स, सार्जेण्ट मेजर ओ कॉनेल तथा मानसन मार डाले गये। मेजर टिमनिस की पत्नी को उसके दर्जी ने अपनी झोंपड़ी में छिपा लिया, इससे उसकी जान बच गयी। इस युद्ध में भारतीय वीरों का पलड़ा भारी रहा। जो अंग्रेज अधिकारी बच गये, उन्हें इंदौर के महाराजा तुकोजीराव होल्कर ने शरण देकर उनके भोजन तथा कपड़ों का प्रबन्ध किया। परन्तु संगठन एवं कुशल नेतृत्व के अभाव, अपूर्ण योजना तथा समय से पूर्व ही विस्फोट हो जाने के कारण का यह अभियान सफल होते-होते रह गया।

शनैः शनैः अंग्रेजों ने फिर से सभी छावनियों पर अधिकार कर लिया। जिन सैनिकों ने अत्यधिक उत्साह दिखाया था, उन्हें सेवा से हटा दिया। कुछ को कारागार में ठूंस दिया तथा बहुतों को फांसी पर लटकाकर पूरे देश में एक बार फिर से आतंक एवं भय का वातावरण बना दिया। महिदपुर के इस संघर्ष में यद्यपि जीत भारतीय पक्ष की हुई और अंग्रेजों को रणभूमि छोड़कर भागना पड़ा पर अंग्रेजों की तरह ही बड़ी संख्या में भारतीय सैनिक भी वीरगति को प्राप्त हुए। आगे चलकर इस युद्ध के लिए वातावरण बनाने में मुख्य भूमिका निभाने वाले अमीन सदाशिवराव भी बंदी बना लिये गये। अंग्रेजों ने उन्हें देशभक्ति का श्रेष्ठतम पुरस्कार देते हुए 7 जनवरी, 1858 को तोप के सामने खड़ाकर गोला दाग दिया। वीर अमीन सदाशिवराव की देह एवं रक्त का कण-कण उस पावन मातृभूमि पर छितरा गया, जिसकी पूजा करने का उन्होंने व्रत लिया था।

1857 की क्रांति और नीमच

मोहम्मद अली बेग के नेतृत्व में 3 जून, 1857 को क्रांतिकारियों ने अंग्रेजों को नीमच से मार भगाया। ये क्रांतिवीर नीमच से विजय पताका लेकर चित्तौड, बमंडा, नसीराबाद, देवली होते हुए आगरा पहुँचे जहाँ अंग्रेजों पर विजय प्राप्त की। नजफगढ़ दिल्ली में नीमच के क्रांतिकारियों ने अद्‌भुत शौर्य का प्रदर्शन करते हुए अपने रक्त की अंतिम बूँद तक संघर्ष किया।

• डॉ. सुरेन्द्र शक्तावत

आजादी के आंदोलन में 1857 की क्रांति का विशेष महत्व है। इस क्रांति को अंग्रेजों ने विद्रोह, बगावत, म्यूटिनी, गदर सिपाई वार आदि नामों की संज्ञा देकर इसके महत्व को गौण करने का षड्‌यंत्र किया वहीं साम्यवाद के जनक कार्ल माक्स ने लंदन के न्यूर्याक डेली ट्रिब्यून के 15 सितम्बर, 1857 के संपादकीय में इसे भारतीय जन आन्दोलन घोषित किया। इस क्रांति के 50 वर्ष बाद विनायक दामोदर सावरकर ने सप्रमाण अंग्रेज इतिहासकारों की षड़यंत्रकारी संकुचित शब्दों वाली परिभाषा उलटकर इसे भारत का प्रथम स्वतंत्रता संग्राम घोषित किया। इसे अंग्रेजी शासन में अखिल भारतीय स्वातंत्र्य समर मानना समुचित होगा। इस महान आन्दोलन में मध्य प्रदेश की पश्चिमी सीमा पर स्थित नीमच का अविस्मणीय योगदान है। यहाँ की गुलमोहर की तरह दहकती हुई लालमाटी को संपूर्ण मध्य प्रदेश की पहली गोली दागकर क्रांति का आगाज करने का गौरव प्राप्त है। मोहम्मद अली बेग के नेतृत्व में 3 जून, 1857 को क्रांतिकारियों ने अंग्रेजों को नीमच से मार भगाया। ये क्रांतिवीर नीमच से विजय पताका लेकर चित्तौड, बमंडा, नसीराबाद, देवली होते हुए आगरा पहुँचे जहाँ अंग्रेजों पर विजय प्राप्त की। नजफगढ़ दिल्ली में नीमच के क्रांतिकारियों ने अद्‌भुत शौर्य का प्रदर्शन करते हुए अपने रक्त की अंतिम बूँद तक संघर्ष किया।

मंदसौर के स्वयं घोषित सम्राट शहजादा फिरोज की सेनाओं ने 23 अक्तूबर, 1857 को जीरन में अंग्रेजी सेना को न केवल धुल चटाई बल्कि उनके सेनाध्यक्ष कैप्टन एकर व कैप्टन सेम्यूअल रीड के सिर काटकर मंदसौर ले गए। मल्हारगढ़ में महिदपुर के अंग्रेज अधिकारियों ब्रोडी व हंट को हीरासिंह जमादार के सैनिकों ने मार गिराया जिसका शिलालेख 7 जून, 1857 का अभी भी मल्हारगढ़ में मौजूद है। 8 नवंबर, 1857 का दिन नीमच के इतिहास का स्वर्णिम दिन है। इस दिन शहजादा फिरोज के सैनिकों ने नीमच पर आक्रमण कर दिया। नीमच छावनी के दक्षिण में मोहन की बेरी (एक कईया का नाम) नामक स्थान पर उनका मुकाबला अंग्रेजी सेना से हुआ। अंग्रेजी सेना का नेतृत्व सेनानायक लॉयड, कैप्टन शॉक्स, मेजर बेनिस्टन कर रहे थे। क्रांतिकारी हीरासिंह जमादार महिदपुर वाला, मोईनुद्दीन बस्सी, जोरावरसिंह खजुरी वाला, कासिम खाँ विलायती के नेतृत्व में लड़ रहे थे। नाले के उत्तर व दक्षिण किनारे पर खड़ी दोनों सेनाओं में गोलाबारी हुई। स्टेव्लेटन का घोड़ा मारा गया। अंग्रेज सेना भागकर किले में आ घुसी। 9 नवंबर को क्रांतिकारियों ने छावनी पर कब्जा कर लिया। क्रांतिकारियों ने अंग्रेजों के किले की घेराबंदी में थोड़ी चूक कर दी जिसका लाभ उठाकर अंग्रेज सेना मेवाड़ के वकील अर्जुनसिंह सहीवाला व बाबू खूबचंद की मदद से नीमच से भागकर दारू गाँव में चली गई। वहाँ से लुकते-छिपते कप्तान व साथी शॉपर्स केसुंदा पहुँचे।

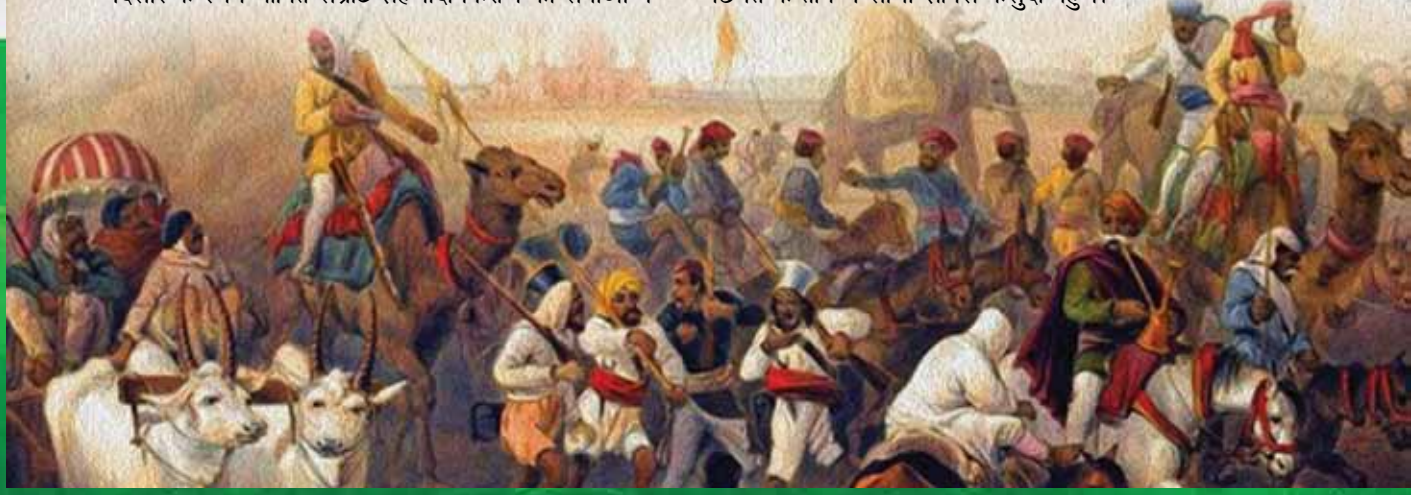

क्रांतिकारियों ने वहां से भी उन्हें खदेड़ा। 14 दिन तक क्रांतिकारियों ने नीमच पर कब्जा बनाए रखा। जावद, रतनगढ़, सिंगोली आदि स्थानों पर भी अंग्रेजों के खिलाफ विद्रोह हुआ। निम्बाहेडा के हाकिम बख्शी गुलाम मोईनुद्दीन ने 4 जून, 1857 को नीमच के क्रांतिकारियों को दिल्ली जाते समय पनाह दी थी। इस कारण शॉवर्स ने मेवाढ़ की फौज की मदद से निम्बाहेड़ा पर आक्रमण कर दिया। दिन भर लड़ाई चलती रही। रात में अवसर देखकर हाकिम बख्शी निम्बाहेड़ा से पलायन कर प्रतापगढ़ के जंगलों में होता हुआ मन्दसौर; शहजादा फिरोज की सेना में आ गया। अंग्रेजों ने इसकी खीज निम्बाहेड़ा के निर्दोष नागरिकों पर निकाली। पूरा शहर लूट कर वीरान बना दिया। महिलाओं पर अंग्रेज सैनिकों के पाशविक अत्याचार की दोहरी मार पड़ी। निम्बाहेड़ा के पटेल ताराचंद को शॉक्रस ने तोप के मुंह से बांध कर उड़ा दिया। मातृभूमि की रक्षा के लिए निर्दोष पटेल ताराचंद्र का बलिदान स्मरणीय है।

नीमच के किले को क्रांतिकारियों ने घेर रखा था। इसमें अंग्रेज अधिकारी कैद थे। उनको मुक्त कराने के लिए सेन्ट्रल इण्डिया एंजेसी के प्रमुख डयूरेण्ड ने सी.ए. स्टुअर्टस के नेतृत्व में भारी सेना धार से नीमच भेजी। साथ ही 11 नवंम्बर को कैप्टन कीटिंग को भेजा जो रतलाम, सैलाना और जावरा के देशी सैनिकों की सेना लेकर निकला। उसे निर्देश था कि वह देशी सैनिकों के साथ मुख्य अंग्रेज सेना मालवा- फील्ड फोर्स के 6 मील पीछे रहेगा और यदि कोई विद्रोही सिपाही भागे तो उनका पीछा करेगा। मालवा फील्ड फोर्स 21 नवंबर को मंदसौर पहुँच गई जहाँ क्रांतिकारी नेता फिरोजशाह व उसकी सेना; अंग्रेजों की प्रतीक्षा कर रही थी। मंदसौर के पास हिडमची गाँव में क्रांतिकारियों व अंग्रेजी सेना की जोरदार भिडंत हुई। क्रांतिकारियों का अंग्रेजी सेना के दाहिने भाग पर आक्रमण इतना प्रभावी था कि अंग्रेज सेना के पाँव उखड़ गए। 22 नवंबर को नीमच से शहजादा फिरोज की सेना भी आ गई। शिवना नदी पार करते बकरी धार पर अंग्रेजों पर हीरासिंह ने अपनी सेना के साथ आक्रमण किया। यहाँ प्रारंभ में तो क्रांतिकारी भारी पड़े पर अन्तोगत्वा उन्हें पीछे हटना पड़ा। वे भाग कर मंदसौर से 12 कि.मी. दूर गराडिया गाँव में चले गए। 23 नवंबर को अंग्रेज सेना नीमच की ओर बढ़ी। गुराडिया गाँव में नीमच के किले का घेरा उठाकर क्रांतिकारियों ने मोर्चा बना लिया। गुराडिया युद्व में अंग्रेज फंस गए। आगे से नीमच की क्रांतिकारी सेना व पीछे से मंदसौर के क्रांतिकारी थे। पूरा दिन गोलाबारी होती रही। इस युद्ध में अंग्रेज अधिकारी रेडमेन मारा गया।

14 नवंबर को अंग्रेजों ने क्रांतिकारियों पर तोपों से हमला किया। तोपों की संख्या व अंग्रेज सेना अधिक थी अतः अभी तक आक्रामक रहे क्रांतिकरी रक्षात्मक युद्ध करने लगे। क्रांतिकारियों का गोला बारूद भी समाप्त हो गया। उनके पास लड़ने के लिए तलवार, छुरियां तथा भाले ही बचे थे फिर भी उन्होंने परम्परागत हथियारों से मरते दम तक युद्ध किया। संध्या को 4 बजे तक क्रांतिकारी युद्ध करते रहे। अंग्रेजों ने सारे गाँव में आग लगा दी। गाँव के निर्दोष लोगों को गोलियों से भून दिया। जलती हुई आग में निर्दोष बच्चों, बूढ़ों, महिलाओं को पकड़कर जिंदा फेंक दिया गया। लोगों को जिंदा भून देने के कारण इसी दिन से इस गाँव का नाम भूनियाखेड़ी पड़ा जो इस घटना के 165 वर्षों बाद भी अंग्रेजों की क्रूरता की कहानी बयाँ कर रहा है। 24 नवंबर की पराजय के बाद शहजादा फिरोज अपने 2000 साथियों के साथ बुन्देलखण्ड की ओर प्रस्थान कर गया जहाँ लक्ष्मीबाई और तात्या टोपे स्वतंत्रता के लिए संघर्षरत थे। लक्ष्मीबाई की पराजय के बाद तात्या टोपे की आशा का केन्द्र राजस्थान ही बचा था। नीमच में स्वतंत्रता की भावना से परिपूरित क्रांति ज्वाला धधक रही थी अतः तात्या सिंगोली, रतनगढ़ होते हुए नीमच जाना चाहते थे। बिंजोलिया से 6 मील की दूरी पर मेबर टेलर ने उनका मार्ग रोक लिया। तात्या टोपे ने भी अपना मार्ग बदल लिया। भीलवाड़ा होते हुए उनका अंग्रेजों से युद्ध कोटेश्वरी नदी के पट पर हुआ। वहां से तात्या अंग्रेजों को छकाते हुए जावद स्ट्रेपी आ गए। वहां तात्या की अंग्रेजों से भिडंत हुई। तात्या अंग्रेजों को छकाते हुए चम्बल पार कर गए। कैप्टन शॉवर्स केवल हाथ मलता रह गया। नीमच का सौभाग्य है कि नीमच के आसपास के 50 कि.मी. के दायरे में तात्या टोपे ने संघर्ष कर इस क्षेत्र को पावन किया।

मेवाड़ की क्रांति के महानायक कुशल सिंह आउवा का आत्मसपर्मण भी नीमच की लाल माटी पर हुआ। इस क्रांति में अपने प्राणों की आहूति देकर मातृभूमि का मान बढ़ाने वाले महानायकों की संख्या हजारों में है। नीमच में ही अंग्रेज सेनापति कैप्टन शॉक्रस की पुस्तक एमिसिंग चेप्टर ऑफ इंडियन म्यूटिनी पृ. 89 के अनुसार क्रांतिकारियों की संख्या दो हजार थी। दिल्ली में नीमच की सेना की ओर से एक महिला क्रांतिकारी भी थी जो घुड़सवार दस्ते का नेतृत्व कर रही थी। उसने हरा साफा बांध रखा था। उसके शौर्य के प्रत्यक्ष साक्षी अंग्रेज सैन्य अधिकारी ग्रेट हेड ने उसे जॉन ऑफ आर्क की उपाधि दी। क्रांति की महा ज्वाला में भाग लेने वाले क्रांतिकारियों व उनके परिवार पर जो बर्बर आत्याचार अंग्रेजों ने किए उसके साक्षी नीमच के विशाल वट वृक्ष हैं जिनकी शाखाओं पर क्रांतिवीरों को फांसी दी गई। इस क्रांति ज्वाला में आहूत होने वाले क्रांतिपथ महावीरों के नाम हैं- मोहम्मद अली बेग, पठान सदीक खाँ (कानपुर), मोहम्मद खाँ- पठान हमीर खाँ (हैदराबाद), बामण सेवासिंह (रायबरेली), राजपूत गंगासिंह (बावल), बामण दुर्गासिंह (लखनऊ), पठान अली बगश खां (मीरपुर), राजपूत रूपसिंह (रामपुर), शेख खाँ (नीमच), वीरसिंह (नीमच), केसरी सिंह, प्यारे खाँ, पठान, रामरतन खत्री, कासिम खाँ, विलायती, गुरेसराभ, दोस्त मोहम्मद, डॉ. राहत अली, हाजी मोहम्मद खाँ, ताराचंद पटेल (निम्बाहेडा), काईमुद्दीन चूडीगर (जावद), अलियार खॉ (अठाना), डॉ. जोरावर सिंह (खजूरीवाला) आदि। आजादी के इस अमृत महोत्सव में राष्ट्रवेदी पर प्राण अर्पित करने वाले अनाम अज्ञात हुतात्माओं को नमन।

पश्चिमी निमाड़ का स्वतंत्रता समर

1857 के समर में तात्या टोपे को निमाड़ में भीमा, ख्वाजा और उनके साथियों ने सहयोग दिया और उनके साथ संघर्ष करने का संकल्प लिया। अंग्रेज भीमा और उसके साथियों को पकड़ने के लिए कुसुंबिया नामक स्थान पर भील पलटन का प्रशिक्षण केंद्र चला रहे थे जहां भील लोगों के विरुद्ध लड़ने के लिए भील तैयार किए जा रहे थे। नीमला नायक और उसके साथियों ने इस प्रशिक्षण केंद्र पर हमला कर अंग्रेजों की योजना पर पानी फेर दिया।

• डॉ. अनिल पाटीदार

जगत जननी भारत भूमि की पावन माटी में सनातन काल से ही महापुरुषों का अवतरण होते रहा है। इस पवित्र भूमि पर जब अत्याचारी अंग्रेजों ने बलात अधिकार किया तो उसे मुक्त कराने के लिए अनेकों जन योद्धा सहर्ष बलिदान हो गए। ऐसे ही निमाड़ की धरती पर भीमा नायक, टंट्या मामा, बिरजू नायक, ख्वाजा नायक, मोवासिया नायक, रघुनाथ सिंह, सीताराम कंवर, तुलसीराम, नीमला नायक, सूरत्या गिर, रंजूबा, आनंद सिंह और कालूराम जैसे वीर सपूत मातृभूमि की रक्षा के लिए प्राण-प्रण से लड़े। हर क्षेत्र से कोई न कोई योद्धा अंग्रेजों के विरुद्ध अपने धर्म-संस्कृति की रक्षा हेतु संघर्ष के लिए तत्पर था। माना जाता है कि भीमा नायक ने अपने साथियों के साथ अंजड़ के एक प्राचीन हनुमान मंदिर में अंग्रेजों के विरुद्ध संघर्ष करने का संकल्प लिया और कहा कि मैं इन विदेशियों को पवित्र भूमि से बाहर नहीं कर दूंगा तब तक चैन से नहीं बैठूंगा। इस प्रतिज्ञा के बाद भीमा नायक ने अपने साथियों के साथ अंग्रेजों से लड़ने के लिए हथियार और संसाधन जुटाने हेतु अंग्रेजों के खजाने को छीना। भीमा के साथियों का अंग्रेजों के साथ पंचसावल, ढाबाबावड़ी, अंबापानी, रामगढ़ जैसे स्थानों पर संघर्ष हुआ। आततायी अंग्रेज जब भीमा को पकड़ने में असमर्थ रहे तो उनकी मां सुरसी बाई को पकड़कर यातनाएं दीं लेकिन मां ने अपने पुत्र भीमा का पता अंग्रेजों को नहीं बताया। भीमा के महत्वपूर्ण सहयोगी ख्वाजा नायक को अंग्रेजों ने धोखे से मार दिया था। अपने साथी की मृत्यु के बाद भीमा अकेला रह गया। 1857 के समर में तात्या टोपे को निमाड़ में भीमा, ख्वाजा और उनके साथियों ने सहयोग दिया और उनके साथ संघर्ष करने का संकल्प लिया। अंग्रेज भीमा और उसके साथियों को पकड़ने के लिए कुसुंबिया नामक स्थान पर भील पलटन का प्रशिक्षण केंद्र चला रहे थे जहां भील लोगों के विरुद्ध लड़ने के लिए भील तैयार किए जा रहे थे। नीमला नायक और उसके साथियों ने इस प्रशिक्षण केंद्र पर हमला कर अंग्रेजों की योजना पर पानी फेर दिया। सीताराम कंवर, रघुनाथ सिंह मंडलोई निमाड क्षेत्र के महान क्रांतिकारी थे। इन्होंने अंग्रेजों के विरुद्ध संघर्ष किया। सीताराम कंवर का बंड नामक स्थान पर बलिदान हो गया। इनके पश्चात रघुनाथ मंडलोई ने क्रांतिकारियों को नेतृत्व प्रदान किया। निमाड़ की धरती पर ऐसे अनेकों-अनेक क्रांतिकारी हुए जिन्होंने न केवल समाज को संगठित किया अपितु विदेशी शक्ति आक्रांताओं के विरुद्ध मोर्चा भी लिया। निमाड़ क्षेत्र में टंट्या मामा ने गोरिल्ला पद्धति से अंग्रेजों के विरुद्ध संघर्ष किया। अंग्रेजों के शोषण तथा संस्कृति और मान्यताओं में हस्तक्षेप के विरुद्ध समाज को एकत्रित कर संघर्ष किया। संस्कृति व मातृभूमि की रक्षा के लिए संकल्प लिया। ऐसे ही रेंगा कोरकू हरसूद में जन्मे थे। टंट्या मामा के साथ इन्होंने भी अंग्रेजों के विरुद्ध संघर्ष किया। बड़वानी जिले के पलसूद के अंतर्गत सावरदा मटली क्षेत्र में जन्मे बिरजू नायक जिनकी कर्मभूमि सिंधुघाटी रही जिनका वर्तमान में समाधि स्थल उपला में है। इन्होंने भीमा नायक व तात्या टोपे का सहयोग दिया था। बांडी हवेली में इनका घर था। वहां से ये क्रांतिकारियों के लिए योजना बनाते थे और शोषणकारी अंग्रेजों के विरुद्ध लड़ने के लिए तैयार करते थे। अंग्रेजों ने इस महान नायक की षड्यंत्र से हत्या कर दी। निमाड़ के पूर्वी और पश्चिमी क्षेत्रों में इन क्रांतिकारियों ने अंग्रेजों से लोहा लिया और अपनी मातृभूमि पर आए इन विदेशियों को बाहर निकालने के लिए अपने प्राणों की आहुति दे दी। ऐसे महान नायकों का स्वाधीनता के 75 वर्ष के अवसर पर चल रहे अमृत महोत्सव के अंतर्गत स्मरण करना चाहिए।

निमाड़ के बलिदानी क्रांतिकारी वीर सीताराम कँवर

• गगन चौकसे

विडंबना है कि स्वतंत्रा संग्राम के वीरगति को प्राप्त होने वाले अनेक नाम गुमनाम हो गए या कहें कि गुमनाम कर दिए गए। स्वतंत्रता संग्राम की ग्राउंड ज़ीरो यानी जमीनी लड़ाई लड़ने वाले एक और सपूत भी इसी गुमनाम सूची का हिस्सा थे जो इतिहास के पन्नो में अमर रहेंगे। निमाड़ साक्षी है उस वीर पुरुष का जिसने अपने रक्त से इस संग्राम के पन्ने को लिखा। इनका नाम था कंवर सीता राम। जब अंग्रेज ये जान चुके थे कि 1857 की लड़ाई देश का कोना-कोना लड़ रहा है तब उनकी मुसीबत बनी हमारी गौरवशाली जनजाति जो वन में रहती थी। वीर सीताराम एक स्वालंबी सत्यनिष्ठ योद्धा थे और उनके संस्कार में अन्याय को सहना नहीं था। इतिहास के पन्नों में ये भी दर्ज है कि वो तात्या टोपे से प्रभावित थे। जिस युग में संवाद और संचार का कोई मार्ग और साधन नहीं था, उस युग में लड़ा गया ये महायुद्ध इस बात की गवाही देता है कि तमाम जनजाति, प्रजाति और देश मिलकर स्वतंत्रता का संघर्ष कर रही थी। अंग्रेज नाको चने चबा रहे थे और अभेद अजेय वनवासी अपना जोहर दिखा रहे थे। अंग्रेज अपना आत्मावलोकन कर रहे थे जिससे बचने हेतु अधिकाँश क्राँतिकारी वनों में चले गये थे। अंग्रेजी टुकड़ियां उनकी तलाश करने वनों में टूट पड़ीं। 1857 क्रांति की असफलता के बाद अंग्रेजों के दमन के कितने शिकार वनवासी अंचल ही हुये। इसमें मध्य प्रदेश का निमाड़ अंचल भी प्रमुख है।

निमाड़ के वीरों का संघर्ष

निमाड़ अंचल में 9 और 10 अक्टूबर, 1958 को अंग्रेजों ने अत्याचार और नरसंहार किया उसका विवरण रौंगटे खड़े कर देने वाला है। 9 अक्टूबर तिथि ऐसी है जब 78 क्राँतिकारी बलिदान हुये। उनके बाद अंग्रेजों ने डंग गाँव सहित आसपास के अनेक गांवों में तलाशी शुरू की। गांवों, खेतों और जंगल में आग लगा दी, जो जहाँ दिखा उसे वहीं मौत के घाट उतारा। अंग्रेजों ने इस क्षेत्र में सामूहिक अत्याचार कर गाँव के गाँव जला दिए। अंग्रेजों के अत्याचार का निशाना बना वह गांव जहां क्रांतिकारी सीताराम कंवर का जन्म इसी गाँव में हुआ था। उनके नेतृत्व में ही वनवासियों की टुकड़ी ने यहीं अंग्रेजी फौज से मुकाबला किया था। इस संघर्ष में 20 क्राँतिकारी मुकाबला करते हुये बलिदान हुये। वीर सीताराम कंवर ने अपनी टीम तैयार की, योजना बनाई, प्रशिक्षण दिया और लिया भी। उनकी वीरता के चलते अनेक गांवों तक अंग्रेज पहुँच भी न सके। अब निशाना सीताराम ही थे। अंग्रेज पूरी कपट नीति के साथ तैयार थे। अपने अटूट आत्मविश्वास के साथ सीताराम अपनी लघु सेना के साथ मुस्तैदी से लड़ रहे थे। अनेक अंग्रेज उनके खून के प्यासे थे मगर वो सभी को टक्कर दे रहे थे। आखिरकार अंग्रेजों ने घात लगाकर उनपर वार किया। इस बार तकदीर उनके साथ न थी। माँ भारती के सपूत ने अपने प्राणों का बलिदान दिया। अब अंग्रेज प्रबल हो उठे। बलिदान होते ही शेष क्राँतिकारी बंदी बना लिये गये। इन बंदियों की संख्या 58 थी जिन्हें कैंप में लाकर तोप से उड़ा दिया गया। इस तरह इस संघर्ष में कुल 78 बलिदान हुए और इतिहास का ये रक्तरंजित दिन गुमनामी में चला गया। मगर निमाड़ गौरान्वित हो उठा।

निर्मम थी वीर सीताराम की वीरगति

अंग्रेज सीताराम से इतने परेशान थे कि उनके बलिदान पर अंग्रेजों ने वीर सीताराम कंवर का शीश काटा और तलवार में

फंसाकर पूरे क्षेत्र में घुमाया। अंग्रेजों की मंशा दहशत पैदा करना थी। यह काम अगले दिन यानी दस अक्टूबर को हुआ। वीर सीताराम कंवर के बलिदान के समाचार से फैले आतंक से गाँव के गाँव खाली हो गये। अंग्रेजों ने गाँवों में मकानों को ध्वस्त किया। जो मिला उसका शीश काट दिया गया। इस अत्याचार में कुल कितने बलिदान हुये इसका विवरण नहीं मिलता। हाँ एक पत्र है जो मेजर कीटिंग ने अंग्रेज गवर्नर को लिखा था जिसमें उसने 78 का तो आंकड़ा दिया और लिखा कि 'गांवों में कांम्बिग आपरेशन कर लिया गया, अब कोई विद्रोही न बचा।' यह पत्र 16 अक्टूबर,1858 का है।

आज भले प्रशासनिक और राजनैतिक दृष्टि से छत्तीसगढ़ पृथक प्रांत हो लेकिन एक समय मालवा का निमाड़ क्षेत्र, महाकौशल और छत्तीसगढ़ एक ही साम्राज्य रहा करता था। इसे बोलचाल की भाषा में तो गोंडवाना कहते थे जबकि ऐतिहासिक दृष्टि से इसका नाम महाकौशल हुआ करता था। इस राज्य की राजकुमारी कौशल्या ही मर्यादा पुरुषोत्तम राम जी की माता रहीं हैं। उनकी जन्मस्थली अब छत्तीसगढ़ में है। इस पूरे अंचल में गौड़ वनवासी रहते हैंजिनका उपनाम 'कंवर' हुआ करता है। आज भी कंवर उपनाम के वनवासी जबलपुर, मंडला, छत्तीसगढ़ और निमाड़ क्षेत्र में मिलते हैं। इनका आंतरिक संगठन, ज्ञान और वीरता का भाव अद्भुत होता है। हर युग के विदेशी आक्रांता का मुकाबला इस समाज ने सदैव साहस और वीरता से किया है। इंदौर के होल्कर राज्य में भी अधिकांश मैदानी प्रधान के पद 'कंवर' वीरों के पास ही रहे हैं। क्राँतिकारी वीर सीताराम कंवर का जन्म स्थल निमाड़ क्षेत्र में खरगोन जिले का डंग गाँव था। वे गोंडवाना राज्य का केन्द्र रहे जबलपुर में नायक शंकर शाह के यहाँ गुप्तचर विभाग के प्रमुख रहे लेकिन सितम्बर 1958 में अंग्रेजों ने गौंडवाना का दमन कर दिया था। वीर शंकर शाह और उनके पुत्र रघुनाथ शाह को तोप के मुँह पर बाँध कर उड़ाया था। गौंडवाना राज्य के दमन के बाद वीर सीताराम कंवर अपनी टोली के साथ निमाड़ आ गये थे। यहां उन्होंने होल्कर राज्य में पदाधिकारी वनवासियों से संपर्क किया और 1857 की क्रांति के भूमिगत नायकों से संपर्क कर वनवासियों की टुकड़ी तैयार की। इसकी सूचना अंग्रेजों को लग गयी थी।

जाति और प्रजातियों के अनेक संघर्ष का एक बड़ा पन्ना निमाड़ से जुड़ा है और रहेगा। अंग्रेज क्रांतिकारी को मार सके थे किंतु उसकी आहुति से भड़की ज्वाला और अधिक प्रचंड होती गई। धन्य है ऐसे गुमनाम नाम जिन्होंने अपने वर्ग, परिवार या जाति के लिए नहीं बल्कि राष्ट्र के लिए संघर्ष किया, तन, मन, धन और प्राण तक दिये। इस आहुति की वीररस से संचित निमाड़ भूमि गर्वित है और राष्ट्र भी। नमन है वीर कंवर की रणनीति और रणभूमि को।

गीत

स्वराज अमृत महोत्सव

• कवि राकेश दांगी

युवाशक्ति जयघोष करें, राष्ट्र के उत्थान का,
विश्वमंगल कामना है, ध्येय हिंदुस्तान का।

खेलो में बढ़ते क़दमों ने,आत्मबल को बढ़ा दिया,
संजीवनी की दिव्य शक्ति ने,पुनःराष्ट्र को खड़ा किया,
विश्व मे डंका बज रहा है, भारत के सम्मान का।
युवाशक्ति जयघोष करे... 1)

खेतों व खलियानों में,अन्न उपज भंडार बढ़ा,
अर्थव्यवस्था चक्र हमारा,लेकर नव आकार खड़ा,
आगया है शौर्य समय,स्वराज कीर्तिमान का।
युवाशक्ति जयघोष करे... 2)

नवीन शिक्षा नीति है,राष्ट्र स्वर की साधना,
भारती की जय विजय,पहचान की आराधना,
दीप हमें जलाना होगा,आत्म स्वाभिमान का।
युवाशक्ति जयघोष करे... 3)

तूफान रोक न पाए कोई, युवाशक्ति इस देश को,
समय दान देना होगा,राष्ट्रभक्ति परिवेश को,
इतिहास फिर रच जाएगा,भारत देश महान का।
युवाशक्ति जयघोष करे... 4)

स्वाधीनता आंदोलन में धार जिले की जनजातियों की भूमिका

3 जून, 1857 में मंदसौर की नीमच छावनी में सिपाही मोहम्मद बेग ने पहले फायर के साथ ही प्रतिरोध एवं आंदोलन का बिगुल बजा दिया। फिर क्या था। 4 जून को मुरार छावनी ग्वालियर, 20 जून को शिवपुरी छावनी, 30 जून को महू छावनी, 1 जुलाई को इंदौर छावनी, 2-3 जुलाई को धार, अमझेरा, सरदारपुर एवं भोपावर छावनी में, 4 जुलाई को आगरा छावनी में, 8 नवंबर को महिदपुर सैनिक छावनी मे संग्राम की चिंगारियां फैलने लगी और संपूर्ण मालवा की प्रमुख छावनी में प्रतिरोध एवं प्रतिशोध का आंदोलन पनपने लगा।

• डॉ. चेतना ठाकूर
• डॉ.शिवप्रसाद बामने

स्वाधीनता आंदोलन का इतिहास राष्ट्रीय स्तर पर व्यापक पैमाने पर लिखा हुआ है। क्षेत्रीय स्तर पर इतिहास लेखन दुष्कर कार्य है परंतु वर्तमान समय में इसकी नितांत आवश्यकता भी है क्योंकि अधिकतर लेखन कार्य में घटनाओं का उल्लेख मात्र होता है। 19वीं सदी के पूर्वार्ध में मध्य प्रदेश के विभिन्न क्षेत्रों में अंग्रेजों द्वारा जनजातियों की गिरफ्तारियों एवं उन पर किए गए दमन से आंदोलन की लहर संपूर्ण भारतवर्ष के साथ मध्य प्रदेश के गांव-गांव में फैल गई। इस लहर ने समाज के हर छोटे-बड़े वर्ग को प्रभावित किया। मध्य प्रदेश के जनजातियों का इस लहर में अपना एक प्रथक ही महत्वपूर्ण योगदान रहा है। परंतु इन देशभक्तों के योगदान को भारतीय इतिहास में यथोचित स्थान नहीं दिया गया है। जबकि राष्ट्रीय स्तर के आंदोलनों के साथ-साथ मालवा के अलग-अलग जिलों में विभिन्न स्वरूपों में से प्रतिरोध समानांतर रूप से चलता रहा। यह आंदोलन उसी रूप में अपना विरोध दर्ज कराते रहे जैसे किसी रासायनिक प्रक्रिया में उत्प्रेरक की भूमिका होती है। मालवा के कृषक, मजदूर, सैनिक, सन्यासी एवं राजवाड़े तथा जनजातीय समाज एवं सामान्य जनता सभी इस यज्ञ आहुति में अपने-अपने अनुसार योगदान दे रहे थे। यदि वकील एवं अन्य पढ़ा-लिखा वर्ग गांधी जी के साथ असहयोग की नीति अपना रहा था तो वहीं सामान्य वर्ग और जनजातीय समुदाय भी यथा अनुसार अपने-अपने क्षेत्रों के राष्ट्र आंदोलन के समर में सहयोग कर रहे थे।

स्वाधीनता संग्राम का प्रारंभ 1857 के प्रथम स्वाधीनता समर के उद्घोष के साथ ही हो गया था। इसका प्रभाव मालवा के विभिन्न भागों में भी दिखाई देने लगा। पूर्व में कई इतिहासकारों ने यह भ्रम फैलाया था कि 1857 का प्रथम स्वाधीनता समर केवल उत्तरी एवं पूर्वी भारत तक ही सीमित रहा। मध्य एवं दक्षिण भारत इससे लगभग अछूते रहे। किंतु यह सत्य नहीं है। 10 मई, 1857 को जैसे ही मेरठ में आंदोलन प्रारंभ हुआ, कुछ ही समय में मालवा के विभिन्न क्षेत्रों में भी प्रतिरोध प्रारंभ हो गया।

3 जून, 1857 में मंदसौर की नीमच छावनी में सिपाही मोहम्मद बेग ने पहले फायर के साथ ही प्रतिरोध एवं आंदोलन का बिगुल बजा दिया। फिर क्या था। 4 जून को मुरार छावनी ग्वालियर, 20 जून को शिवपुरी छावनी, 30 जून को महू छावनी, 1 जुलाई को इंदौर छावनी, 2-3 जुलाई को धार, अमझेरा, सरदारपुर एवं भोपावर छावनी में, 4 जुलाई को आगरा छावनी में, 8 नवंबर को महिदपुर सैनिक छावनी मे संग्राम की चिंगारियां फैलने लगी और संपूर्ण मालवा की प्रमुख छावनी में प्रतिरोध एवं प्रतिशोध का आंदोलन पनपने लगा।

होलकर महाराजा तुकोजीराव होलकर ने भीलों के नेता जोजर नायक से एक समझौता करते हुए उसके 25 साथियों को नौकरी पर रख लिया किंतु जनकोजी की मृत्यु के पश्चात यह समझौता टूट गया। परिणामस्वरूप भीलों के सामने लूटमार के अलावा और कोई विकल्प नहीं बचा। धार जिले के कुछ भीलों ने गुजरी के डाक बंगले को जला दिया।

1. इस महान स्वातंत्र्य समर के यज्ञ में मध्य प्रदेश के धार जिले की जनजातियों के वीर सेनानियों ने भी अपने प्राणों की आहुति दी है। वनवासियों ने भी ब्रिटिश शासन के विरुद्ध कई लड़ाइयां लड़ी। उन्होंने जंगल में उपलब्ध संसाधनों के इस्तेमाल संबंधी अपने परंपरागत अधिकारों में कटौती करने तथा भारी कर लगाने के सरकारी प्रयासों का विरोध किया। आमतौर पर जनजाति बंधुओं ने उन सभी शक्तियों का प्रतिरोध किया जो उनकी सदियों पुरानी सापेक्ष स्वायत्तता को कम करना चाहती थी। मध्य प्रदेश के धार जिले के भील-भिलाला क्रांतिकारियों का आतंक ब्रिटिश शासन के खिलाफ इतना था जिनसे निपटने के लिए मालवा इन्फेंट्री के साथ ही गुजरात से नवी बंगाल इन्फेंट्री को बुलाना पड़ा था।

2. सन 1857 ईस्वी में शिवपुरी में तात्या टोपे, कानपुर में नाना साहेब, मालवा में अमझेरा जमींदार राजा बख्तावर सिंह, इंदौर में सआदत खान, मंदसौर में शहजादा फिरोजखान, भानपुरा के मर्दन सिंह आदि ने क्रांति का बिगुल बजाया था। इनके साथ कई जनजातीय क्रांतिकारियों ने बड़ी वीरता के साथ राणा बख्तावर सिंह का साथ दिया। क्रांतिकारियों ने पीपलखेड़ा व खरसान को लूटा था और तत्परतापूर्वक 500 क्रांतिकारियों का एक सशक्त दल भी इसमें एकत्रित हो गया।

3. जब उत्तर भारत या अन्य क्षेत्रों में अट्ठारह सौ सत्तावन ईसवी की क्रांति की आग बुझ चुकी थी। उस समय वर्तमान धार जिले के भील वनवासियों ने लगभग 4 साल तक अंग्रेजों से लोहा लिया। इसी प्रकार तांत्या भील को मालगुजार शिवा पटेल द्वारा 2 साल तक लगान नहीं देने के कारण तीन बार अंग्रेजी पुलिस से कठोर कारावास भी उसे कराया। तीसरी बार वह भाग निकला। भीमा नायक की तरह ही 820 ई. में शील दशरथ, 822 ईसवी में मशहूर नेता हिरिया, 1825 ईस्वी में करीब 800 भीलों ने हमला कर 1831 ईस्वी में धार राज्य के भीलों ने विद्रोह किया। इस विद्रोह का नेता उचेतसिंह था।

4. इनका विद्रोह जमीन छीनने व् मनमाने कर वसूली के विरुद्ध था। इसके पश्चात 1846 ईस्वी में मालवा के भीलों ने विद्रोह किया। क्रांतिकारी वनवासियों की संख्या असंख्य है। यह उल्लेखनीय तथ्य है कि आदिवासियों ने अपनी अस्मिता एवं स्वतंत्र अस्तित्व की रक्षा के साथ-साथ मानव जाति के लिए निस्वार्थ समर्पण भाव से सेवा कार्य किया। मध्य प्रदेश के धार जिले में भील एवं भिलाला जनजाति निवासरत है। 1818 ईसवी में अंग्रेजों के द्वारा होलकर और सिंधिया की पराजय के बाद यह भील इलाका अंग्रेजों के अधीन हो गया। शुरू में अंग्रेजों ने सैनिक कार्यवाही से इनसे निपटने का प्रयास किया जो विफल रहा। तदनंतर अंग्रेज अधिकारियों ने विभिन्न भील सरदारों को बुलाकर उनसे समझौता किया। उनकी मंशा भील नायकों को समझौते से बांधकर भीलों पर नियंत्रण पाना था। लेकिन वह नहीं समझ पाए कि भील समाज किसी राजा से बंधा सामंती समाज ना होकर स्वतंत्र प्रकृति प्रेमी कबीलाई समाज है। इसलिए उन्होंने दूसरे नायकों के नेतृत्व में संगठित होकर संघर्ष जारी रखा। इस प्रकार नायकों को सरकारी पद, चौकीदारी, वजीफा देने की यह नीति भी विफल रही।

5. 1824 तक आते-आते अंग्रेज शासन ने पाया कि भीलों के प्रति एक नई नीति अपनाने की जरूरत है। अब वे चाहते थे कि भीलों को ही भीलों से लड़वाया जाए। इस नीति के तहत ही खानदेश भील कोर का गठन किया गया जिसमें बड़ी संख्या में भीलों को दाखिला दिया गया।

इस कोर का मुख्य उद्देश्य अन्य भीलों से लड़कर उन्हें काबू में रखना था। कुछ समय के लिए यह नीति कामयाब रही और इस अनुभव से प्रेरणा लेकर ही मालवा और राजस्थान में भी कोर गठित किए गए। लेकिन यह शांति भी थोड़े दिनों के लिए ही थी। 1840 ईसवी में भील फिर से संघर्ष की राह पर उतरे और उनका यह विद्रोह 1857 तक आते-आते अपने चरम पर पहुंच गया।

6. स्वाधीनता आंदोलन में धार जिले के जनजातियों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। कई क्रांतिकारी हुए जिन्होंने अंग्रेजी हुकूमत के खिलाफ मोर्चा बनाकर अंग्रेजों के विरुद्ध निरंतर सशस्त्र आंदोलन जारी रखा। धार का अधिकांश भूभाग पर्वतीय है जो उस समय घने वनों से आच्छादित था। इन वनों में भील-भिलाला प्रमुख रूप से निवास करते थे। जैसा कि आज भी करते हैं। जंगल पर उनकी आजीविका निर्भर थी किंतु उस समय अंग्रेजों ने अनेक नियम बनाकर जंगलों पर आदिवासियों के अबाध अधिकारों पर अंकुश लगाया जिससे उनके सामने आजीविका का संकट उत्पन्न हुआ। वस्तुतः यहीं से जनजाति अंग्रेजों के खिलाफ हो गए और अंग्रेजों के अत्याचारों के कारनामों को यह भली-भांति समझने लगे। इसलिए इस क्षेत्र के आदिवासियों ने धार की इस भूमि से अंग्रेजों के प्रभाव को समाप्त करने का प्रयत्न किया। होलकरों की लड़ाईयों एवं दुर्भिक्ष के कारण यहां की स्थिति अत्यंत दयनीय हो गई। अनेक समृद्ध लोग एवं व्यापारी वर्ग अपना कारोबार समेट कर गुजरात चले गए किंतु साधन विहीन अभावग्रस्त जिलों को जंगल में शरण लेने के अलावा और कोई विकल्प नहीं था क्योंकि अंग्रेजों ने उन्हें उनके अनेक आजीविका के पारंपरिक साधनों से वंचित कर दिया था। फलतः वह जीविकोपार्जन के लिए आसपास के क्षेत्र में लूटपाट करने लगे।

सतपुड़ा पर्वत श्रेणी में भीलों के बढ़ते हुए प्रभाव के कारण अंग्रेज सरकार काफी परेशान थी। कैप्टन ब्रिग्स मध्य भारत के भीलों के उपद्रव को समाप्त करने में असफल रहा। अंग्रेज सरकार ने 1818 से 1824 तक भीलों के विरुद्ध सैनिक अभियान भी चलाया किंतु इसमें भी सरकार को कोई खास सफलता नहीं मिली। इसलिए अंग्रेजों ने भीलों का दमन करने के लिए भील कोर की स्थापना सन् 1925 ईस्वी में की तथा इस क्षेत्र पर नियंत्रण हेतु विभिन्न एजेंसियों को कायम किया। जनजाति भील जो लूट मार कर उपद्रव मचा रहे थे उनको संतुष्ट करने के लिए होलकर राजाओं ने उन्हें अपने यहां नौकरी पर रखने का प्रावधान किया। होलकर महाराजा तुकोजीराव होलकर ने भीलों के नेता जोजर नायक से एक समझौता करते हुए उसके 25 साथियों को नौकरी पर रख लिया किंतु जनकोजी की मृत्यु के पश्चात यह समझौता टूट गया। परिणामस्वरूप भीलों के सामने लूटमार के अलावा और कोई विकल्प नहीं बचा। धार जिले के कुछ भीलों ने गुजरी के डाक बंगले को जला दिया।

यशवंतराव होलकर ने इस स्थिति को भली-भांति समझा और 1200 भीलों को नौकरी पर रख लिया। जोजर नायक को चिकली की जागीर दी किंतु बाद में एक मकरानी ने जोजर नायक की हत्या कर दी। जोजर नायक का पुत्र दौलत नायक भी इस कारण तत्कालीन शासन से असंतुष्ट हो गया और वहां निमाड़ क्षेत्र में अपनी अस्मिता की लड़ाई लड़ने के लिए ब्रिटिश शासन के विरुद्ध हो गया। इसी काल में सतपुड़ा पर्वत श्रेणी में रामजी नायक नाम का एक अन्य भील नायक भी विदेशों के खिलाफ हो गया जिसका क्षेत्र सुल्तानपुर परगना के पूर्व में तथा बड़वानी घाट पर केंद्रित था। इसी काल में उत्तर भारत में सशस्त्र आंदोलन के समाचारों ने इस क्षेत्र के भीलों को भी अंग्रेज के विरुद्ध आंदोलन के लिए प्रेरित किया।

1 जुलाई, अट्ठारह सौ सत्तावन ईसवी से इंदौर के आंदोलनकारियों की तोपों ने इंदौर रेजिडेंसी पर आग उगलना प्रारंभ किया। तत्कालीन होलकर शासन के सैनिक भी इन आंदोलनकारियों के साथ मिल गए और इस प्रकार उन्होंने स्वाधीनता का शंखनाद किया। इंदौर के इस आंदोलन की चिंगारी ने शीघ्र ही मालवा के दक्षिण में फैलना प्रारंभ कर दिया। 2 जुलाई, 1857 को महू के सैनिकों ने भी स्वतंत्रता आंदोलन का झंडा फहराया। अंग्रेजों ने दमनकारी नीति के सहारे अनेक आंदोलनकारियों को मौत के घाट उतार दिया। अंग्रेजों का भीलों से विश्वास उठ गया अतः तत्काल भीलों को सुरक्षा चौकियों से हटा दिया गया। मंडलेश्वर की गड़बड़ी का समाचार संपूर्ण धार में विद्युत प्रभाव की तरह फैल गया। आदिम, निरीह और पिछड़े कहे जाने वाले भीलों में राष्ट्रीय चेतना का अभूतपूर्व संचार हुआ जिसका उदाहरण इतिहास में अन्यत्र नहीं मिलता। भीलों ने अब गोरी हुकूमत के खिलाफ तीर-कमान और फालिए उठा लिए थे। इस प्रकार धार रियासत में चारों और स्वातंत्र्य समर के स्वर गूंज रहे थे। सन 1857 की महान क्रांति ने धार में एक महत्वपूर्ण भुमिका निभाई। उस समय धार रियासत की सेना मे 1037 सैनिक थे।

निष्कर्षः- सन अट्ठारह सौ सत्तावन ईसवी के बाद में ब्रिटिश भारतीय और यहां तक कि विदेशी इतिहासकारों द्वारा इतना अधिक लिखे जाने तथा सामग्री की प्रचुरता के बावजूद किसानों, पिछड़ों और जनजातियों तथा दलितों की भूमिका को लेकर इतिहासकारों ने ऐसे ही भ्रामक अभिवृत्ति को सत्य मानकर अपने निष्कर्ष प्रस्तुत किए हैं। 1857 के संग्राम में राजनीतिक, आर्थिक और धार्मिक कारणों के चलते सवर्ण और मुसलमान ही अंग्रेजों के विरुद्ध लड़े थे, जिसमें तथाकथित समस्त जातियों की सहभागिता नहीं थी और ना तो वे इस योग्य थे और ना उनमें इतनी सोच थी कि सत्ता के विरुद्ध आंदोलन कर सकें या उसमें भाग ले सकें। यदि किसी भी जाति के व्यक्ति ने आंदोलन में भाग लिया तो अपने स्वामी का हुक्म मानने में या लूटमार करने, इतिहास प्रदत परस्पर अंतर्विरोध पर गौर नहीं किया। 1857 के स्वाधीनता संग्राम को मात्र सैनिकों, सामंतों, राजाओं और ब्राह्मणों का विद्रोह नहीं माना जा सकता। साधारण देहाती और मजदूर किसानों ने जिनके बीच से वीर सैनिक इस यज्ञ में अपनी आहुति देने आए थे, उन्होंने बढ़-चढ़कर इस स्वाधीनता संग्राम में भाग लिया था। वास्तव में 1857 के संग्राम का नायक एक साधारण सैनिक, एक आम किसान और एक मजदूर कारीगर जिसने अपने खून से हमारे इतिहास का सबसे शानदार अध्याय लिखा है, उन सभी का स्वाधीनता के इस महायज्ञ में बराबर योगदान रहा है इसको भुलाया नहीं जा सकता।

वास्तव में जब स्वाधीनता के दीवानों ने मातृभूमि के लिए अपना सर्वस्व न्योछावर किया तो उन्होंने केवल एक ही स्वप्न देखा- 'स्व' के पुनरुत्थान का। 'स्व' अर्थात सर्वोदय, स्वराज व स्वदेशी। ब्रिटिश दमन यातना और शोषण, चाहे वह राजनीतिक स्तर पर हो, आर्थिक स्तर पर हो या सांस्कृतिक स्तर पर उनका एक ही लक्ष्य था भारतीयों में स्व के प्रति आग्रह की समाप्ति। इसके विपरीत भारतीय स्वाधीनता संघर्ष केवल इस 'स्व' की पुनर्स्थापना के लिए किया जाने वाला चरम प्रयास था। उन क्रांतिकारी वीर सेनानियों ने आत्माहुति करते हुए जिस भारत की संकल्पना की उसमें 'स्व' संस्कृति का पुनरुत्थान, स्व भाषा, स्व शिक्षा प्रणाली, स्व राजनीतिक व्यवस्था और स्व समाज व्यवस्था आदि का ही स्थान था। इस पूरी संकल्पना में यूरोपीय चश्मे की न कोई आवश्यकता थी न जगह। किंतु दुर्भाग्य से स्वाधीनता के बाद से इस तथ्य को लेकर हम भटकाव की ओर चले गए। एक तरफ तो हमने विभाजन की त्रासदी झेली। कृत्रिम रूप से हमारी मातृभूमि को काटकर इसके टुकड़े कर दिए गए। इसके समानांतर जो लोग उस समय सत्तासीन हुए शायद उनमें उस राष्ट्र भाव का आभाव था जिससे कोई भी राष्ट्रीय समाज रख पाता है, स्वयं पर गर्व करता है। आज आवश्यकता है औपनिवेशिक सत्ता की पूरी प्रक्रिया के सम्यक विश्लेषण की जिससे ब्रिटिश आतताई, दमनकारी और शोषणकारी चरित्र को ठीक से समझा जा सके। साथ ही प्रतिरोध की सभी धाराओं पर संतुलित विमर्श खड़ा किया जा सके।

संदर्भ ग्रंथ सूचि

1. सहगल पूरन, मालवा के दशपुर अंचल में स्वतंत्रता के महासंग्राम (1857-1947)।
2. मध्यभारत, जनपदीय अभिनंदन ग्रंथ, पृ. 485-86।
3. के.एल. श्रीवास्तव दि रिवाल्ट ऑफ 1857 इन सेंट्रल इण्डिया मालवा, पृ. 90.।
4. वही पृ.170।
5. मैलकॉम, मेमॉयर ऑफ सेन्ट्रल इण्डिया वाल्यूम द्वितीय, पृ.सं. 380।
6. लुनिया, प्रो. बी.एल 'फेजेज आफ फ्रीडम स्ट्रगल इन मध्य भारत 1857' पृ. 2-5।
7. संदला, ठा. रघुनाथ सिंह, अमझेरा राज्य का वृहत् इतिहास, पृ. 146-147।
8. भोपावर एजेंसी फाइल कृ. 728 299, सामान्य क्र. 1155 दि.25 दिस.1857, मध्यभारत के एजी.जी.सर हेमिल्टन द्वारा सचिव भारत सरकार को लिखा गया पत्र।
9. वर्मा, डॉ. राजेन्द्र, म.प्र. जिला गजेटियर, धार, गजेटियर संचालनालय,संस्कृति, विभाग, म.प्र. भोपाल पृ.सं. 52
10. वही पृ. सं. 53

तराना तहसील उज्जैन में
राष्ट्रीय जनजागरण

उज्जैन में राष्ट्रीय चेतना को जागरित करने में टी.डी. पुस्तक ने अहम् भूमिका निभाई। उन्होंने 1912 ई. में बार एसोसिएशन, 1913 ई. में सार्वजनिक व्याख्यानशाला सेवा समिति तथा 1915-1917 ई. के मध्य युवराज व्याख्यानशाला की स्थापना की क्योंकि इस समय राजनीतिक दलों पर प्रतिबंध लग रहे थे। अतः राजनीतिक मंत्रणा हेतु ऐसी संस्थाओं की स्थापना की।

• डॉ. प्रीति पाण्डे

राष्ट्रीय आन्दोलन उज्जैन जिले की सभी तहसीलों एवं ग्राम क्षेत्रों में फैलने लगा। तराना तहसील यद्यपि होल्कर राज्य में थी तथापि इसका जिला उज्जैन था किंतु यहाँ विद्रोह की गतिविधियाँ समान थीं। सिंधिया अंग्रेजों की ओर होकर मौन थे। फलस्वरूप आक्रोश इनके तथा अंग्रेजों दोनों के विरुद्ध समान रूप से था। उज्जैन, कायथा तथा तराना में स्वतंत्रता की लहर फैलती जा रही थी क्योंकि कायथा आदि क्षेत्रों में लोग जागीरदारों की दमनात्मक नीति से मुक्त होना चाहते थे।

इधर, उज्जैन में राष्ट्रीय चेतना को जाग्रित करने में टी.डी. पुस्तक ने अहम् भूमिका निभाई। उन्होंने 1912 ई. में बार एसोसिएशन, 1913 ई. में सार्वजनिक व्याख्यानशाला सेवा समिति तथा 1915-1917 ई. के मध्य युवराज व्याख्यानशाला की स्थापना की क्योंकि इस समय राजनीतिक दलों पर प्रतिबंध लग रहे थे। अतः राजनीतिक मंत्रणा हेतु ऐसी संस्थाओं की स्थापना की। उज्जैन में राजनीतिक गतिविधियों पर केन्द्रित संस्था सार्वजनिक सभा सन् 1917 में अस्तित्व में आयी और तभी से यहाँ गणेशोत्सव का आयोजन होने लगा।

जनजागरण के कारण तराना तहसील उज्जैन के प्रमुख राष्ट्रवादी केन्द्रों में गिनी जाने लगी थी। सन् 1930 में यहाँ एक क्लब की भी स्थापना हुई जिसका उद्देश्य राष्ट्रीय विचारों के आदान-प्रदान को एक मंच देना था। इसके सदस्यों की वेशभूषा में सफेद टोपी धारण करना अनिवार्य था।

इसका कार्यालय नगर के महद सरदार फणसे के मकान में एक कमरे के भीतर प्रारंभ किया गया था। प्रारंभिक सदस्यों में मुले मास्टर, केशव भैया जोशी, माधवराव लोणकर, गोपालराव, गणपतलाल उपाध्याय, शंकर भैया आदि थे।

जब सन् 1939 में इंदौर में राज्य प्रजामण्डल की स्थापना हुई, तब उसकी एक शाखा गोवर्धनलाल वैद्य के द्वारा तराना में स्थापित की गई। गोवर्धनलाल वैद्य ने ही तराना में कांग्रेस की भी स्थापना की और दोनों संस्थाओं ने मिलकर राष्ट्रीय आन्दोलन को आगे बढ़ाया। इन संस्थाओं ने अपनी शाखाओं का विस्तार तहसील के प्रमुख ग्रामों तक भी किया। जिनमें माकड़ोन, ढाबला खुर्द, कचनारिया तथा कनासिया के साथ-साथ ग्राम कायथा भी सम्मिलित था। इन ग्रामों ने अपना सक्रिय समर्थन गोवर्धनलाल वैद्य को दिया। उदारदायी शासन स्थापित करने की मुहिम में हस्ताक्षर आंदोलन भी चलाया गया जिसमें कायथा सहित लगभग 80 ग्रामों ने हस्ताक्षर के द्वारा अपना समर्थन प्रस्तुत किया। जन आन्दोलन को संचार माध्यमों से जोड़ने का काम तराना के रामविलास ठाकुर एवं उनके पुत्र नारायण ठाकुर ने किया। पहला रेडियो भी उन्होंने मंगवाकर उसके सार्वजनिक समाचार ग्रामवासियों को सुनवाये। पूरा अंचल राष्ट्रीय जागरण से आंदोलित हो रहा था। तराना की आन्दोलन सम्बन्धी सूचनाऐं भी वे ही इन्दौर आदि के समाचार पत्रों में भेजते थे।

15 अगस्त, 1947 में जब देश स्वतंत्र हुआ तब तराना तहसील में सभी ग्रामवासियों की ओर से जवाहर चौक में झण्डारोहण किया गया तथा शासकीय तौर पर पुलिस ने तिरंगे झंडे को सलामी दी। कायथा ग्राम में भी स्वतंत्र होने का अवसर उत्सव के रूप में मनाया गया।

तराना में राष्ट्रीय भावना को लेकर प्रभात फेरी निकलती थी। राष्ट्रगीत को गाते हुए मूलचन्द जोशी तराना में फेरी निकालते थे। इसी प्रकार दलितोद्धारक कार्यों में नारायण तिवारी ने तराना के झण्डा चौक में हरिजनों के साथ बैठकर अपनी हजामत बनवायी।

सन् 1942 में जब पूरा देश भारत छोड़ो आन्दोलन के आवेग में उद्वेलित था उस समय भारतीयों को यह अनुभव हो चुका था कि किसी भी मूल्य पर अंग्रेजों को भारत छोड़ने पर विवश किया जाना चाहिए। इस आन्दोलन के समर्थन में तराना तहसील मुख्यालय और उसके ग्रामों में भी एक आन्दोलन ने तीव्र गति पकड़ ली। गोवर्धनलाल वैद्य के नेतृत्व में सत्याग्रह प्रारंभ हुआ और अंग्रेजों के बहिष्कार के लिये डाक विभाग के अधिग्रहण का ध्येय बनाया गया। पुलिस ने रामचन्द्र व्यास, मोतीलाल कानड़ी तथा गोवर्धनलाल वैद्य को बन्दी बनाकर महिदपुर जेल भी भेज दिया। तराना तहसील के माकड़ोन ग्राम से मदनलाल नागर ने

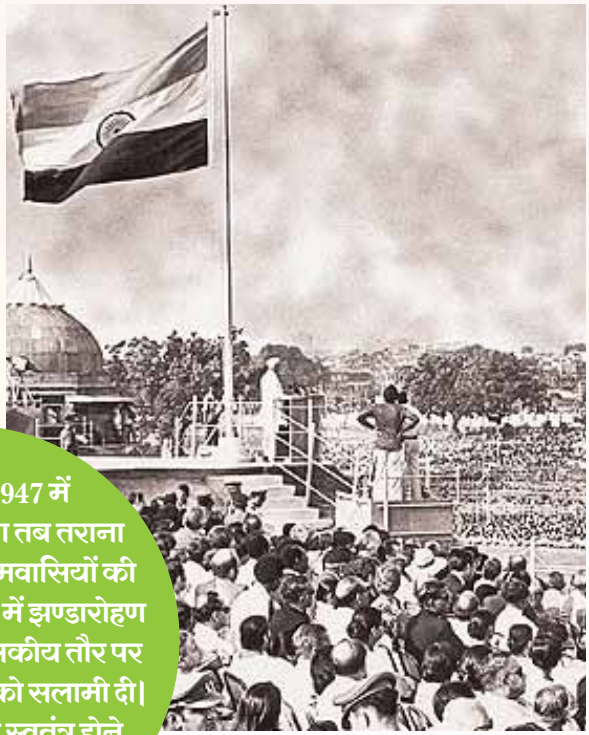

राष्ट्रीय आंदोलन की चिंगारी प्रज्वलित की।

कायथा भी इस स्वतंत्रता आंदोलन से अछूता न रहा और शीघ्र ही यहाँ पर चौथमल भण्डारी के नेतृत्व में राष्ट्रीय आन्दोलन प्रारंभ हो गया। महिदपुर उस समय क्रांतिकारियों का गढ़ बन गया था। भण्डारी ने उनके साथ मिलकर कायथा को भी केन्द्र बना दिया। फिर वे इन्दौर गये और वहाँ क्रांतिकारियों के साथ रैली में भाग लिया। इस प्रकार कायथा का नाम क्रांति के शीर्षस्थ केन्द्रों में अंकित हो गया। भण्डारी महोदय की सक्रियता के कारण पुलिस ने उन्हें गिरफ्तार कर केन्द्रीय जेल इन्दौर भेज दिया। जेल में ही 27 जुलाई, 1942 को उनकी मृत्यु हो गई। शहीद चौथमल भण्डारी की स्मृति में कायथा में एक उद्यान भी निर्मित किया गया। कायथा में आपके नाम से एक औषधालय भी खोला गया। निश्चित रूप से चौथमल भण्डारी ने कायथा को राष्ट्रीय आन्दोलन का एक महवपूर्ण केन्द्र बना दिया।

कायथा के ही खादीधारी शांतिलाल जैन ने सन् 1942 के आन्दोलन की लहर में खुलकर भाग लिया एवं चन्द्रमा को साक्षी मानकर देशभक्ति की प्रतिज्ञा ली। वे कायथा से इन्दौर जाकर रहने लगे और क्रांतिकारियों के साथ कन्धे से कन्धा मिलाकर काम करने लगे। कायथा के ही रामवृक्ष आर्य ने राष्ट्रीय कार्यों में पूर्ण रूचि से काम किया।

कायथा ने राष्ट्रीय आन्दोलन में अपना सक्रिय सहयोग प्रदान किया। 28-29 जून, 1942 को खेमराज जोशी ने तराना में राष्ट्रीय कवियों का एक सम्मेलन आयोजित किया था जिससे वहाँ का जनमानस देशभक्ति से ओतप्रोत हो गया। 15 अगस्त, 1947 में जब देश स्वतंत्र हुआ तब तराना तहसील में सभी ग्रामवासियों की ओर से जवाहर चौक में झण्डारोहण किया गया तथा शासकीय तौर पर पुलिस ने तिरंगे झंडे को सलामी दी। कायथा ग्राम में भी स्वतंत्र होने का अवसर उत्सव के रूप में मनाया गया।

ब्रिटिश काल में कायथा परिक्षेत्र का कृषक आन्दोलन

जागीरदारी प्रथा अन्याय की द्योतक थी और चूँकि जागीरदार अंग्रेजों के प्रति स्वामिभक्त थे और कृषकों का शोषण कर रहे थे अतः राष्ट्रीय आन्दोलन की नई समानान्तर धाराओं मे से एक कृषक विद्रोह भी जगह-जगह मुखरित हुआ। मालवांचल में उज्जैन एवं तराना तहसील सभी इससे प्रभावित हुए। कृषि से सम्बन्धित इस तहसील के लगभग सभी गांवो में विरोध के स्तर खड़े होने लगे। चूँकि कायथा तराना का सर्वप्रमुख उत्पादक ग्राम था अतः यहाँ भी विरोध प्रारंभ हुआ जिसने धीरे-धीरे राष्ट्रीय आन्दोलन का स्वरूप ले लिया।

कृषकों से भारी लगान एवं अनेक कर लगाकर सरकारी खजाना भरा जा रहा था। जिले भर में हाथ कताई, ग्रामीण उद्योग धंधे एवं कुटीर उद्योग नष्ट कर दिये थे। इन सभी कारणों से जहाँ आर्थिक संकट कृषकों पर गहराया, वहीं ग्रामीण कृषक साल में चार माह बेरोजगार रहने लगे। देशव्यापी नवचेतना को कृषकों ने भी स्वीकार कर लिया एवं देश के अन्य भागों की ही तरह मालवांचल भी कृषक विद्रोहों से अछूता न रहा।

उस समय कायथा होल्कर राज्य में तराना तहसील में आता था जिसमें महिदपुर भी सम्मिलित था जबकि उज्जैन, खाचरौद और बड़नगर तहसील ग्वालियर राज्य में सिंधिया के पास था। तराना में राष्ट्रवादी घटनाओं को संगठित रूप में कृषक आन्दोलन से जोड़ने हेतु प्रजामंडल का गठन किया गया। चालीस के दशक में सिंधिया एवं होल्कर राज्य में राज्य का प्रतिनिधि होकर टैक्स वसूलता एवं प्रशासन संभालता था। ये जागीरदार अंग्रेजों का कर उगाहने की आड़ में व्यक्तिगत लाभ भी कृषक से वसूल लेते थे। फलतः कृषकों की हालत बद से बदतर होती गई। जागीरदार कर न देने वाले कृषक को भूमि से बेदखल करके पट्टा दूसरे को दे देते थे। इस प्रकार कृषक दोहरे अत्याचार को झेल रहे थे।

मालवा में मंदसौर का स्वतंत्रता संग्राम

रीवा, ओरछा एवं भोपाल जैसे बडे.राज्य भी 'सेन्ट्रल इंडिया एजेंसी' के अन्तर्गत आते थे। इन्दौर इसका मुख्यालय था। इतने बड़े भू-भाग पर नियंत्रण रखने के लिए मुरार, शिवपुरी, गुना, नवगॉव, सागर, सीहोर, महू, मंडलेश्वर, सरदारपुर, भोपावर, आगर, महिदपुर एवं नीमच में सैनिक छावनी बनायी गयी। 'सेन्ट्रल इंडिया एजेंसी' की अधिकतर छावनियॉं एवं इसका मुख्यालय इन्दौर मालवा में पड़ता था और 1857 में इन्हीं छावनियों में सैनिक विद्रोह की लपटें दिखाई पड़ी।

• मायापति मिश्र

भारतीय पद्धति में कोई भी महान गाथा लिखने या गाने से पूर्व प्रारम्भ मंगलाचरण से किया जाता है। मंगल पाण्डेय एवं उनके साथियों का विद्रोह अंग्रेजों के प्रति सैनिक विद्रोह का मंगलाचरण था। 10 मई, 1857 के मेरठ विद्रोह ने राष्ट्रभक्त भारतीय सैनिकों के दिल में स्वतंत्रता की ज्वाला को धधका दिया था। 03 जून, 1857 को मालवा में मंदसौर जिले की नीमच सैनिक छावनी के वीर सैनिक मंगल पाण्डेय के कदमों पर चल पड़े। नीमच छावनी में सिपाही मोहम्मद बेग ने अपनी बन्दूक से फायर करके विद्रोह की पहली गोली दाग दी। इस धमाके की गूंज में पूरा मालवा चीख पड़ा-

चेत किरंगी चेत जा, चेत गयो है देस।
भाग समन्दर पार विदेशी, नीतर पकड़ां केस।।

फिर क्या था? भारत माँ के सपूतों ने मालवा की सैनिक छावनियों में विद्रोह की झड़ी लगा दी। 04 जून, 1857 को मुरार सैनिक छावनी में, 20 जून को शिवपुरी, 30 जून को महू, 1 जुलाई को इन्दौर, 2-3 जुलाई को एक साथ धार, अमझेरा, सरदारपुर एवं भोपावर में, 4 जुलाई को आगर फिर 8 नवम्बर को महिदपुर सैनिक छावनी में विद्रोह हो गया। विद्रोह की इस ज्वाला में मालवा में अंग्रेजों की सत्ता झुलस गयी। 19वीं शताब्दी के प्रारंभ में मालवा पर नियंत्रण रखने के लिए अंग्रेजों ने होल्कर एवं सिंधिया राज्यों को अपने अधीन कर अन्य छोटे राज्यों, स्थानीय मराठों, राजपूतों एवं मुस्लिमों से संधि करके 'सेन्ट्रल इंडिया एजेंसी' का गठन किया था। इसका क्षेत्रफल इक्यासी हजार (81,000) वर्गमील एवं जनसंख्या (8,00,000) अस्सी लाख थी। रीवा, ओरछा एवं भोपाल जैसे बड़े राज्य भी 'सेन्ट्रल इंडिया एजेंसी' के अन्तर्गत आते थे। इन्दौर इसका मुख्यालय था। इतने बड़े भू-भाग पर नियंत्रण रखने के लिए मुरार, शिवपुरी, गुना, नवगॉव, सागर, सीहोर, महू, मंडलेश्वर, सरदारपुर, भोपावर, आगर, महिदपुर एवं नीमच में सैनिक छावनी बनायी गयी। 'सेन्ट्रल इंडिया एजेंसी' की अधिकतर छावनियॉं एवं इसका मुख्यालय इन्दौर मालवा में पड़ता था और 1857 में इन्हीं छावनियों में सैनिक विद्रोह की लपटें दिखाई पड़ी।

03 जून, 1857 को नीमच के विद्रोहियों ने अंग्रेजों की छावनी में आग लगा दी और छावनी पर अपना कब्जा कर लिया। इन विद्रोहियों की सहायता के लिए मंदसौर और महिदपुर से कुछ विद्रोही नीमच पहुँच गये और फिर सबने मिलकर 05 जून को निम्बाहेड़ा की छावनी में रह रहे अंग्रेज परिवारों को लूट लिया। इन विद्रोहियों की मंशा आगरा के रास्ते दिल्ली पहुँच कर मुगल शाह से मिलकर एक सैन्य संगठन खड़ा करने की थी। नीमच विद्रोहियों की योजना सुनियोजित नहीं थी, न ही कोई नेतृत्व करने वाला था अतः अंग्रेज परिवार और लूटमार इनके निशाने पर आ गये। डॉ. मेरे और डॉ. गैन जैसे अंग्रेज अधिकारी विद्रोहियों के डर से नीमच किले से निकल भागे और नीमच से 5 कि.मी. दूर केसुन्दा गाँव के मुखिया रामसिंह पटेल के घर शरण ली। कर्नल शार्क्स नीमच से भाग कर उदयपुर चला गया और महाराणा उदयपुर की सहायता से मेवाड़ी सेना के साथ मिलकर 06 जून, 1857 को नीमच छावनी पर पुनः अधिकार कर लिया। इसी दिन नीमच छावनी के सैनिक विद्रोह की सूचना महिदपुर छावनी में पहुँची तो महिदपुर की संयुक्त मालवा सेना ने नीमच का विद्रोह दबाने के लिए कूच किया। 07 जून को नीमच से 25 कि.मी. दूर मल्हारगढ़ में सतीजी के बाग नामक स्थान पर सेना ने अपना पड़ाव डाला। नीमच के विद्रोहियों पर कार्यवाही रोकने के उद्देश्य से पड़ाव कैम्प में ही भारतीय सैनिकों ने विद्रोह कर दिया।

जिसके फलस्वरूप लेफ्टिनेंट बोर्डिंग एवं हण्ड नामक दो अंग्रेज अधिकारियों को मारकर भारतीय सैनिकों ने वहीं दफन कर दिया। नाहरगढ़ में भी एक अंग्रेज अधिकारी की हत्या कर दी गयी। इस प्रकार मालवा में अंग्रेजों के प्रति उपजी नफरत उनकी बलि लेने लगी। 03 जून से मंदसौर जिले में भड़की विद्रोह की ज्वाला के पीछे एक युवा फकीर का हाथ होना बताया जाता है जो मंदसौर से 23 कि.मी. दूर एक गाँव अफजलपुर में मीरादातार की दरगाह पर 03 जून को ही आया था। 03 जून को फकीर का मंदसौर आना महज एक संयोग था, आग तो पहले से मेरठ छावनी में फूटी चिनगारी से सुलग रही थी। अनुकूल समय देखकर इस युवा फकीर ने 02 अगस्त, 1857 को अपना छद्म चोला उतार फेंका और अपने आपको मुगल खानदान के निजामबख्त का पुत्र और मुगल बादशाह का वंशज घोषित कर दिया। उस समय मंदसौर में मुस्लिमों की संख्या दस हजार थी। इसी मजहबी सरपस्ती ने एक फकीर को शाहजादा मान लिया और फिरोजशाह फकीर से क्रांति का नायक बन गया। अब यह मंदसौर के और करीब (2 कि.मी.) दूधन सैय्यद साहब की दरगाह पर आ गया। छद्म फकिरी वेश में फिरोजशाह ने क्षेत्र के मेवाती, मकरानी, अफगानी पठानों एवं मुलतानी मुसलमानों को अपने पक्ष में किया। सिंधिया की सेना में तैनान इन्हीं मुस्लिमों में भी उसने अपनी पैठ बना ली। 26 अगस्त को फिरोज ने मंदसौर में विद्रोहियों की मदद से अपने को शाह घोषित कर दिया और नीमच तहसील कार्यालय को अपना मुख्यालय बना लिया और मिर्जा बेग नामक एक मुस्लिम को अपना प्रधानमंत्री नियुक्त कर दिया।

फिरोजशाह के नाम से शाही हुक्म जारी होने लगे। 'खल्क ए खुदा', मुमल्क ए बादशाह, हुकुए-ए-सिपाही उसका नारा और ध्वज हरे रंग का था। उसने स्वतंत्रता प्राप्ति के उद्देश्य को सत्ता प्राप्ति का आधार बना लिया। सजातीय विद्रोहियों के सहयोग से फिरोजशाह ने क्रांतिकारियों की इस आवाज को भुला दिया-

लाठी गोली फाँसी से अब नहीं डरेंगे वीर
भारत में हाथ तिरंगा यह होगी तस्वीर

क्रांति में हरा ध्वज फहराकर फिरोजशाह ने स्वतंत्रता सेनानियों के साथ वही किया जो आज किसान आंदोलन का फायदा उठाकर कुछ मौकापरस्तों ने लाल किले पर पीला झंडा फहराकर किया है। वह इस आंदोलन में गंगा सिंह और हीरा सिंह जैसे मालवी वीरों के सहयोग को भूल गया। लूट मार और हर्जाना एवं नजराना वसूलना उसका मुख्य कार्य हो गया। सीतामऊ के राठौर राजा, जावरा के नवाब, रतलाम, प्रतापगढ़, सलुम्बर के जागीरदारों एवं डूँगरपुर के राजा को पत्र लिखकर फिरोजशाह ने स्वतंत्रता आंदोलन एवं युद्ध के नाम पर आर्थिक सहायता माँगी। शान्ति भंग होने के डर से उक्त सभी ने उसे नजराना पेश किया। ढेर सारी दौलत प्राप्त कर फिरोजशाह ने जीरन के खण्डहरनुमा किले में अपनी सैनिक छावनी स्थापित कर ली।

कैप्टन लायड को जब खबर लगी कि जीरन में विद्रोही अपना ठिकाना बनाये हुये हैं तो उन्हें खदेड़ने के लिए लायड ने 23 अक्टूबर, 1857 को कमाडिंग अधिकारी सिमसन को भेजा। सिमसन के साथ 11 अधिकारी, 40 जवान, दो 19 पौंड की तोपें एवं 83वीं मजिस्ट्री रेजिमेन्ट भेजी गयी। जीरन में इस विदेशी सेना के साथ विद्रोहियों का भीषण युद्ध हुआ। ग्यारह में 5 अंग्रेज अधिकारी घायल हो गये। दो अधिकारियों कैप्टन रीड़ एवं कैप्टन एन.बी. टक्कर का सर काट कर विद्रोही अपने साथ मंदसौर ले गये। जीरन छोड़ने से पहले उसे खूब लूटा। कटी मुंडियों को विद्रोहियों ने मंदसौर किले के पश्चिमी दरवाजे पर टाँग दिया जिसके कारण इस दरवाजे का नाम मुंडी दरवाजा पड़ गया। आज भी मुंडी दरवाजा को विजय का प्रतीक माना जाता है। क्रोधित अंग्रेजों ने मंदसौर में विद्रोहियों पर हमला किया। 22, 23, 24 एवं 25 नवम्बर कुल चार दिन के युद्ध में 1,500 विद्रोही मारे गये, 1,000 घायल हुए, 250 नन्दी बना लिये गये और लगभग 1,000 पलायन कर गये। पलायन करने वालों में शाहजादा फिरोजशाह भी था। मंदसौर पराजय के पश्चात् पश्चिमी मालवा में विद्रोहियों की गतिविधियाँ समाप्त हो गयीं। शाहजादा फिरोजशाह इन्दरगढ़ में तात्या टोपे से मिला और उनके साथ हो लिया। 21 जनवरी, 1859 को सीकर में कर्नल होम्स से पराजित होकर तात्या टोपे, रावसाहब और फिरोजशाह अलग हो गये। 1859 में ही फिरोजशाह बुखारा गया वहाँ से 1860 में कांधार पहुँचा। सन् 1863 में वह तेहरान गया, 1868 में स्वात घाटी में भी रहा। लम्बी लड़ाई में उसकी एक आँख एवं एक टाँग क्षतिग्रस्त हो चुकी थी। सन् 1875 में 45 वर्ष की आयु में वह मुसलमानों के पवित्र नगर मक्का चला गया। तत्पश्चात् 17 दिसम्बर, 1877 को मक्का में ही उसकी मृत्यु हो गयी और वह वहीं दफन कर दिया गया। फिरोजशाह का उद्देश्य भारत की स्वतंत्रता नहीं बल्कि अपनी सल्तनत कायम करना था जिसमें असफल होने पर वह भारत छोड़कर दर-दर भटकता रहा और अन्त में मक्का में जन्नत प्राप्त करने चला गया। यदि वह सच्चा स्वतंत्रता सेनानी राष्ट्रभक्त होता तो मक्का में दफन होना कदापि पसंद नहीं करता। यहीं लड़ता रहता और कहता- तेरी मिट्टी में मिल जावां, तेरी नदियों में वह जावां, तेरे खेतों में लहरावां। पर ऐसा नहीं हो सका क्योंकि उसका उद्देश्य पवित्र नहीं था और इसी कारण वह भारत माँ का आँचल नहीं पा सका। मालवा की मिट्टी ने उसे अपने से दूर कर दिया।

संदर्भ-मालवा के दशपुर अंचल में स्वतंत्रता के महासंग्राम (1857-1947)
लेखक-डॉ. पूरन सहगल

मालवा के मौन बलिदानी क्रांतिवीर भागीरथ सिलावट

भारत के हृदय क्षेत्र मध्य प्रदेश के देपालपुर की आन, बान, शान जिन्होंने 1857 की क्रांति में मिसाल बनकर भूमिका निभाई। जब देश में चारों ओर स्वतंत्रता के लिए क्रांति की ज्वाला उठ रही थी तभी भारत के मालवा क्षेत्र में स्वाधीनता का परचम लहराने वाले उन वीर नायकों में से एक थे भागीरथ सिलावट।

• प्रतुन प्रेमचंद्र राय

भारतीय स्वतंत्रता के लिए असंख्य लोगों ने अपने-अपने स्तर पर संघर्ष और प्रतिरोध किया। उन कोटि-कोटि जनों से कुछेक तो ज्ञात है किंतु इतिहास के पन्नों से अनेकों बलिदानियों की कहानियां लगभग ओझल हो चुकी हैं। ऐसे ही एक क्रांतिवीर हुए हैं भागीरथ सिलावट जो मालवा की भूमि पर जन्मे और यहीं अपने राष्ट्रीय कर्तव्य का पालन करते हुए बलिदान हो गए। माँ अहिल्या की नगरी में जन्मे 1857 की क्रांति के नायक वीर बलिदानी भागीरथ सिलावट जिन्होंने देश की स्वतंत्रता को अपने जीवन का लक्ष्य चुना। वह उन क्रांतिकारी योद्धाओं में एक रहे जिन्होंने अंग्रेजों की नाक में दम कर के रखा और ब्रिटिश शासन की चूलें हिला के रख डालीं।

भारत के हृदय क्षेत्र मध्य प्रदेश के देपालपुर की आन, बान, शान जिन्होंने 1857 की क्रांति में मिसाल बनकर भूमिका निभाई। जब देश में चारों ओर स्वतंत्रता के लिए क्रांति की ज्वाला उठ रही थी तभी भारत के मालवा क्षेत्र में स्वाधीनता का परचम लहराने वाले उन वीर नायकों में से एक थे भागीरथ सिलावट। उन्होंने अपने जीवनकाल में अंग्रेजों से अनेकों बार संघर्ष किया। क्रांतिवीर भगीरथ सिलावट एक पिछड़े तबके के परिवार से सम्बंध रखते थे और अपने आसपास के जनजाति समाज से उनके आत्मीयतापूर्ण सम्बंध थे। क्षेत्र में मान्यता है कि उन्होंने ईसाई मिशनरियों के धर्मांतरण के विरुद्ध भी समाज का जागरण किया। यदि उनके संदेशों को व्यापक प्रसार मिलता तो निश्चित ही धर्मांतरण की गतिविधियों में और भी कमी आती। वह तन-मन-धन से मां भारती की सेवा में लीन रहे और आम लोगों को क्रांति की गतिविधियों से जोड़े रखा। क्रांतिवीर भागीरथी जी अपने समय में भी युवाओं के आदर्श रहे और आज के युवा भी उनसे प्रेरणा प्राप्त कर रहे हैं। उनसे प्रेरित होकर युवाओं ने अपने क्षेत्र में धर्मांतरण और राष्ट्र विरोधी गतिविधियों के विरुद्ध अभियान छेड़ दिया है।

यह विडंबना ही थी कि मुट्ठी भर अंग्रेजों ने असंख्य भारतीयों पर अत्याचार कर उन्हें अपनी कठपुतली बनाकर रख छोड़ा था। जब बड़े-बड़े शासक-नवाब ब्रिटिशर्स से दोस्ती के नाम पर गुलामी कर रहे थे तब उन्होंने अंग्रेजों की तानाशाही के विरुद्ध अपनी तलवार उठाई और भारतीयों को ब्रिटिशर्स के चुंगल से बाहर निकलने में अपनी भूमिका सुनिश्चित की। मलावा के इस पराक्रमी योद्धा ने संघर्षों में अपनी तलवार से अनेकों विदेशी सैनिकों को मृत्यु के घाट उतारा। अंग्रेजों ने उन्हें पकड़ने के लिए नाना प्रकार के जतन किए किंतु वह हाथ ही मलते रह गए। बल से न जीत पाने पर अंग्रेजों ने छल का सहारा लिया और अंतत्वोगत्वा वह मालवा के इस लाल को बंदी बनाने में सफल हो गए। अंग्रेजों ने उन्हें देपालपुर में एक पेड़ पर फांसी चढ़ा दिया। देपालपुर का वह स्थान जहां इस क्रांति सूर्य का बलिदान हुआ वो देशभक्तों के लिए एक तीर्थ के समान पवित्र स्थल बन गया है। स्वाधीनता के अमृत महोत्सव पर मालवा अपने इस बलिदानी क्रांतिवीर भगीरथ सिलावट के बलिदान को स्मरण कर स्वयं को कृतार्थ अनुभव कर रहा है।

राघौगढ़ के अमर बलिदानी ठाकुर दौलतसिंह राठौड़

• दिलीप सिंह जाधव 'बाबा'

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात एक विशिष्ट विचारधारा के अनुयायियों द्वारा स्वतंत्रता संग्राम को कुछ इस प्रकार से प्रस्तुत किया कि एक राजनीतिक दल और 2 परिवारों ने देश को स्वतंत्र करवाया। इसके चलते लाखों क्रांतिकारियों-बलिदानियों के योगदान की कहीं चर्चा भी नहीं हो सकी। उनके योगदान को विस्मृत कर दिया गया। सौभाग्य से देश में स्वाधीनता संग्राम के 75वें वर्ष पर एक चर्चा छिड़ी और गांव-गांव, नगर-नगर, प्रांत-प्रांत के अग्रणी स्वतंत्रता सेनानियों के अतुल्य पराक्रम, संघर्ष, त्याग और बलिदानों का इतिहास समाज के सामने आ रहा है। ऐसे ही 1857 के महासमर के एक बलिदानी योद्धा थे ठाकुर दौलतसिंह।

जोधपुर संस्थान के संस्थापक जोधाजी राठौड़ की छठी पीढ़ी में राव विरम देव के पराक्रमी पुत्र राघवसेन जी उर्फ रघुनाथसिंह जी हुए। इन्होंने इंदौर-नेमावर मार्ग पर इंदौर से 35 किलोमीटर दूर राघवगढ़ अर्थात राघौगढ़ बसाया, जिसका प्रमाण राघौगढ़ के कड़ी के पूर्व में शुक्रवार संवत 1784 आषाढ़ मास में टंकित उपलब्ध शिलालेख है। इन्हीं राघवसेन जी के बाद पांचवीं पीढ़ी में राघौगढ़ के 1857 के स्वतंत्रता संग्राम के सैनानी दौलतसिंह जी राठौड़ हुए। दौलतसिंह जी एक अर्ध स्वतंत्र ठिकाने के ठिकानेदार बने, इनकी कुलदेवी नागणेचा देवी एवं कुल इष्ट नृसिंह भगवान हैं।ठाकुर दौलतसिंह सच्चे स्वतंत्रता प्रेमी थे। 04 जून, 1857 को नीमच की ब्रिटिश छावनी में अंग्रेजों के विरुद्ध भारतीय सैनिकों की क्रांति में सम्पूर्ण मालवा पर गहरा असर डाला था। दौलतसिंह, वीर तात्या टोपे तथा अमझेरा के राजा बख्तावरसिंह जी के अत्यंत निकट के व्यक्ति थे। ओरछा के युवराज देवीसिंह भी दौलतसिंह के सम्पर्क में थे। 10 मई, 1857 को भारतीय जनता ने अंग्रेजी साम्राज्यवाद के विरुद्ध जैसे ही संघर्ष किया, ठाकुर दौलतसिंह भी अपनी छोटी किंतु पराक्रमी सेना के साथ अंग्रेजों से टकराने को खड़े हो गए।

इंदौर रेसीडेंसी पर भारतीय सैनिकों का कब्जा हो गया था

और इंदौर का रेसीडेंट कर्नल हेनरी ड्यूरेंट 200 घुड़सवार तथा लगभग 300 सैनिकों के साथ भाग गया। ड्यूरेंट इंदौर-नेमावर मार्ग से राघौगढ़ की सीमा में आया। दौलतसिंह अपनी पराक्रमी सेना लेकर अंग्रेजी सेना पर टूट पड़े और फिर भयानक संघर्ष हुआ। इस संघर्ष में अंग्रेजों को हार का स्वाद चखना पढ़ा। इस युद्ध की खबर सोनकच्छ, नेमावर, हाटपिपल्या, सतवास, देवास सभी दूर फैल गई। आमजन में भी जिनके पास जो हथियार थे वह लेकर एकत्रित होते गए। बालकसिंह एक कुशल संगठक तथा गजब के क्रांतिकारी वीर थे। उन्होंने राघौगढ़ से सतवास, नेमावर, सोनकच्छ तथा भोपाल तक स्वयं जनता के बीच जाकर स्वतंत्रता हेतु जन-जन को एकजुट किया। अंग्रेजों ने उन्हें जिंदा या मुर्दा पकड़ने के लिये 2000 रुपये का इनाम रखा था। इस आशय के इश्तहार छपवाकर जगह-जगह बंटवाये और चौराहों पर लगाये गए। दौलतसिंह की सेना में ठाकुर लक्ष्मणसिंह राजपूत, रामकृष्ण, खेराती खाँ मेवाती, खान मोहम्मद तथा अन्य विश्वसनीय समर्पित योद्धा सम्मिलित थे। देवास में अल्प समय के लिये वीर तात्या टोपे भी सक्रिय रहे हैं। देवास में ठाकुर दौलतसिंह, शहजादा फिरोज, राव साहब, तात्या टोपे तथा आदिल मोहम्मद खाँ ने जिस जगह अंग्रेजों से भीषण युद्ध किया वह स्थान अब शुक्रवारिया हाट के नाम से जाना जाता है। विशाल ब्रिटिश सेना से बहुत मलबे समय तक सँघर्ष करना कठिन था, अतः युद्ध से निकलने की योजना बनाई गई। हालांकि चारों ओर से घिर चुके रणबांकुरों का बच निकलना थोड़ा कठिन काम था किंतु जनसामान्य के प्रबल समर्थन के चलते यह चारों वीर सकुशल देवास से बाहर निकल पाने में सफल हो गये।

राघौगढ़ (देवास) पर अंग्रेजों का हमला और स्थानीय प्रतिरोध

02 जुलाई,1857 को हेंगरी ड्यूरेंट ठाकुर दौलतसिंह से परास्त हुआ था। हार के अपमान से ड्यूरेंट और पूरी अंग्रेज सेना बौखलाई हुई थी। अतः 02 माह के बाद नागपुर से सेना की कुमक लेकर तोपों, बंदूकों तथा अन्य हथियारों से लेस ब्रिटिश सेना ने राघौगढ़ पर आक्रमण कर दिया। ठाकुर दौलतसिंह को पूरे परिवार सहित तोप से उड़ाने के आदेश अंग्रेज सेना को पहले ही प्राप्त हो चुके थे। दौलतसिंह के साथियों ने आपसी विचार-विमर्श करके ठाकुर दौलतसिंह के बच्चों, प्रकाशसिंह, रघुनाथसिंह, बैनसिंह तथा रानी कुंवर आकिया को गाँव के पटेल के यहाँ गोपनीय ढंग से पहुँचाया। पटेल ने अत्यंत बहादुरी से अंग्रेजों के दुश्मन ठाकुर दौलतसिंह के परिवार की सुरक्षा और सेवा की। अंग्रेजों ने गढ़ी पर तोपों से हमला किया। गढ़ी टूटने लगे और ऐसे में अंग्रेजी सेना का घेरा छोटा होता गया और वह निकट आती गई। अंग्रेज सेना जहां आधुनिक तोपों तथा बंदूकों से लैस थी वहीं संख्या में भी कई अधिक थी। फिर भी ठाकुर दौलतसिंह के पराक्रमी सैनिकों ने अपने पराक्रम से अंग्रेजी फौज में जबरदस्त मार-काट मचाई। अनेकों सिपाहियों के मारे जाने के बाद अंग्रेजी फौज जैसे-तैसे गढ़ी में प्रवेश करने में भी सफल हो गई। गढ़ी के अंदर भारतीय रणबांकुरों के साथ ब्रिटिशर्स का प्रचंड युद्ध हुआ और माँ भारती के लाल अपनी अंतिम श्वास और रक्त की अंतिम बून्द तक लड़ते रहे और बलिदानी हो गए। गढ़ी में एक 300 वर्ष पुराना बरगद का पेड़ था। अंग्रेजों ने उसी पर कई भारतीयों को फांसी पर चढ़ा दिया। अंग्रेज यह युद्ध तो जीत गए लेकिन ठाकुर दौलतसिंह को पकड़ने की उनकी मंशा पूरी नहीं हो सकी। वो चकमा देकर निकल गए और देवास से शिवपुरी तक स्वतंत्रता के लिए संघर्ष करते रहे। हालांकि अंग्रेजों द्वारा यह प्रचार किया गया कि इस युद्ध में ठाकुर दौलतसिंह की मृत्यु हो गई है लेकिन उनके इस दावे पर किसी को विश्वास नहीं था, क्योंकि जननायक ठाकुर दौलतसिंह के संघर्ष और पराक्रम की जानकारी समय-समय पर लोगों तक पहुँचती रहती थी। मान्यता है कि शिवपुरी छावनी में वीर बलिदानी तात्या टोपे के साथ फांसी पर चढ़कर स्वतंत्रता की देवी को अपना सर्वस्व न्योछावर करने वाले दूसरे बलिदानी ठाकुर दौलतसिंह ही थे।

स्वाधीनता समर में हाटपिपल्या (देवास) का योगदान

महाराणा उदयसिंह के वंशानुक्रम में जन्मे ठाकुर शकतसिंह जी 1857 में हाटपीपल्या गढ़ी के स्वामी थे। देशभर में जब 1857 कि क्रांति का शंखनाद हुआ तब शकतसिंह जी ने भी उसे समर्थन दिया। यह बात अंग्रेजों को पता चल गई और उन्होंने हाटपीपल्या के विरुद्ध सैन्य कार्यवाही की योजना प्रारंभ कर दी। ब्रिटिश फौज का जनरल ऑर राघौगढ़ के पराक्रम और हैनरी ड्यूरेंट के हश्र के बारे में जानता था इसलिए वह नागपुर से 10 हजार की फौज, तोपें, गोलाबारूद लेकर निकला। उसने शकतसिंह और उनके भाइयों को हाजिर होने का आदेश भिजवाया तथा न मानने पर बुरे परिणाम भुगतने की धमकी भी भिजवाई। शख़्तावत परिवार के वीरों ने सुविधायुक्त जीवन के इतर राष्ट्र रक्षा हेतु युद्ध का चयन किया। चारों ओर से तोप के गोले दागे जाने लगे, गोलियां चलने लगीं। एक विशाल सेना के सामने कुछ रणबांकुरों ने मृत्यु को चुनौती भेजी। घनघोर युद्ध हुआ और इस संघर्ष में ठाकुर शकतसिंह, उनके भाई ठाकुर बख्तावर सिंह, काका धौकलसिंह शक्तावत, मामा धौकलसिंह तंवर, गहलोत रामसिंह सहित कुछ मराठा और बागरी सैनिक बलिदान हुए। कुछ को बंदी बनाया गया और फांसी पर लटका दिया गया तो वहीं महिलाओं ने गढ़ी में बनी बावडी में डूबकर जल-जौहर कर अपनी पवित्रता को भंग होने से बचाया। यह घटना भी भारतीय स्वाधीनता संग्राम की एक महत्वपूर्ण घटना है। स्वाधीनता के 75वें वर्ष में जिसका स्मरण कर बलिदानियों के प्रति कृतज्ञ होना हमारा परम् कर्तव्य है।

मालवा की क्रांति ज्योति
भीमाबाई होल्कर

• राजेंद्र जोशी

भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन की बात हो, महिलाओं की उसमें भूमिका का विषय हो और मध्यप्रदेश की वीरांगनाओं की चर्चा हो तो महान राष्ट्रभक्त, वीर हृदया, अदम्य साहसी व पराक्रमी भीमाबाई का नामोल्लेख कैसे न होगा भला? कहते हैं न 'पूत के पांव पालने में झलकते हैं' यह उक्ति भीमाबाई के व्यक्तित्व पर सटीक बैठती है। बचपन में जब बच्चियां गुड़िया-खिलौनों से खेलती थीं तब भीमा ने शस्त्रों के साथ खेलना शुरू कर दिया।उसमें भी धनुषबाण उन्हें सबसे ज्यादा प्रिय थे। किशोरावस्था में प्रवेश करती भीमा के वीरता-पराक्रम के नए-नए पन्ने लिख रही थी। तलवारबाजी करना और सैनिक वेश में घुड़सवारी करना उनकी दिनचर्या का हिस्सा बन गया था। वैसे तो भीमाबाई की पढ़ाई में कोई विशेष रुचि नहीं थी किंतु गीता पढ़ना भी उनकी जीवनचर्या का नियमित हिस्सा था। गीता के अंश 'मनुष्य की आत्मा अमर है, अतः मानव को भयभीत न होकर निरंतर अपने कर्तव्यों का पालन करते रहना चाहिए' को उन्होंने आत्मसात कर लिया था।

युवावस्था में भीमाबाई का विवाह एक पराक्रमी सुयोग्य वर के साथ कर दिया गया किंतु दुर्भाग्यपूर्ण रूप से वह ज्यादा समय तक सुहागन नहीं रह सकीं। उनके पति की मृत्यु हो जाने के बाद वह पुनः अपने पिता के घर लौट आईं और भाई मल्हारराव होल्कर के साथ जीवन व्यतीत करने लगी। इस समय तक ब्रिटिशर्स पूरे भारत में अपने पैर जमा चुके थे और देशी रियासतों को हड़पने की नित नई योजना बनाते रहते थे। होल्कर रियासत एक समृद्ध रियासत थी जिसका चारों ओर बोलबाला था। फूट डालो-शासन करो की नीति का अनुसरण करने वाले दुष्ट अंग्रेज किसी भी तरह से होल्कर रियासत को हड़पना चाहते थे। अपने मंतव्य को पूरा करने के लिए अंग्रेज होल्कर रियासत के विरुद्ध नित-नए षड्यंत्र करते। मल्हारराव उनके कूटनीतिक षडयंत्रों पर बारीकी से नजर रखे हुए थे। भविष्य की रणनीति के लिए उन्होंने अपनी बड़ी बहन भीमाबाई से परामर्श लिया। वह होल्कर रियासत में अंग्रेजों की दखलंदाजी को नापंसद करती थीं और जानती थीं कि अंग्रेज शनै-शनै पूरी रियासत हड़प कर हमें गुलाम बनाने की मंशा रखते हैं। भीमाबाई अंग्रेजों की गतिविधियों और कार्यप्रणाली का सूक्ष्मता से अध्ययन कर रही थीं अतः उन्होंने

अपने छोटे भाई मल्हारराव से कहा कि, 'अंग्रेजों को हमारे कार्यों में हस्तक्षेप करने का अधिकार नहीं है और उन्हें रोकना ही चाहिए'। अतः भीमाबाई ने अपने भाई को अंग्रेजों से युद्ध करने की सलाह दी।

दोनों भाई-बहन ने मिलकर युद्ध की तैयारियां शुरू कीं और सशक्त और प्रभावी रणनीति बनाई। जब युद्ध का बिगुल बजा तो अंग्रेज फौज का कैप्टन युद्ध से यह कह कर आनाकानी करने लगा कि वह एक महिला से युद्ध नहीं करेगा। महिला से युद्ध करने को वह अपना अपमान समझता था। लेकिन जब भीमाबाई घोड़े पर सवार हो कर अंग्रेजों पर टूट पड़ीं और युद्धभूमि में साक्षात रणचंडी बनकर अंग्रेजों का संहार करने लगीं तो वह स्वयं युद्ध करने सामने आया। भीमाबाई की तलवार ने शीघ्र ही उसके घमंड को चकनाचूर कर दिया और वह बुरी तरह घायल हो गया। भीमाबाई ने गम्भीर वाणी में उस अंग्रेज कैप्टन से कहा, 'ऐ फिरंगी! हम घायल शत्रु पर वार नहीं करते, जाओ पहले अपना इलाज करवाओ।' इसी दौरान मल्हारराव ने अपनी बहन भीमाबाई को बिना बताए अंग्रेजों से संधि करली। जब यह बात उन्हें पता चली तो उन्होंने इस संधि से असहमति जताते हुए मातृभूमि की रक्षा हेतु संघर्ष का ही मार्ग चुना।

MEDI-CAPS UNIVERSITY
Knowledge is Power

MEDI-CAPS UNIVERSITY

Leading
AICTE Approved
University in India

RIGHT PLACE TO NURTURE YOUR DREAMS

Inculcating Ethics and Best in Class Quality Academics

Highest Number of Placement Offers by Companies in M.P. & C.G.

Highest Package
24 LPA.

Only Private University of MP Ranked under 150- MHRD- NIRF Ranking 2017

Ranked 1st amongst the Top Private institute in Central India- i3RC Times Engineering 2019.

Why Us ?

- *22 Years of Academic Expertise.*
- *14000+ Graduated Alumni Workforce all Over the Globe.*
- *8500+ Students Presently Studying in Various Programs.*
- *300+ Companies Visited.*

Click on www.medicaps.ac.in
Click on Admission Open for 2022-2023
Fill the Registration Form.

admission@medicaps.ac.in
079690 24444

DEVI AHILYA VISHWAVIDYALAYA, INDORE

NAAC ACCREDITED 'A+' GRADE

DEVI AHILYA VISHWAVIDYALAYA, INDORE OFFERS FOLLOWING ACADEMIC PROGRAMMES:

AFTER 10+2

Bachelor Degree Programmes (3/4 Years, as per NEP-2020): B.Com., B.A. (Journalism), **B.A. (**Economics), B.C.A., B.Sc. (Applied Statistics and Analytics), B.Sc. (Physics), B.Sc. (Mathematics), B.Sc. (Electronics), **B.A.LL.B.** (Hons.), B.Pharm, B.P.E.S.
Integrated PG Programmes (5-Year): M.B.A. (Foreign Trade), M.B.A.(E-Commerce), M.B.A.(Management Science), M.B.A.(Tourism), M.B.A. (Hospital Administration). **M.Sc.** (Electronic Media), M.Tech. (Artificial Intelligence and Data Science), M.Tech. (IoT), M.Tech. (IT), M.Tech. (Embedded Systems), M.Tech. (Energy and Environmental Engineering), M.C.A.

AFTER UNDER-GRADUATION

Two Years Programmes:
M.B.A. (Advertising & Public Relations/ Business Analytics/ Business Economics/ Computer Management/ Disaster Management/ E-Commerce / Entrepreneurship/ Financial Administration / Financial Services/ Foreign Trade/ Hospital Administration / Human Resource/ International Business/ Marketing Management / Media Management / Public Administration and Policy/ Rural Development/ Tourism Administration).
M.A. (Journalism and Mass Communication/Economics /Functional Hindi-Translation and Literature/Sanskrit Literature /Sanskrit Jyotish /English Literature/Urdu Literature/Performing Arts/Sociology/Political Science/Clinical Psychology/Lifelong Learning for Women Empowerment/Yoga).
M.L.I.Sc., M.S.W., M.Voc. (Interior Design).
M.Com. (Accounting and Financial Control / Bank Management).
M.Sc. (Applied Mathematics/ Biochemistry/ Bioinformatics/ Biotechnology (Industry Sponsored)/ Chemistry/ Computer Science/ Data Science & Analytics/ Electronics/ Electronics & Communication/ Genetic Engineering/ Industrial Microbiology/ Information Technology / Instrumentation/ Life Sciences/ Material Science/ Mathematics/ Pharmaceutical Chemistry/ Physics/ Statistics).
LL.M. (Business Law)
M.E.: Computer Engineering (Software Engg.)/ Electronics (Digital Communication)/ Electronics (IOT & System Design)/ Information Technology (Information Security)/Industrial Engg. & Management/ Mechanical Engineering (Design & Thermal Engineering).
M.TECH.: Big Data Analytics/ Computer Science/ Data Science/ Embedded Systems/Energy and Environment/ Energy Management/ Information Architecture & Software Engineering/ Internet of Things (IOT)/ Instrumentation/ Laser Sc. & Applications/ Network Management & Information Security.
M.Pharm. (Pharmaceutical Chemistry).
One Year Programme: Bachelor of Journalism (B.J.)

PART-TIME/ EXECUTIVE PROGRAMMES

Programmes: M.E./M.TECH. (Part-Time/ Executive)
M.E.(Part-Time): Computer Engineering (Software Engg.), Electronics (IOT & System Design), Electronics (Digital Communication), Industrial Engg. & Management, Mechanical Engineering (Design & Thermal Engineering), Information Technology (Information Security).
M.Tech. (Executive): Computer Science, Data Science, Embedded Systems, Instrumentation, Energy Management.
M.B.A. (Executive).

CERTIFICATE/ DIPLOMA/ PG DIPLOMA PROGRAMMES

CERTIFICATE PROGRAMMES:
French, German, Translation and Literature, Performing Arts, Labour Law and Personnel Management, Consumer Psychology and Advertising, Guidance and Counselling, Human Rights.
DIPLOMA PROGRAMMES:
Performing Arts, Dramatics, Consumer Psychology and Advertising, Interior Designing, Logistics & Supply (Cargo Management).
PG DIPLOMA PROGRAMMES:
Computer Applications, Advanced Translation and Functional Hindi, Guidance and Counselling, Human Rights, Labour Law and Personnel Management, Yoga Therapy, Population Education and Demography.

Ph.D. PROGRAMMES

Applied Chemistry/Applied Mathematics/Applied Physics/ Biochemistry/ Biotechnology/ Botany/ Chemistry/ Commerce/ Computer Science/ Computer Engineering/ Data Science/ Drawing and Painting/ Economics/ Education/ Electronics/ Electronics and Telecommunication/ Electronics and Instrumentation/ Energy and Environment/ English/Geography/ Hindi/ History/ Home Science/ Information Technology/ Instrumentation/ Journalism and Mass Communication/ Law/ Life Science/ Management/ Mathematics/ Mechanical Engineering/ Music/ Pharmacy/ Philosophy/ Physical Education/ Physics/ Political Science/ Psychology/ Sociology/ Social Work/ Statistics/ Urdu/ Yoga/ Zoology

REGISTRAR

"स्वतंत्रता यज्ञ में स्वयं को समर्पित करने वाले बलिदानी वीर खाज्या नायक"

एक महान योद्धा, सतपुड़ा की सुदूर पहाड़ियों में रहने वाले निमाड़ के जनजाति वीर योद्धा रहे खाज्या नायक जिनकी कहानी से बहुत ही कम लोग वाकिफ हैं। वीर योद्धा भीमा नायक, खाज्या नायक और टंट्या मामा भील ने साथ-साथ कई विद्रोहों में सहभागिता की। वे अक्सर अंग्रेजों से लूटी गई सामग्री गरीबों में बाँट दिया करते थे। उन्होंने अंग्रेजों से कई लड़ाईयाँ लड़कर उन्हें धूल चटा दी थी। कहा जाता है कि जब भी गांव में अंग्रेज आते थे तो वे अंग्रेजों को मारकर वहां से भागने पर मजबूर कर देते थे। ज्ञातव्य है कि स्वतंत्रता सेनानी तात्या टोपे के पश्चिम निमाड़ के आगमन पर पहाड़ी अंचल के गुप्त रास्तों से नर्मदा नदी पार करवाकर मंजिल तक पहुंचाने में भीमा नायक, खाज्या नायक एवं बिरजू नायक का महत्वपूर्ण योगदान रहा है।

• मनीष खेड़े

चारों और भयावह अंधकार। चहुँओर चीत्कार। प्राणों के जाने का कोई क्षण निश्चित नहीं था। किस घर से कब अर्थी निकले यह अनिश्चित था। प्रातः माँ अपने राजकुमार को विदा करती थी पर वह यह नहीं जानती थी कि उसका राजकुमार किस वेश में घर वापस घर आएगा। शहीद होकर या जीवित या उसकी काया भी घर आ पायेगी कि नहीं, सब कुछ अनिश्चित था। ना मृत्यु का समय, ना कालकोठरी में जाने का, ना ही नग्न शरीर पर हंटर पड़ने का, ना ही हमारी अस्मिता के लुट जाने का; सब कुछ भयावह क्रूर था। यह वह समय था जब स्वंतत्रता के समर का उद्घोष हुआ था और निमाड़-मालवा में प्राणोउत्सर्ग की मानो प्रतिस्पर्धा चल रही थी। हर युवा स्वंतत्रता के गीत को लिखने के लिये आतुर था। प्राणों का बलिदान करने की मानो प्रतियोगिता चल रही हो। असंख्य युवाओं ने अपने प्राणों का बलिदान दिया स्वतंत्रता की माला सजाने को। हर तरफ करुण रुदन, हर घर दीपक विहीन था। कहीं बूढ़े कंधे अपने नौजवान बेटों की अर्थी ढो रहे थे तो कई बहनें अपने पति की मृत देह पर विलाप करती चूड़ियां तोड़ रही थीं। बड़ा कठिन समय लगता है यह जिसे सुनकर ही हमारे रोंगटे खड़े हो रहे हैं तो तनिक अनुमान लगाओ वह क्या समय रहा होगा? घर-घर के दीपक बुझ रहे थे। समूचा राष्ट्र परतंत्रता का दंश झेल रहा था। हमारी सनातन संस्कृति और धर्म परम्परा पर नित नया आघात हो रहा था। हर श्वास पराधीनता की पीड़ा में व्याकुल थी।

ब्रिटिशों के दाँत खट्टे करने वाले
महान क्रांतिकारी वीर बिरजू नायक

आज पूरा राष्ट्र स्वाधीनता के 75 वर्ष पूर्ण होने पर अमृत महोत्सव मना रहा है। इस महोत्सव में हम उन क्रांतिकारियों का भी प्रथम स्मरण करते हैं जिनके होने की वजह से आज हम स्वतंत्रता की खुली हवा का आनंद ले पा रहे हैं। यह स्वाधीनता का अमृत महोत्सव उन शहीदों के बलिदान का स्मरण है जिन्होंने देश, धर्म और संस्कृति के लिए अपने प्राणों को राष्ट्र पर न्यौछावर कर दिया। अतीत की परतें खोलें तो हम पायेंगे कि यह स्वतंत्रता अनगिनत देशभक्तों की बलि है जिन्होंने स्वाधीनता एवं मातृभमि की अखंडता को अक्षुण्ण रखने के लिये अपना सर्वस्व न्योछावर कर दिया। जब पूरे देश में 1857 की क्रांति की मशाल जली तो हर कोई मातृभूमि पर बलिदान होने के लिये लालायित था। ऐसे में जनजाति क्षेत्र इस पुण्य साधना में सर्वप्रथम बलिदान होने से कैसे पीछे रह जाता? निमाड़ में जब 1857 क्रांति जगी तो सर्वप्रथम जनजाति योद्धा टंट्या मामा, भीमा नायक, खाज्या नायक तथा बिरजू नायक के साथ-साथ असंख्य जनजाति वीरों ने अंग्रेजों से सीधा युद्ध लड़ा और अंग्रेजी हुकूमत को चुनौती दी। यह उन देशभक्तों की टोली थी जिनके नाम से ही अंग्रेजों की हवा निकल जाती थी। मध्यप्रदेश के बड़वानी जिले के राजपुर पलसूद के समीप मटली सावरदा में ऐसे ही जनजाति क्रांतिवीर का जन्म हुआ जिसका नाम बिरजू नायक था। बिरजू नायक की कर्मस्थली सिंधी घाटी थी जो राजपुर पलसूद मार्ग पर स्थित है। यहीं से वीर बिरजू नायक अंग्रेजी हुकूमत की हर योजना को विफल कर देते थे। बिरजू नायक सिंधी घाटी क्षेत्र में वीर के नाम से चर्चित थे। आज भी उनके नाम के आगे लोग वीर लिखना नहीं भूलते हैं। निवाली से (सिंधी घाटी) राजपुर तक उनका गढ़ रहा है।

जनजाति समाज के पूर्वज एवं वयोवृद्धों से प्राप्त जानकारी तथा लोकमान्यता अनुसार बिरजू नायक हमेशा गरीब व किसान के हितों के लिए लड़ते थे। वीर बिरजू नायक ने 1857 के जनजाति योद्धा भीमा नायक, खाज्या नायक और टंट्या मामा भील के साथ अंग्रेजों के विरुद्ध कई विद्रोह किये एवं अंग्रेजी हुकूमत की नींव हिला डाली। वे अक्सर अंग्रेजों को लूटकर लूटी गई सामग्री गरीबों में बाँट दिया करते थे। ऐसे में अंग्रेजों को वीर बिरजू नायक की ग्राम मटली में स्थित झरने (कुंडी) पर नहाने जाने वाली गतिविधि ध्यान में थी। इसी को ध्यान में रखते हुए उन्हें धोखे से मारने के लिए अंग्रेजों ने वीर बिरजू नायक के करीबी साथी का सहारा लिया, क्योंकि बिरजू नायक को मारना आसान नहीं था। अंग्रेजों ने उन्हें मारने के लिए कई प्रयास किए पर असफल रहे। पर एक दिन जब बिरजू नायक प्रतिदिन की तरह झरने (कुण्डी) पर नहाने पहुंचे तभी अंग्रेजों द्वारा भेजे गए किसी परिचित ने उनका सर धड़ से अलग कर दिया। ऐसा बताया जाता है कि सर धड़ से अलग होने के बावजूद वे उपला स्थित समाधि स्थल तक दौड़ते हुए आ गए थे व उक्त स्थल पर प्राण त्यागे थे। जनजाति समाज में आज भी लोककथाओं के माध्यम से वर्तमान में भी उनकी गौरवगाथा का गायन किया जाता है। आज भी निमाड़ का जनजाति सकल समाज उन्हें देवता की भाँति पूजता है और उनका यशगान करता है। स्वतंत्रता के इस अमृत महोत्सव पर वीर बिरजू नायक को याद करना उनके मातृभूमि प्रेम का हम सबको साक्षात्कार करवाता है। जय हो वीर बिरजू नायक की। जय हो माँ भारती की।

समूचा राष्ट्र जब खड़ा हुआ स्वतंत्रता के समर में तो निमाड़-मालवा इस प्रतिस्पर्धा में अव्वल आने की होड़ में मग्न था। बिरसा मुंडा, टंट्या मामा, शाहगढ़ के राजा बख्तबली, रामगढ़ की रानी अवंती बाई, अमझेरा के राजा बख्तावर सिंह, इंदौर के सआदत खां और भागीरथ सिलावट, मनकहरी के रणमत सिंह, दिमान देसपत बुंदेला, बड़वानी के भीमा नायक, बिरजु नायक, खाज्या नायक, दमोह के दौलत सिंह कछवाहा, हिंडोरिया के किशोर सिंह, महिदपुर के सदाशिवराव, जबलपुर के राजा

शंकर शाह और रघुनाथ शाह, विजयराघवगढ़ के राजा सूरज जैसे असंख्य अनाम नायक 1857 की क्रांति के दौर के वीर क्रांतिकारी थे।

ऐसे ही एक महान नायक थे खाज्या नायक। एक महान योद्धा, सतपुड़ा की सुदूर पहाड़ियों में रहने वाले निमाड़ के जनजाति वीर योद्धा रहे खाज्या नायक जिनकी कहानी से बहुत ही कम लोग वाकिफ हैं। वीर योद्धा भीमा नायक, खाज्या नायक और टंट्या मामा भील ने साथ-साथ कई विद्रोहों में सहभागिता की। वे अक्सर अंग्रेजों से लूटी गई सामग्री गरीबों में बाँट दिया करते थे। उन्होंने अंग्रेजों से कई लड़ाईयाँ लड़कर उन्हें धूल चटा दी थी। कहा जाता है कि जब भी गांव में अंग्रेज आते थे तो वे अंग्रेजों को मारकर वहां से भागने पर मजबूर कर देते थे। ज्ञातव्य है कि स्वतंत्रता सेनानी तात्या टोपे के पश्चिम निमाड़ के आगमन पर पहाड़ी अंचल के गुप्त रास्तों से नर्मदा नदी पार करवाकर मंजिल तक पहुंचाने में भीमा नायक, खाज्या नायक एवं बिरजू नायक का महत्वपूर्ण योगदान रहा है।

अमर बलिदानी बिरजु नायक ने राजपुर पलसूद की घनी पहाड़ी के मध्य स्थित चिंदी घाटी को अपना कार्यक्षेत्र बनाया। यह चिंदी घाटी पलसूद राजपुर मार्ग पर बहुत ऊंचाई पर स्थित थी जिससे बिरजु नायक अंग्रेजी हुकूमत की हर हरक़त की निगरानी रखते थे तथा अंग्रेजों की हर योजना का सूक्ष्म अवलोकन करते थे। चिंदी घाटी बिरजु नायक की अंग्रेजों से लोहा लेने की महत्वपूर्ण जगह थी। ऐसे ही भीमा नायक ने सिलावद क्षेत्र के आसपास स्थित दुर्गम्य पहाड़ी क्षेत्र यथा आमल्यापानी, धाबा बावड़ी, मेन्द्रीमाता, अम्बापानी को अपने कर्मक्षेत्र के रूप में चुना। सिलावद क्षेत्र में स्थित पहाड़ी भाग और प्रसिद्ध पहाड़ी गोई नदी भीमा नायक की प्रमुख ढाल हुआ करती थी। यहाँ अंग्रेजों का भीमा नायक को पकड़ने का हर प्रयास असफल हो जाता था।

सेंधवा क्षेत्र का प्रसिद्ध बिजासनी घाट खाज्या नायक की कर्मस्थली बना। खाज्या नायक निमाड़ के सेंधवा घाट के निवासी थे। उन्होंने अंग्रेजी राज को नकारते हुए अंग्रेजों की नौकरी छोड़ दी और बड़वानी क्षेत्र में भीलों के स्वतंत्रता संग्राम की कमान संभाली। लगातार संघर्ष किया और बगैर किसी समझौते के फाँसी पर चढ़ गए। महासंग्राम के कुछ समय पूर्व सन् 1857 से ही क्रांति के महानायक तात्या टोपे खाज्या नायक के संपर्क में थे। ग्वालियर के महादेव शास्त्री और पुनासा के नारायण सूर्यवंशी से निमाड़ में होने वाले पत्रों के आदान-प्रदान में खाज्या नायक की प्रमुख भूमिका थी।

खाज्या नायक की क्रांतिकारी गतिविधियों में शामिल 800 क्रांतिकारियों में भीलों के अतिरिक्त मकरानी और अरब योद्धा भी शामिल थे। 20 जनवरी, 1858 को ले. एटिकन्स और ले. पोरबिन ने नेवली के दक्षिण पश्चिम में खाज्या के दल पर हमला कर किया। इसमें खाज्या नायक की पराजय हुई। सिरपुर के आसपास के सभी क्रांतिकारी भील और भीमा नायक का दल भी खाज्या नायक के साथ हो लिया। खाज्या ने सन् 1857 महासंग्राम के तत्कालीन विराम के बाद भी अपना युद्ध जारी रखा। लगातार युद्धों की श्रंखला में 1 जुलाई, 1860 में अंग्रेजों से प्रत्यक्ष युद्ध हुआ। इस युद्ध में खाज्या नायक के 1500 क्रांतिकारी शहीद हुए और सैकड़ों गिरफ्तार किए गए। 150 क्रांतिकारियों को पेड़ से बांधकर गोली से उड़ा दिया गया। शेष साथियों को पलायन करना पड़ा।

खाज्या नायक को पकड़ने में असमर्थ होने पर अंग्रेजों ने साजिश रची। इसमें रोहिद्दीन नामक मकरानी जमादार को खाज्या नायक के दल में भेजा जहाँ खाज्या नायक के साथियों ने उसको पकड़ लिया तथा खाज्या नायक के सम्मुख प्रस्तुत किया। रोहिद्दीन खाज्या के सम्मुख गिड़गिड़ाने लगा तथा अपने धर्मग्रंथ की कसम खाने लगा। उस समय भीमा नायक भी खाज्या नायक के साथ थे। उन्होंने खाज्या नायक को समझाया कि वह रोहिद्दीन पर विश्वास ना करें पर खाज्या के सामने रोहिद्दीन इस प्रकार गिड़गिड़ाने लगा एवं कसमें खाने लगा जिसपर खाज्या नायक ने रोहिद्दीन को क्रांतिकारियों की टोली में सम्मिलित कर लिया।

रोहिद्दीन उचित समय की प्रतीक्षा में था कि कब खाज्या नायक उसे अकेले में मिलें। वह अवसर भी कुटिल रोहिद्दीन को 3 अक्टूबर, 1860 को मिला जब नदी में स्नान कर सूर्य की पूजा करते समय खाज्या नायक पर गद्दार रोहिद्दीन ने पीछे से गोली चला दी। यहाँ उपस्थित हुई खाज्या की बहन को भी मृत्यु के घाट उतार दिया गया तथा खाज्या नायक के 14 वर्ष के पुत्र को बंदी बना लिया गया। अपनों की गद्दारी से निमाड़ के भील महायोद्धा के संघर्ष को नियति ने विराम लगा दिया। सन् 1857 की क्रांति के समय बड़वानी रियासत के आरंभ में खाज्या नायक और भीमा नायक ने मोर्चा संभाल रखा था। इन जनजातीय योद्धाओं ने स्वतंत्रता के समर में अपने एवं परिवार जनों के प्राणों को मातृभूमि की स्वतंत्रता के लिए न्यौछावर कर दिया।

धन्य है सेंधवा-बड़वानी की माटी जिसने स्वतंत्रता के प्रथम जनजाति योद्धाओं को जन्म दिया जिससे आज समूचे राष्ट्र में निमाड़-मालवा की माटी गौरवान्वित हुई है। धन्य है निमाड़ की जनजाति जिसकी गौरवगाथा युगों-युगों तक गौरवशाली इतिहास में सुसज्जित रहेंगी।

'स्वाधीनता के यज्ञ में सोंधवाड़ की आहुति'

मई 1857 में प्रारम्भ प्रथम स्वतंत्रता संग्राम की ज्वाला धीरे-धीरे भारत के विभिन्न क्षेत्रों में भी पहुँच चुकी थी। सितंबर 1858 में अंग्रेजों के विरुद्ध मालवांचल के सोंधवाड़ के आलोट की कलस्या तहसील के अमरजी-अभयजी, आलोट की समियत खां, फरीद खां, माहिदपुर के हीरासिंह जमादार, करनाली के बापू खां आदि के नेतृत्व में 1857 की क्रांति को अपने क्षेत्रों में आगे बढ़ाया था। आलोट की कलस्या तहसील का भी विस्तृत इतिहास है।

• सनी राजपूत

15 अगस्त, 2022 को भारत अपनी स्वतंत्रता के 75 वर्ष पूर्ण कर रहा है जिसके अन्तर्गत भारत में अमृत महोत्सव मनाया जा रहा है। ऐसे में भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के आंदोलन की कथाओं को भी जन-जन तक पहुँचाया जा रहा है। जब-जब भारत की स्वतंत्रता के आंदोलनों की चर्चा होगी तब-तब इसका प्रारंभ सन 1857 के स्वतंत्रता संग्राम से होना स्वभाविक है। सन 1857 की क्रांति ही भारत में अंग्रेजों के विरुद्ध प्रथम स्वतंत्रता संग्राम था। सन 1857 में भारत के प्रत्येक क्षेत्र से अंग्रेजों के विरुद्ध आंदोलन और क्रांति का उद्घोष हुआ। सन 1857 की क्रांति ने अंग्रेजों के पैरों की जमीन खिसकाने का काम किया था। सन 1857 की राष्ट्रीय क्रांति में भारत के मध्य प्रदेश के मालवांचल का सोंधवाड़ भी कहाँ पीछे रहने वाला था। अंग्रेजों के अत्याचारी शासन और उस समय के अंग्रेजों की पिट्ठू बनी रियासतों के विरोध में मालवांचल में सोंधवाड़ की धरती से भी विद्रोह की ज्वाला फूटी थी।

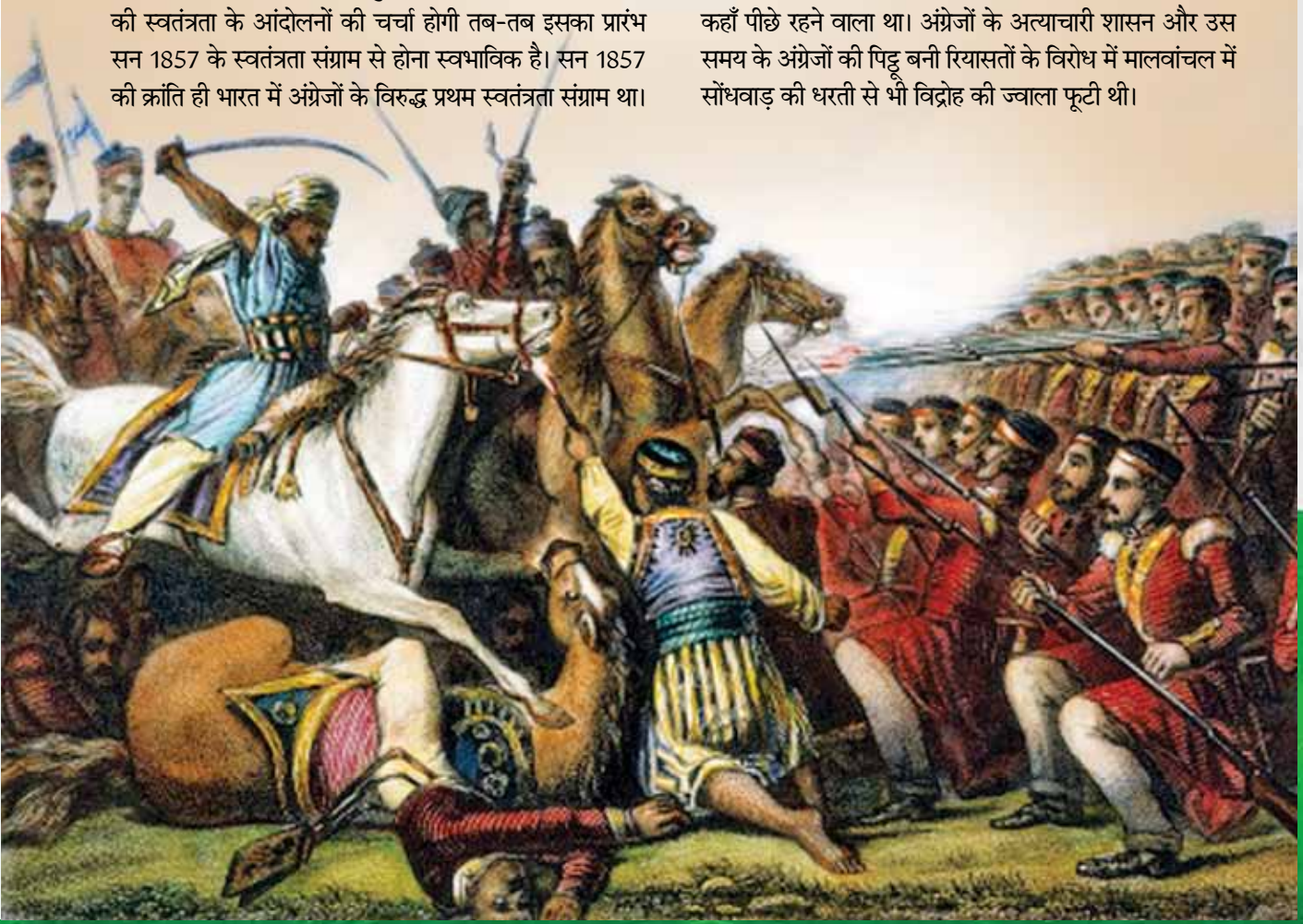

सोंधवाड़ क्षेत्र चंबल नदी के पूर्वी तट से प्रारम्भ होकर मध्य प्रदेश के पूर्व में शाजापुर जिले, पश्चिम में राजस्थान के राजपूताना क्षेत्र तक एवं उत्तर में मंदसौर जिले के रामपुर तक विद्यमान है। इसके अंतर्गत आगर-मालवा जिले का मध्यावर्ती क्षेत्र, उज्जैन जिले की महिदपुर तहसील एवं रतलाम जिले की आलोट तहसील का क्षेत्र प्रमुख है। मई 1857 में प्रारम्भ प्रथम स्वतंत्रता संग्राम की ज्वाला धीरे-धीरे भारत के विभिन्न क्षेत्रों में भी पहुँच चुकी थी। सितंबर 1858 में अंग्रेजों के विरुद्ध मालवांचल के सोंधवाड़ के आलोट की कलस्या तहसील के अमरजी-अभयजी, आलोट की समियत खां, फरीद खां, माहिदपुर के हीरासिंह जमादार, करनाली के बापू खां आदि के नेतृत्व में 1857 की क्रांति को अपने क्षेत्रों में आगे बढ़ाया था। आलोट की कलस्या तहसील का भी विस्तृत इतिहास है। कलस्या, आलोट और महिदपुर के मध्य स्थित है। कुषाण काल से लेकर परमार काल तक के मन्दिर एवं मूर्तियों के अवशेष आज भी यहां मिलते हैं। 1857 की क्रांति में अंग्रेजों के विरुद्ध सोंधवाड़ के वीरों ने अपना पराक्रम दिखाया था। दिल्ली और आगरा को जाने के लिए इसी क्षेत्र के मार्गों का उपयोग किया जाता था।

अमर सिंह सहित सभी क्रांतिकारियों को नियंत्रित करने के लिए फरवरी 1859 में जावरा के नवाब और अंग्रेज अफसर हेमिल्टन ने एक योजना के लिए मिलने का निर्णय किया। क्रांतिकारियों ने आलोट समेत पाटन, गंगधार और ताल पर अपना एकाधिकार कर लिया और कलस्या सहित समस्त सोंधवाड़ की धरती अमरसिंह और उनके क्रांतिकारियों का गढ़ बन गयी थी।

1 सितम्बर, 1858 को सोंधवाड़ के क्रांतिकारियों ने भारी संख्या में एकत्र होकर महुबी में अंग्रेजों के विरुद्ध एक लूट की योजना को अंजाम दिया। सन् 1857 की क्रांति से बौखलाई अंग्रेज सरकार ने नवम्बर 1858 में ईस्ट इंडिया कंपनी से भारत का शासन अपने हाथों में ले लिया। अंग्रेजों के पिट्ठू बनी रियासतों को अधिक अधिकार दिये किन्तु दूसरी ओर सोंधवाड़ सहित कलस्या में क्रांतिकारी गतिविधियाँ तेजी से आगे बढ़ रही थी। क्रांतिकारियों को कुचलने के उद्देश्य से अंग्रेजों की सेना के 3 से 4 हजार सैनिकों के एक दल ने गंगधार की ओर कूच किया, जिसका नेतृत्व जनरल ह्युरोज और बटन कर रहे थे किन्तु अंग्रेजों की सेना के वहां पहुँचने से पहले ही क्रांतिकारियों का समूह वहां से सुसनेर की ओर आगे बढ़ गया था और अंग्रेजी सेना को खाली हाथ लौटना पड़ा।

"पाटन का पटवारी लुट्या,
हीरा लुट्या व्यापारी हो।"

जनवरी 1859 में कलस्या के क्रांतिकारी अमर सिंह के नेतृत्व में झालावाड़ के वकील रामदयाल को इन्दौर की यात्रा के समय डग-गंगधार में लूट लिया था। जिसको कलस्या में ऊपर बताए लोकगीत के रूप में अभी भी गाया जाता है।

गाँव लुटया, खेड़ा लुटया और लुटया देवास खजाना,
गाँव डराया, शहर डराया और डराया देवास नवाब।

1857 की क्रांति के समय अंग्रेजों के साथ-साथ सामंतवादी रियासतों के विरुद्ध भी क्रांतिकारियों ने विद्रोह किया। कलस्या के अमर सिंह जी ने अपने दल-बल के साथ आलोट परगने, वर्तमान में देवास की पाती के खजाने पर कब्जे की योजना से शिप्रा के तट पर पड़ाव डाला और वहां के तहसीलदार को सूचना पहुंचाई। इसके बाद तहसीलदार की विनती पर भोजखेरी जागीरी के ठाकुर ने बीच में पड़कर समझौता कराया। समझौते के कारण अमरसिंह जी ने खजाने से हर्जाने के रूप में पर्याप्त राशि प्राप्त की थी। इस समझोते के कारण अंग्रेजों के द्वारा भारी रोष प्रकट किया गया तथा देवास और उसके आसपास की रियासतों को आदेश दिया कि किसी भी तरह से अमरसिंह जी को अपने नियंत्रण में लें। अमर सिंह जी के इस पराक्रम को भी लोकगीत और जनश्रुतियों में बताया जाता है।

जनवरी 1859 तक आते-आते अमरसिंह और उनके क्रांतिकारी साथियों का प्रभाव बढ़ता जा रहा था। रियासतों की सीमाओं के भीतर भी विद्रोह लगातार बढ़ रहा था। ऐसे में विद्रोह की आग को ठण्डा करने और अमरसिंह और उनके साथियों को नियंत्रित करने के लिए अंग्रेजी सेना के अफसर रिजिडेण्ट हेमिल्टन को मोर्चे पर भेजा गया। हेमिल्टन ने नवाब बहादुर चंद को जावरा के सीमा क्षेत्र का शासन सौंप दिया और अमरसिंह सहित अन्य क्रांतिकारियों को पीछे हटना पड़ा। किन्तु अमरसिंह जी के द्वारा प्रज्वलित क्रांति की आग धीरे-धीरे फैलती जा रही थी। समूचे सोंधवाड़ ने अमरसिंह को अपना नेता मान लिया गया और उनके साथ अंग्रेजों और सामंतों के विरुद्ध उठ खड़ा हुआ। अंग्रेजी शासन को यह बिल्कुल भी रास नहीं आ रहा था क्योंकि समय के साथ क्रांति की अग्नि चारों ओर जल रही थी जिसके कारण उसे नियंत्रित करना अत्यंत कठिन होता जा रहा था।

अमर सिंह सहित सभी क्रांतिकारियों को नियंत्रित करने के लिए फरवरी 1859 में जावरा के नवाब और अंग्रेज अफसर हेमिल्टन ने एक योजना के लिए मिलने का निर्णय किया। क्रांतिकारियों ने आलोट समेत पाटन, गंगधार और ताल पर अपना एकाधिकार कर लिया और कलस्या सहित समस्त सोंधवाड़ की धरती अमरसिंह और उनके क्रांतिकारियों का गढ़ बन गयी थी। क्रांतिकारियों के एकाधिकार को समाप्त करने और सोंधवाड़ क्षेत्र को अपने अधिकार में लेने के लिए अंग्रेज सरकार ने जावरा नवाब मोहम्मद खां को मालवा की समस्त सेनाओं का सेनापति घोषित कर दिया और जावरा के सीमावर्ती क्षेत्रों में क्रांतिकारियों के विरुद्ध युद्ध प्रारंभ किया। जिसके अंतर्गत बनसिंह और नरेला क्षेत्र में अमरसिंह और उनके क्रांतिकारी साथियों को नियंत्रित करने के लिए आक्रमण किया गया। मालवा की देवास, इन्दौर, मन्दसौर और झालावाड़ जैसी प्रमुख रियासतें अंग्रेज सरकार की सामंती शक्तियों के रूप में कार्य रही थीं।

'चार रियासत की फोजां पड़ी, लड्या उगाड़ी छाती।
अणी मालवा की जमीन के कारण
कोई शीश काट दीना।
सोना का तो छोगा मेल्या, खूब बजाई तलवार।
ठिकाना कलस्या के खेड़े शूरा वया
अभयसिंह जी का जाया।
धन्य-धन्य हो अमरसिंह जी की माता,
थणे अमरसिंह जी जाया।
राजा सा. का कोयरसिंह जी करता है
दौरा फिरता है घोड़ा।'

कचनारा गांव में क्रांतिकारियों और सामंती सेना के बीच भीषण युद्ध प्रारंभ हुआ। अमरसिंह समेत सभी क्रांतिकारियों ने शत्रु सेनाओं का डटकर सामना किया। जिसके कारण शत्रु सेनाओं को अपने अनेक सैनिकों को खोना पड़ा। अमरसिंह भी युद्ध भूमि में अपना पराक्रम दिखा रहे थे। किन्तु क्रांतिकारियों की तुलना में सामंती सेनाबल अधिक था जिसके कारण क्रांतिकारियों की शक्ति शीण होती जा रही थी। अमरसिंह रणभूमि को छोड़कर जाने को कतई तैयार नहीं थे और ना ही वे अंग्रेजों के हाथ आने वाले थे। युद्धभूमि में युद्ध करते हुए अपने प्राणों की आहुति के लिए वे तत्पर थे और उन्होंने अंग्रेजों के हाथ आने के बजाए वीरगति को चुना और कचनारा के समीप सर्वप्रथम अपने घोड़े का बलिदान किया और बाद में स्वयं के सिर को धड़ से अलग कर वीरगति को प्राप्त हो गए। कचनारा के उस भीषण युद्ध को सोंधवाड़ी भाषा में गीत के द्वारा बताया जाता है।

भारत की स्वतंत्रता के लिए इसी प्रकार अमरसिंह और उनके जैसे अनेक क्रांतिकारी साथियों ने अपने प्राणों की आहुति दी है। उन महान क्रांतिकारियों को लोकदेवताओं के रूप में भी पूजा जाता है। उनके द्वारा किये गए कार्यों को लोकगीत और लोकभाषा और कविताओं के रूप में आने वाली पीढ़ियों को बताया जाता है। उनके पराक्रम की गाथाओं को जन-जन तक पहुँचाया जाता है जिसे सुन आने वाली पीढ़ी उनसे प्रेरणा लेकर राष्ट्रहित और जगत कल्याण के कार्यों के लिए प्रेरित हो सकें। 1857 की क्रांति ने भारत के प्रत्येक क्षेत्र में स्वाधीनता के कार्य की प्रेरणा दी और स्वतंत्रता के आंदोलन को जन-जन तक पहुँचाया। भारत हमेशा अपने वीर नायकों का ऋणी रहेगा।

महान क्रांतिकारी
महाराणा बख्तावरसिंह

धार से 30 किमी दूर अमझेरा में तब बख्तावरसिंह का राज्य था। यहां फौजी इकट्ठा हो गए। राजा ने सिपाहियों के साथ छावनी जाकर आग लगा दी और यहां से अंग्रेजों को भागने पर मजबूर कर दिया। इस छावनी पर कब्जा करके सारा धन व हथियार लूट लिए। 10 अक्तूबर, 1857 को छावनी पर पुनः हमला करके छावनी कब्जे में कर ली। उन्होंने मानपुर-गुजरी ब्रिटिश सैन्य छावनी पर कब्जा करके कमांडर कर्नल लिंडस्ले एवं विशेष तोपों के साथ तैनात कैप्टन केंटीन एवं अश्वारोही सेना के प्रभारी जनरल क्लार्क को पराजित कर सैकड़ों ब्रिटिश सैनिकों को मौत के घाट उतार दिया।

• अरुण सपकाले

महाराणा बख्तावरसिंह मध्यप्रदेश के धार जिले के अमझेरा कस्बे के शासक थे जिन्होंने 1857 के स्वतंत्रता संग्राम में मध्य प्रदेश में अंग्रेजों से संघर्ष किया। लंबे संघर्ष के बाद छलपूर्वक अंग्रेजों ने उन्हें कैद कर लिया। 10 फरवरी, 1858 में इंदौर के महाराजा यशवंत चिकित्सालय परिसर के एक नीम के पेड़ पर उन्हें फांसी पर लटका दिया। उनका परिवार रिंगनोद किले में जाकर रहने लगा जो अमझेरा का दूसरा किला था। अमझेरा के आखिरी शासक राव लक्ष्मण सिंह जी राठौड़ थे। ठा. दीप सिंह जी छड़ावद के पुत्र थे। रानी भटियानी जी जो रिंगनोद किले में रहती थी उन्होंने लक्ष्मण सिंह जी को दत्तक लिया। राव लक्ष्मण सिंह जी अमझेरा राज्य के आखिरी शासक थे जहां उनका वंश छड़ावाद जागीर के रूप में मिलता है। मध्य प्रदेश सरकार ने अमझेरा स्थित महाराणा बख्तावरसिंह के किले को राज्य संरक्षित इमारत घोषित किया है जो जिला मुख्यालय से 27 किमी इंदौर-अहमदबाद राज्य मार्ग पर है। अंग्रेजों की दमनकारी नीतियों के खिलाफ सन 1857 में झांसी-ग्वालियर, उत्तरप्रदेश के विद्रोह की हवा मालवा में भी आ गई। धार से 30 किमी दूर अमझेरा में तब बख्तावरसिंह का राज्य था। यहां फौजी इकट्ठा हो गए। राजा ने सिपाहियों के साथ छावनी जाकर आग लगा दी और यहां से अंग्रेजों को भागने पर मजबूर कर दिया। इस छावनी पर कब्जा करके सारा धन व हथियार लूट लिए। 10 अक्तूबर, 1857 को छावनी पर पुनः हमला करके छावनी कब्जे में कर ली। उन्होंने मानपुर-गुजरी ब्रिटिश सैन्य छावनी पर कब्जा करके कमांडर कर्नल लिंडस्ले एवं विशेष तोपों के साथ तैनात कैप्टन केंटीन एवं अश्वारोही सेना के प्रभारी जनरल क्लार्क को पराजित कर सैकड़ों ब्रिटिश सैनिकों को मौत के घाट उतार दिया।

धार जिले में विन्ध्य पर्वत की सुरम्य श्रृंखलाओं के बीच ऐतिहासिक अझमेरा नगर है। 1856 में यहाँ के राजा बख्तावरसिंह ने अंग्रेजों से खुला युद्ध किया।

- राजा के बढ़ते उत्साह, साहस एवं सफलताओं से घबराकर अंग्रेजों ने एक बड़ी फौज के साथ 31 अक्टूबर, 1857 को धार के किले पर कब्जा कर लिया। नवम्बर में उन्होंने अझमेरा पर भी हमला किया।
- बख्तावरसिंह का इतना आतंक था कि ब्रिटिश सैनिक बड़ी कठिनाई से इसके लिए तैयार हुए पर इस बार राजा का भाग्य अच्छा नहीं था। तोपों से किले के दरवाजे तोड़कर अंग्रेज सेना नगर में घुस गयी।
- राजा अंगरक्षकों के साथ धार की ओर निकल गये पर बीच में ही उन्हें धोखे से गिरफ्तार कर महू जेल में बन्द कर दिया गया और घोर यातनाएँ दी गईं।
- इसके बाद उन्हें इन्दौर लाया गया। अंग्रेजों ने उन्हें गिरफ्तारी के बाद इंदौर में ही एक पेड़ पर फांसी दे दी।

राजा ने 3 जुलाई, 1857 को भोपावर छावनी पर हमला कर अपने कब्जे में ले लिया। इससे घबराकर कैप्टेन हचिन्सन परिवार सहित वेश बदल झाबुआ भाग गया। झाबुआ के राजा के संरक्षण देने से उनकी जान बच गयी। बख्तावर सिंह को पर्याप्त यद्ध सामग्री हाथ लगी। छावनी में आग लगाकर वे लौट आये। उनकी वीरता की बात सुन धार के 400 युवक उनकी सेना में शामिल हो गए पर अगस्त, 1857 में इन्दौर के राजा तुकोजीराव होल्कर के सहयोग से अंग्रेजों ने फिर भोपावर छावनी को नियन्त्रण में ले लिया। इससे नाराज होकर बख्तावरसिंह ने 10 अक्तूबर, 1857 को फिर से भोपावर पर हमला बोल दिया। इस बार राजगढ़ की सेना भी उनके साथ थी। तीन घंटे के संघर्ष के बाद सफलता राजा बख्तावरसिंह को ही मिली। युद्ध सामग्री को कब्जे में कर उन्होंने सैन्य छावनी के सभी भवनों को ध्वस्त कर दिया।

ब्रिटिश सेना ने भोपावर छावनी के पास स्थित सरदारपुर में मोर्चा लगाया। जब राजा की सेना लौट रही थी तो ब्रिटिश तोपों ने उन पर गोले बरसाये पर राजा ने अपने सैनिकों को एक ओर लगाकर सरदारपुर शहर में प्रवेश पा लिया। इससे घबराकर ब्रिटिश फौज हथियार फेंककर भाग गयी। लूट का सामान लेकर जब राजा अझमेरा पहुँचे तो धार नरेश के मामा भीमराव भोंसले ने उनका स्वागत किया। इसके बाद राजा ने मानपुर गुजरी की छावनी पर तीन ओर से हमला कर उसे भी अपने अधिकार में ले लिया। राजा के बढ़ते उत्साह, साहस एवं सफलताओं से घबराकर अंग्रेजों ने एक बड़ी फौज के साथ 31 अक्टूबर, 1857 को धार के किले पर कब्जा कर लिया। नवम्बर में उन्होंने अझमेरा पर भी हमला किया। बख्तावरसिंह का इतना आतंक था कि ब्रिटिश सैनिक बड़ी कठिनाई से इसके लिए तैयार हुए पर इस बार राजा का भाग्य अच्छा नहीं था। तोपों से किले के दरवाजे तोड़कर अंग्रेज सेना नगर में घुस गयी। राजा अंगरक्षकों के साथ धार की ओर निकल गये पर बीच में ही उन्हें धोखे से गिरफ्तार कर महू जेल में बन्द कर दिया गया और घोर यातनाएँ दी गईं। इसके बाद उन्हें इन्दौर लाया गया। अंग्रेजों ने उन्हें गिरफ्तारी के बाद इंदौर में ही एक पेड़ पर फांसी दे दी। इंदौर के केईएच कंपाउंड के पास नीम के पेड़ के नीचे आज भी उनकी प्रतिमा स्थापित है। बख्तावरसिंह ने तात्या टोपे से ही गोरिल्ला युद्ध का प्रशिक्षण लिया था।

वे न केवल वीर थे अपितु वीरों का आदर भी करते थे। उनके पूर्वज मूल रूप से जोधपुर (राजस्थान) के राठौड़ वंशीय राजा थे। मुगल सम्राट जहाँगीर ने उनके वंशजों को अमझेरा का शासक बनाया था। पहले अमझेरा राज्य बहुत बड़ा था, जिसमें भोपावर तथा दत्तीगाँव भी सम्मिलित थे। कालान्तर में अमझेरा, भोपावर और दत्तीगाँव पृथक-पृथक राज्य हो गए। सन् 1857 के प्रथम स्वाधीनता संग्राम के समय अमझेरा के शासक थे महाराणा बख्तावरसिंह। इनके पिता का नाम राव अजीतसिंह और माता का नाम रानी इन्द्रकुँवर था। महाराणा को शिक्षा-दीक्षा एवं अस्त्रों के संचालन का अच्छा प्रशिक्षण दिया गया था। उनके धार तथा इन्दौर के शासकों के साथ अच्छे मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध थे।

आजादी के 75 साल : स्वतंत्रता आंदोलन से जुड़े अनछुए किस्से

किस्सा-1

देश को आजादी भले ही 1947 को मिली लेकिन इंदौर के क्रांतिविरों ने 1857 में ही एक ऐसी लड़ाई अंग्रेजों के खिलाफ लड़ी जिसमें न केवल 35 से ज्यादा अंग्रेज मारे गए बल्कि रेसीडेंसी कोठी भी उनसे खाली करवा ली गई। इतना ही नहीं तीन दिन के लिए

छावनी और रेसीडेंसी क्षेत्र भी आजाद हो गया था। हालांकि बाद में अंग्रेजों की संगठित सेना फिर वापस आ गई और रेसीडेंसी को अपने कब्जे में ले लिया। पूर्व पत्रकार और रिसर्चर मनोज शर्मा, गांधी के मुताबिक 1 जुलाई, 1857 महू से इंदौर आती अंग्रेजी सेना पर सुबह-सुबह किए गए हमले ने सआदत खाँ, राणा बख्तावरसिंह, भागीरथ सिलावट, वंश गोपाल और अन्य साथियों को देश भर में प्रसिद्ध कर दिया था। यहां यह टोली सुबह 8.20 बजे बैंड-बाजों की आड़ में फूलों से ढंककर एक तोप (फतेह मनसूर) लाई। इससे पहला गोला रेसीडेंसी कोठी पर दागा गया। इस हमले को तत्कालीन अंग्रेज अफसर कर्नल ड्यरेंड समझ गया और बाहर समझाने भी आया। लेकिन सआदत खां उसकी धूर्तता समझ गए और जवाबी फायर में उसका एक कान उड़ा दिया। बाकी अंग्रेज अफसर कर्नल टेरवन, कैप्टन लूडो, कैप्टन कीथ, कर्नल स्टूअर्ट सहित अन्य संवाद नगर के बरगद के पेड़ के पास से छुपते हुए सीहोर भाग गए। इधर कोठी को लूट लिया गया। इस लड़ाई में 35 अंग्रेज मारे गए। इसी कारण 3 दिन तक इंदौर भारत का पहला आजाद शहर बना। 4 जुलाई को यहां हमला करने वाले क्रांतिविरों की टोली 9 तोप, ढेरों हथियार, गोला-बारूद व तीन हजार सैनिकों को लेकर देवास की ओर बढ़ गई। एक टुकड़ी दिल्ली चली गई। इधर अंग्रेजों की संगठित सेना ने फिर अपना कब्जा जमा लिया। भागीरथ सिलावट आए भी लेकिन देपालपुर में ही पकड़े गए और उन्हें वहीं सूली पर टांग दिया गया। इस विद्रोह में सहयोग देने के कारण 21 सैनिकों को भी उड़ा दिया गया। 270 वीरों को कालापानी की सजा दी गई। सआदत खां का एक युद्ध सितंबर 1857 में भी हुआ लेकिन इनकी हार हुई। खां जैसे-तैसे बचने में सफल हुए। 1874 में उनकी सूचना किसी ने दी और अंग्रेज 7 जनवरी को उन्हें पकड़ कर इंदौर लाए। अगस्त तक मुकदमा चला। एक अक्टूबर को 1874 की सुबह रेसीडेंसी के बरगद पर उन्हें फांसी दी गई। रेसीडेंसी के आगे और पीएससी कार्यालय के सामने भी सआदत खां की यहां आज भी मजार है। 1947 में जब देश आजाद हुआ तब छावनी क्षेत्र तीन दिन पहले ही खुशियाँ मनाने लगा था। छावनी निवासी स्वरूपचंद्र गुप्ता बताते हैं, अंग्रेज जाने लगे तो उस समय मौसम होली जैसा था। जैसे ही अंग्रेज विदा हुए तो पूरे क्षेत्र में रंग-गुलाल उड़ाया गया, इसलिए छावनी की होली आज भी खास होती है।

किस्सा-2

इंदौर के देवगुराड़िया से लगे ग्राम दुधिया में 1910 में जन्मे क्रांतिकारी चंपालाल वर्मा भी ऐसे ही क्रांतिकारी हुए जिन्होंने कई बार जान-

जोखिम में डालकर क्रांतिकारियों को हथियार और पैसे पहुंचाए। क्रांतिकारी वर्मा (करिवाल) और उनके साथियों ने काकोरी कांड से मिले धन से खरीदे गए हथियारों को मध्य भारत व विदर्भ तक पहुंचाने का काम किया था। 25 साथियों का यह दल आजादी के लिए संघर्षरत था। वर्मा के पुत्र सुरेशसिंह और पोते भगतसिंह बताते हैं कि इनके साथियों में रघुनाथ निमड़ जाट भाई, नारायणसिंह सपूत, कनीराम बड़बड़वाल जाट, लालजी लुहार प्रमुख थे। सोना लूटकर ये पैसा मनीआर्डर से गांधीजी और अन्य नेताओं को भेजते थे। एक बार ये लोग रेसीडेंसी में लूट के लिए जा रहे थे, लेकिन देर हो गई तो आगे जाकर राजबाड़ा में छुपना पड़ा। अंग्रेजों को इसकी जानकारी लगी और उन्होंने फौज को भेजा तो सभी छुपे हुए लोग राजवाड़ा की तीसरी मंजिल से कूदकर भागे। देरी भी इसलिए हुई क्योंकि वे पहले ही देवगुराड़िया में एक सुनार के यहां लूटकर ही आ रहे थे। वर्मा लूट के पैसे से हथियार खरीद कर क्रांतिकारियों को भेजते और बांटते थे। अंग्रेजों में डर पैदा हो इसके लिए एक बार इन लोगों ने 80 बम का मसाला निकालकर एक बम बनाया और फिर उसे कृष्णपुरा पुल पर फेंका। कुछ समय तक उसके निशान थे, बाद में उसकी मरम्मत हो गई। 69 वर्षीय सुरेशसिंह बताते हैं कि राजवाड़ा के पास जहां आज प्रशांत होटल है, वह कभी पिताजी चलाते थे। बाद में जागीरदार को बेच दी थी। तीन बार जेल भी गए, आज भी परिवार के पास जेल की रसीदें रखी हुई है। हालांकि वर्मा के परिवार को मलाल है कि सरकार ने उन्हें कभी याद नहीं किया।

▪ संकलनः हरिनारायण शर्मा

कृतज्ञता के क्रांतिकारी कवि - श्रीकृष्ण 'सरल'

किसी के किए हुए के प्रति आभार प्रकट करने का। ऐसे ही एक कृतज्ञ कवि, चिंतक, लेखक श्रद्धेय श्रीकृष्ण जी 'सरल' हुए हैं जिनका सम्पूर्ण सृजन राष्ट्रीय भावना के ही इर्द गिर्द बुना हुआ है। 1 जनवरी, 1919 को मध्यप्रदेश के गुना जिले के अशोकनगर में जन्मे सरल जी चित्त से तो जितने सरल थे, व्यक्तित्व से उतने ही विराट। उनके व्यक्तत्वि की सरलता का अनुमान इसी बात से लगाया जा सकता है कि वे स्वयं को 'क्रांतिकारियों का चारण' कहलाना अधिक पसंद करते थे।

• दुर्गेश साध

भारत देश बलिदानियों का देश है जिसमें अनेक क्रांतिकारियों, समाज सेवकों ने अपने प्राणों को आहूत किया है। बलिदान सदेह भी होता है और विदेह भी मगर उससे बलिदान की महिमा अपरिवर्तनीय ही रहती है। भारत भूमि वीरोचित भूमि है, जिसमें अनेक वीर पैदा होते रहे हैं। हम सदैव से आक्रांताओं के सायों में सन्निद्ध रहे हैं जिससे हमारा समाज संघर्षशील ही रहा है। आज की पीढ़ी एवं आने वाली पीढ़ियों को यह ज्ञात होना चाहिए कि आज वे जिस परिवेश में स्वतंत्र चित्त से श्वास ले रहे हैं, उनकी हर श्वास उन हुतात्माओं की ऋणी है जिन्होंने अपना तन, मन और धन, यानी सर्वस्व इस राष्ट्र को समर्पित कर दिया।

कृतज्ञता एक आदरेय विशेषण है, कर्त्तव्य भाव है- किसी के किए हुए के प्रति आभार प्रकट करने का। ऐसे ही एक कृतज्ञ कवि, चिंतक, लेखक श्रद्धेय श्रीकृष्ण जी 'सरल' हुए हैं जिनका सम्पूर्ण सृजन राष्ट्रीय भावना के ही इर्द गिर्द बुना हुआ है। 1 जनवरी, 1919 को मध्यप्रदेश के गुना जिले के अशोकनगर में जन्मे सरल जी चित्त से तो जितने सरल थे, व्यक्तित्व से उतने ही विराट। उनके व्यक्तत्वि की सरलता का अनुमान इसी बात से लगाया जा सकता है कि वे स्वयं को 'क्रांतिकारियों का चारण' कहलाना अधिक पसंद करते थे। आपने भारत के स्वतंत्रता संग्राम में भी सक्रिय रूप से भाग लिया और दो बार जेल भी गए। सरल जी का मालवा प्रांत से भी गहरा नाता रहा है।

मध्यप्रदेश की धार्मिक नगरी उज्जैन में आप प्रोफेसर रहे हैं एवं एक शिक्षक के रूप में ही आप राष्ट्र की एकांगी साधना कर साहित्य रचते रहे। साहित्य अकादमी मध्य प्रदेश द्वारा सरल जी की याद में प्रति वर्ष कविता के लिए 'श्रीकृष्ण सरल पुरस्कार' दिया जाता है।

अपने लेखन में प्रमाणिकता लाने के लिए वे अपने महाकाव्य के रचना काल में उन सभी स्थानों पर गए जो कि घटनाओं के साक्षी रहे हैं। इसके लिए उन्होंने भारत के अलावा करीब 15 अन्य देशों की यात्रायें भी अपने निजी व्यय से कीं। इस दौरान उन्होंने लोगों के जीवित संस्मरण एकत्र किए, छायाचित्र सहेजे जो कि निश्चित तौर पर बड़ा ही श्रमसाध्य कार्य है। आपके द्वारा लिखी गई पुस्तकों में से 15 महाकाव्य हैं, जिनमें से अधिसंख्य तो सिर्फ क्रांतिकारियों पर ही लिखे गए हैं। इनमें महान क्रांतिकारी भगतसिंह, सुखदेव, राजगुरु, चंद्रशेखर आज़ाद एवं आज़ाद हिन्द फौज के महाकाव्य विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। दुनिया में इतने अधिक महाकाव्य किसी भी लेखक द्वारा नहीं लिखे गए हैं इसलिए यह एक विश्व रिकॉर्ड है।

नई पीढ़ी को वे अपनी प्रभावी लेखनी से आगाह करते हैं कि केवल कहने-भर से ही कोई कार्य संपन्न नहीं हो जाता, उसके लिए सतत् प्रयत्न एवं कर्म करना ही पड़ता है। हम में से कितने ही लोग ऐसे हैं जो अपने राष्ट्र के लिए कुछ करना तो चाहते हैं मगर कुछ कर नहीं पाते क्योंकि वे अपनी सोच के बने बनाए ढाँचे में स्वयं को आविष्ट किए हुए हैं एवं अपने निजी जीवन की विसंगतियों और आरामदायक वृत्त की परिधि को लांघकर बाहर नहीं आ पाते।

नई पीढ़ी को वे अपनी प्रभावी लेखनी से आगाह करते हैं कि केवल कहने-भर से ही कोई कार्य संपन्न नहीं हो जाता, उसके लिए सतत् प्रयत्न एवं कर्म करना ही पड़ता है। हम में से कितने ही लोग ऐसे हैं जो अपने राष्ट्र के लिए कुछ करना तो चाहते हैं मगर कुछ कर नहीं पाते क्योंकि वे अपनी सोच के बने बनाए ढाँचे में स्वयं को आविष्ट किए हुए हैं एवं अपने निजी जीवन की विसंगतियों और आरामदायक वृत्त की परिधि को लांघकर बाहर नहीं आ पाते। उनके लिए सरल जी कहते हैं-

कहो नहीं करके दिखलाओ,
उपदेशों से काम न होगा,
जो उपदिष्ट, वही अपनाओ,
कहो नहीं करके दिखलाओ।

एक स्थान पर उन्होंने कहा था कि "मैं क्रांतिकारियों पर इसलिए लिखता हूँ, ताकि आने वाली पीढ़ियाँ कृतघ्न (किए गए उपकार को न मानने वाली) न कहलाएँ।" वहीं उनके बारे में आज़ाद हिन्द फौज के कर्नल श्री जी.एस. ढिल्लन जी कहते हैं कि "उनका लेखन किसी ऐतिहासिक दस्तावेज से कम नहीं है। वह नेताजी और आजाद हिन्द फौज का स्थायी स्मारक सिद्ध होगा।" वहीं महान क्रांतिकारी पं. परमानन्द का कथन है- "सरल जीवित शहीद हैं।" पं. बनारसीदास चतुर्वेदी जी ने तो यह तक कहा है कि "बलिदानियों का यदि किसी ने समुचित श्राद्ध किया है तो वे 'सरल' जी ही हैं।" लेखनी के प्रति अपने कर्त्तव्य की बानगी का अनुमान केवल इससे ही लगाया जा सकता है कि बगैर किसी प्रकार की सरकारी सहायता के ही उन्होंने अपनी निजी संपत्तियाँ बेचकर अपनी किताबों का प्रकाशन इसलिए करवाया कि वे अपने पीछे समाज के लिए ये ऐतिहासिक विरासत छोड़कर जा सकें। एक शिक्षक की माली हालत का अनुमान लगाना कोई कठिन कार्य नहीं है। अपनी किताबों के प्रकाशन के लिए उन्हें अपनी धर्मपत्नी के आभूषण तक बेचने पड़े मगर इस कर्मठ कवि ने हार नहीं मानी। उनकी जीवटता एवं राष्ट्रीय आग्रह के फलस्वरूप उन्होंने देशभर में घूम-घूम कर अपनी किताबें स्वयं ही बेच दी थीं। एक अनुमान के अनुसार उस दौरान उन्होंने बिना किसी प्रकाशकीय सहयोग के 5 लाख प्रतियाँ लोगों को समर्पित की थीं और बदले में मिली राशि को भी क्रांतिकारियों के परिवारों को भेंट कर दिया था, जो अपने आप में विलक्षण है। जब उज्जैन में उन्होंने एक कार्यक्रम में कहा था- "प्रकाशक किताबें बेचकर जायदाद बनाते हैं, वहीं मैंने जायदाद बेचकर किताबें बनाई हैं।" इसी एक वाक्य से इस क्रांतिकारी कवि का व्यक्तित्व एवं त्याग समझा जा सकता है।

मैं अमर शहीदों का चारण,
उनके गुण गाया करता हूँ,
जो कर्ज राष्ट्र ने खाया है,
मैं उसे चुकाया करता हूँ।

यह भी एक विडंबना ही है कि एक ओजस्वी राष्ट्रीय कवि एवं स्वतंत्रता संग्राम में सक्रिय होने के बावजूद तत्कालीन सरकारें आपके प्रति उदासीन ही बनी रहीं और आपको कभी स्वतंत्रता सेनानी का दर्जा प्राप्त नहीं हुआ। मगर ऐसे व्यक्तित्व किसी प्रचार एवं उपकार के अभिलाषी नहीं होते। उन्होंने जो किया, जो भी प्रमाणिक लिखा, उसकी अनुगूंज वर्षों तक हमारे मन-मस्तिष्क पर अंकित रहेगी।

राष्ट्रभक्ति की भावना से ओतप्रोत कवि प्रदीप

• राजपाल सिंह राठौर

भारत की स्वतंत्रता के आन्दोलन में स्वत्व का भाव जगाने हेतु कई ऋषितुल्य आत्माओं ने अपना योगदान दिया और उनमें से एक थे 6 फरवरी,1915 को उज्जैन जिले के बड़नगर की माटी में जन्मे रामचंद्र नारायण द्विवेदी जी। बचपन से ही अंग्रेजों की क्रूरता को देखकर व काव्यपाठ में रुचि रखते हुए बड़ा हुआ यह बालक आगे चलकर भारत के इतिहास में कवि प्रदीप के नाम से विख्यात हुआ। उज्जैन जिले के बड़नगर जैसे छोटे से नगर से राष्ट्रभक्ति का भाव लिए वे अपनी पढ़ाई पूरी करने इंदौर व फिर लखनऊ गए। उस समय जब देश में स्वतंत्रता आंदोलन की लपटें तेज हो रही थीं, रामचंद्र जी के भीतर भी उमड़-घुमड़ के एक कवि आकार ले रहा था।

चूँकि उस दौर को वअंग्रेजी हुकूमत के अत्याचारों को उन्होंने देखा था, इसलिए वो सारी भावनाएं उनकी रचनाओं में बहुत मजबूती से संकलित हुईं। पढ़ाई पूरी हुई और भाग्य ने उन्हें मुंबई पहुंचा दिया और वहां से उनके सपनों को पंख लगे। वे विभिन्न काव्य आयोजनों में आमंत्रित किये जाने लगे। उन्हें कई फिल्म निर्माताओं द्वारा गीत लिखने हेतु बुलाया जाने लगा। वे अपनी रचनाओं में राष्ट्रभाव को प्रमुखता से रखते थे।हमारी मातृभूमि पर अंग्रेजी लुटेरों के विरुद्ध संघर्ष चरम पर था और लाखों युवा अपनी जवानी केवल माँ भारती को परतंत्रता की बेड़ियों से मुक्त करवाने में सडकों पर आन्दोलन कर खपा रहे थे, ऐसे समय में अपनी वीर रस से ओतप्रोत कविताओं और गीतों के माध्यम से कवि प्रदीप ने असंख्य देशवासियों के हृदय को झंकृत किया और उनके मन-मस्तिष्क में देशभक्ति की तरंगों को सुनामी में बदल दिया।

"दूर हटो ऐ दुनिया वालों हिंदुस्तान हमारा है" गीत ने उन्हें देशभक्ति गीत के रचनाकारों में अमर कर दिया। यह गीत उस समय क्रांतिकारियों व स्वतंत्रता आन्दोलन से जुड़े प्रत्येक व्यक्ति के होठों पर था। इस गीत के गुनगुनाने से चारों ओर स्वराज की माँग करने वाले युवाओं में एक नए जोश की अनुभूति हो रही थी।इससे क्रोधित होकर तत्कालीन अंग्रेज सरकार ने उनकी गिरफ्तारी के आदेश दिए। इससे बचने के लिए कवि प्रदीप को भूमिगत होना पड़ा। अंग्रेजों के विरुद्ध क्रांति के स्वर को बुलंदी देने और भारत के युवाओं में स्व और स्वाभिमान के भाव को

जागृत करने हेतु उन्होंने बंधन फिल्म के लिए एक गीत लिखा "चल, चल रे नौजवान।" प्रसारित होने पर यह गीत राष्ट्रीय गीत बन गया। सिंध और पंजाब की विधानसभा ने इस गीत को राष्ट्रीय गीत की मान्यता दी और ये गीत विधानसभा में गाया जाने लगा। बलराज साहनी उस समय लंदन में थे, उन्होंने इस गीत को लंदन बी.बी.सी. से प्रसारित कर दिया। अहमदाबाद में महादेव भाई ने इसकी तुलना उपनिषद् के मंत्र 'चरैवेति-चरैवेति' से की। जब भी ये गीत सिनेमा घर में बजता लोग वन्स मोर-वन्स मोर कहते थे और ये गीत फिर से दिखाना पड़ता था।

उन्होंने अपने गीतों से देश के युवाओं में जोश भरने का कार्य किया। उन्होंने जीवन मूल्यों की कीमत पर धन-दौलत को कभी महत्त्व नहीं दिया। उनका मानना था कि 'यदि आपस में हम लोगों में ईर्ष्या-द्वेष न होता तो हम परतंत्र न होते।' स्वदेशी, स्वभाषा और स्वराज को ध्यान में रखकर उन्होंने कई रचनाओं को जन्म दिया। वे जानते थे की देश में स्वराज प्राप्ति के लिए देश के प्रत्येक क्षेत्र में स्व का भाव जागृत हो ऐसी गतिविधियाँ होनी चाहिए। उन्होंने देश के दूसरों लेखकों को एक रास्ता दिखाया। उन्होंने उनका पथ प्रदर्शन किया कि हमें अंग्रेजों को भगाने व स्वराज प्राप्ति हेतु सबके मन में स्वयं की संस्कृति के प्रति अभिमान के भाव का जागरण करना होगा।

1700 से ज्यादा गीत लिखने वाले कवि प्रदीप जी को पूर्व प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी जी के प्रयास से दादा साहब फाल्के अवार्ड से सम्मानित किया गयाबड़नगर जैसे छोटे से नगर से निकलकर देशभर के लोगों की आवाज बन जाना इस बात की पुष्टि करता है कि सबने अपनी ओर से भारत के स्वतंत्रता आन्दोलन में योगदान दिया था। देशभर के छोटे-छोटे गाँवों से लेकर महानगरों तक स्वतंत्रता संग्राम में लोगों ने बढ़-चढ़कर हिस्सा लिया था। यह आन्दोलन देश के प्रत्येक भाग में रहने वाले हर वर्ग का था। उनके लिखे कालजयी गीतों और कविताओं का आकर्षण उस जमाने में भी था, आज भी हैऔर हमेशा रहेगा। स्वतंत्रता के समर में उनके योगदान को देश कभी नहीं भूलेगा। कवि प्रदीप अपनी रचनाओं के माध्यम से हमारे बीच अमर रहेंगे।

जय हिन्द।

जनजाति के स्व के संरक्षक
मामा बालेश्वर दयाल

मामा बालेश्वर ने मिशनरियों के षडयंत्रों के प्रति सजग होकर एवं जनजातीय समुदाय के प्रति संवेदनशीलता के चलते 1937 में झाबुआ जिले में बामनिया आश्रम की नींव रख दूसरा मार्ग स्वीकर किया। मामाजी ने इसी कर्मभूमि से लाखों जनजातीय बन्धु-भगिनियों के जीवन में कल्याणकारी कार्य किए, उन्हें मिशनरियों के कुटिल षडयंत्रों से भी बचाया और उनकी संस्कृति, धर्म और जीवन मूल्यों के स्व का जागरण तथा संरक्षण किया।

• निलेश कटारा

भारत बहुल स्थानीय संस्कृति वाला एक विशाल देश है। यहाँ सब ओर विविधता दिखाई देती है। शहर से लेकर गाँव, पर्वत, वन और गुफाओं तक में लोग निवास करते हैं। मध्य प्रदेश और गुजरात की सीमा पर बड़ी संख्या में भील जनजाति के लोग बसे हैं। ब्रिटिशर्स के साथ ही उक्त क्षेत्र में ईसाई मिशनरियों का आगमन हुआ जो सिद्धांत में सेवा और व्यवहार में धर्मांतरण में लिप्त रहे। इन मिशनरियों ने परोक्ष रूप से भील संस्कृति को नष्ट करने और सनातन धर्म की मूल शाखा से काटने के अनेकों प्रयास किए। जब देश मे क्रांतिकारियों द्वारा स्वाधीनता संग्राम चलाया जा रहा था तब युवा मामा बालेश्वर के सामने दो विकल्प थे। एक तो वह भी प्रत्यक्ष रूप से अंग्रेजों के विरुद्ध आंदोलन करते या दूसरा षडयंत्रो के अंतर्गत धर्मांतरित किए जा रहे जनजातीय समुदाय के 'स्व' का जागरण और संरक्षण करते।

मामा बालेश्वर ने मिशनरियों के षडयंत्रों के प्रति सजग होकर एवं जनजातीय समुदाय के प्रति संवेदनशीलता के चलते 1937 में झाबुआ जिले में बामनिया आश्रम की नींव रख दूसरा मार्ग स्वीकर किया। मामाजी ने इसी कर्मभूमि से लाखों जनजातीय बन्धु-भगिनियों के जीवन में कल्याणकारी कार्य किए, उन्हें मिशनरियों के कुटिल षडयंत्रों से भी बचाया और उनकी संस्कृति, धर्म और जीवन मूल्यों के स्व का जागरण तथा संरक्षण किया।

षड्यंत्र ने और भी सुदृढ किया संकल्प

हालांकि मामाजी का जन्म उत्तरप्रदेश में हुआ किंतु जनजातीय समाज के प्रति संवेदनशीलता और सेवा कार्य में रुचि होने के कारण नियति उन्हें मध्य प्रदेश ले आयी और फिर जीवन भर वे भीलों के बीच काम करते रहे। 1937 में उन्होंने झाबुआ जिले में 'बामनिया आश्रम' की नींव रखी तथा भीलों में व्याप्त कुरीतियों को दूर करने में जुट गये। उनके कार्यों का व्यापक प्रभाव होने लगा। शीघ्र ही भील समुदाय में उनकी स्वीकार्यता बढ़ती गई जिससे भीलों का शोषण करने वाले कुछ दुष्ट जमींदार, ब्याजखोर महाजन और उनका धर्मांतरण करने वाले मिशनरी उनसे क्षुब्ध हो गए।

एक षड्यंत्र के द्वारा मामा बालेश्वर को गिफ्तार कर जेल भेज दिया गया और उन्हें अनेक प्रकार से प्रताड़नाएं दी गई। हालांकि इन प्रताड़नाओं से विचलित होने की बजाए वह अपने संकल्प के प्रति ओर भी दृढ़ हो गए।

सात्विक प्रयासों को शीघ्र मिला जनसमर्थन

कुछ समय बाद एक सेठ ने उनसे प्रभावित होकर 'थान्दला' में उन्हें अपने मकान की ऊपरी मंजिल बिना किराये के दे दी। वह शिक्षा का महत्व जानते थे अतः उन्होंने यहाँ छात्रावास बनाकर जनजाति के विद्यार्थियों के शैक्षणिक विकास की योजना तैयार की। धीरे-धीरे स्थानीय लोगों में उनके प्रति और भी विश्वास जागने लगा। अन्य स्थानीय सक्षम और स्थापित लोगों भी मामाजी से प्रभावित होकर उनके कार्यों में हाथ बटाने लगे। 1937 के भीषण अकाल के बाद ईसाई मिशनरी ने राहत कार्य के नाम पर बड़ी संख्या में जनजातीय समुदाय के धर्मान्तरण की योजना बनाई और उसमें सफल भी होने लगे। यह देखकर मामा जी ने पुरी के शंकराचार्य की लिखित सहमति से भीलों को क्रॉस के बदले जनेऊ दिलवाने का अभियान चलाया। कुछ रूढ़िवादी संस्थाओं ने प्रारंभ में इसका विरोध किया पर मामा जी उस क्षेत्र की वास्तविक स्थिति को अच्छी तरह जानते थे अतः वे इस कार्य में लगे रहे। निषादराज के समय से भीलों के आराध्य रहे भगवान श्रीराम का भव्य मंदिर बनवाने हेतु मामाजी ने सेठ जुगलकिशोर बिड़ला से आग्रह किया तो उन्होंने सहज ही बामनिया स्टेशन के पास पहाड़ी पर एक भव्य राम मन्दिर बनवाया। आज भी बिड़ला परिवार उक्त मंदिर के रखरखाव की व्यवस्था करता है। आश्रम द्वारा एक पत्रिका का प्रकाशन भी किया जाता रहा जिसका छह वर्ष तक मामा जी ने संपादन किया। उनके इन कार्यों से पूरे क्षेत्र में जनजातियों के धर्मान्तरण पर व्यापक रोक लगी और जनजातीय संस्कृति का संवर्धन हो सका।

बामनिया आश्रम से पढ़े अनेक छात्र आज बड़े-बड़े प्रशासनिक पदों पर पहुच पाए हैं। आततायी विधर्मी अकबर के विरुद्ध महाराणा प्रताप के नेतृत्व में धर्मयुद्ध लड़ने वाले वीर सैनिकों के भील वशंजों के बीच बालेश्वर दयाल उपाख्य मामाजी की प्रतिष्ठा देवताओं के समान है। स्थानीय भील समुदाय के मध्य सेवा, समर्पण एवं त्यागमय जीवन से श्री बालेश्वर दयाल इतने लोकप्रिय हो गए कि पूरा समाज उन्हें देवता के समान सम्मान देता है।

जनजाति समाज के घरों में आज भी विराजित है मामा

मामा जी का जन्म 05 सितंबर, 1906 को ग्राम नेवाड़ी (जिला इटावा, उ.प्र.) के एक संपन्न परिवार में हुआ था। उनका देहान्त 26 दिसम्बर, 1998 को आश्रम में ही हुआ। मामा जी के देहान्त के बाद आश्रम में ही उनकी समाधि बनाकर प्रतिमा स्थापित की गयी। मध्यप्रदेश, राजस्थान, गुजरात और महाराष्ट्र के जनजाति बंधु के घरों में आज भी मामा जी की तस्वीर है और वे उन्हें भगवान के रूप में पूजते हैं। हर नया कार्य करने के पूर्व मामा जी की समाधि स्थल पर नारियल फोड़कर अपने कार्य की शुरुआत करते हैं। जनजाति बंधु नया अनाज पकने के बाद अन्न ग्रहण करने से पहले मामा जी की समाधि पर चढ़ाते हैं फिर नया अनाज ग्रहण करते हैं। भीलों के घरों में आज भी मामा जी की तस्वीर है जो उन्हें अपना आदर्श मानते हैं। राजस्थान में आज भी मामा जी के नाम से विद्यालय और महाविद्यालय है।

कूट-कूट कर भरे थे राष्ट्रवादी और क्रांतिकारी भाव

1931 में चंद्रशेखर आज़ाद की मृत्यु के बाद उनकी माँ से मिलने झाबुआ के भाबरा गाँव, यह सोचकर गये कि उनकी माँ अकेली होंगी। वहाँ उनकी मुलाकात आज़ाद के एक बचपन के साथी- भीमा से हुई। भीमा के साथ भाबरा में रहकर काम करने का निर्णय ले लिया। 1932 में झाबुआ जिले के थांदला के एक स्कूल में हेड मास्टर की नौकरी पाकर वहां आ गये। धीरे-धीरे जिले के भीलों के बीच इतने रम गये कि यहीं अपना घर बना लिया और पूरा जीवन बिता दिया। उन्होंने जनजाग्रति के साथ भीलों के अंदर राष्ट्र प्रेम की भावना भी जगाई थी।

मामाजी के बामनिया आश्रम की आज भी है स्वीकार्यता

प्रतिवर्ष तीन बार वहाँ सम्मेलन होता है, जहाँ हजारों लोग एकत्र होकर मामाजी को श्रद्धासुमन अर्पित करते हैं। आज भी जनजातीय समुदाय के लोग साल की पहली फसल का हिस्सा आश्रम को भेंट करते हैं। बामनिया आश्रम से पढ़े अनेक छात्र आज बड़े-बड़े प्रशासनिक पदों पर पहुच पाए हैं। आततायी विधर्मी अकबर के विरुद्ध महाराणा प्रताप के नेतृत्व में धर्मयुद्ध लड़ने वाले वीर सैनिकों के भील वशंजों के बीच बालेश्वर दयाल उपाख्य मामाजी की प्रतिष्ठा देवताओं के समान है। स्थानीय भील समुदाय के मध्य सेवा, समर्पण एवं त्यागमय जीवन से श्री बालेश्वर दयाल इतने लोकप्रिय हो गए कि पूरा समाज उन्हें देवता के समान सम्मान देता है। वे भी उनके साथ चना, जौ और चुन्नी के आटे की मोटी रोटी खाते थे। उनकी सादगी, सदाचार और सहज जीवनचर्या के द्वारा वह भील समाज से इतने एकाकार हो गए कि क्षेत्र के मध्य लोग उन्हें प्यार से "मामा" पुकारने लगे।

भारतीय संस्कृति के अनन्य उपासक विष्णु श्रीधर वाकणकर जी

वाकणकर बाल्यकाल से ही देशभक्ति की भावना से ओतप्रोत थे। आपने नीमच छावनी में चलने वाले राष्ट्रीय आन्दोलन से प्रेरणा प्राप्त की। नीमच में स्व. सेठ नथमल चोरड़िया के नेतृत्व में कांग्रेस स्थापना अवसर पर देशभक्ति गीत गाकर प्रताड़ना सही। आगे चलकर आप 'भारतदल' नामक क्रांतिकारी संगठन के संपर्क में आये। आपने बड़वाह के समीप मोरटक्का में नर्मदापुल को उड़ाने की योजना में भाग लिया। भारत छोड़ो अन्दोलन (1942) के दौरान आपने धार रियासत में कठोर कारावास की यातना झेली।

• पं. कैलाशचन्द्र घनश्याम पाण्डेय

मध्यप्रदेश के नीमच में 04 मई, 1919 को जन्मे वाकणकर का बचपन मन्दसौर में बीता। आपके पिताश्री श्रीधर वाकणकर ग्वालियर राज्य में लोक निर्माण विभाग में ओव्हरसियर के पद पर कार्यरत थे। वाकणकर मूलतः महाराष्ट्र के 'माणगांव' नामक गांव के निवासी थे। यहाँ बहने वाली नदी अत्यन्त घुमावदार होने के करण 'वाकण' कहलाती है। आगे चलकर जब यहाँ के निवासी हिन्दुस्तान में बसे तो उन्होंने अपनी ओळख ''वाकणकर'' बना ली। आपके पूर्वज बालाजी वाकणकर 1802 ई. में वडोदरा आए। महाराजा गायकवाड़ की सैन्य सेवा में पदस्थ होने के बाद 1809 में सखाराम चिमणाजी फणसे के फौज-फाटे के साथ आकर धार रियासत में बस गये थे। चिमणाजी की मृत्यु (05 जनवरी, 1811 ई.) के बाद धार की महारानी मैनाबाई पंवार ने सीताराम वाकणकर को धार संस्थान में कारभारी नियुक्त कर दिया। आगे चलकर इस परिवार के लोगों ने सैन्य व भारतीय संस्कृति की विशिष्ट सेवा कर भारत को गौरवान्वित किया। भारत माता के सुपुत्र डॉ. वाकणकर स्वयं स्वतंत्रता संग्राम सेनानी, कुशल चित्रकार, विश्वस्तरीय शिलाचित्र संशोधक, पुरातत्ववेता, इतिहासकार, कवि, ओजस्वी वक्ता व पर्यटक थे।

वाकणकर बाल्यकाल से ही देशभक्ति की भावना से ओतप्रोत थे। आपने नीमच छावनी में चलने वाले राष्ट्रीय आन्दोलन से प्रेरणा प्राप्त की। नीमच में स्व. सेठ नथमल चोरड़िया के नेतृत्व में कांग्रेस स्थापना अवसर पर देशभक्ति गीत गाकर प्रताड़ना सही। आगे चलकर आप 'भारतदल' नामक क्रांतिकारी संगठन के संपर्क में आये। आपने बड़वाह के समीप मोरटक्का में नर्मदापुल को उड़ाने की योजना में भाग लिया। भारत छोड़ो अन्दोलन (1942) के दौरान आपने धार रियासत में कठोर कारावास की यातना झेली। देश की आजादी के बाद भी आप इसके एकीकरण हेतु जुटे रहे और वर्ष 1960-1961 में ''गोवा मुक्ति महा संग्राम'' में शहीद राजाभाऊ महाकाल जत्थे के साथ गिरफ्तारी दी।

डॉ. वाकणकर 1936 में संघ के संपर्क में आये। आगे चलकर 1950 में संघ के प्रचारक बने। 1963 तक संघ के प्रचारक के रूप में रतलाम व बड़वाह, सनावद आदि में पदस्थ रहे। मध्य भारत में बौद्धिक प्रमुख, संस्कार भारती के महामंत्री, मध्यप्रदेश विद्यार्थी परिषद के आप संस्थापक अध्यक्ष रहे। आप मूलतः चित्रकार थे। आपने चित्रकला-मूर्तिकला की प्रारंभिक शिक्षा दादा त्र्यंबक यावलकर (सुवासरा) से प्राप्त की व बाद में जी.डी. आर्ट की उपाधि मुम्बई से प्राप्त की थी। रोजी-रोटी के लिए आपने प्रारंभिक दिनों में सिनेमा के पोस्टर बनाने का कार्य भी किया। 1954 में जब पं. जवाहरलाल नेहरू ने स्वतंत्र भारत की प्रथम विद्युत परियोजना का शिलान्यास किया तो चम्बल बांध में डूब में आने वाली शैलचित्र पुरासंपदा के सर्वेक्षण कार्य हेतु उज्जैन की प्रख्यात ग्रांड होटल में चित्र बनाकर 300 रु. की रकम जुटाई थी। चित्रकला के बल पर आपने उज्जैन, इन्दौर, खैरागढ़, जयपुर, आस्ट्रिया, रोम, पेरिस, फंकफुर्त आदि अनेक स्थलों पर एकल प्रदर्शनियों का अयोजन किया। वर्ष 1980 के 'सिंहस्थ' के दौरान पर आपने धर्मगंगा प्रदर्शनी का संयोजन किया जिसे आपने अमरीका में ''वसुधैव कुटुम्बकम् कला प्रदर्शनी'' शीर्षक से प्रदर्शित किया। 1984 ई. में आप माननीय योगेन्द्रजी के साथ ''विश्व को भारत की देन'' नामक प्रर्दशनी लेकर अमेरिका गये। भारतीय परंपरागत चित्रकला के विकास हेतु आपने 1958 'भारती कला भवन ललित कला संस्थान' की स्थापना की।

आपने 1952 ई. में ही उज्जैन में ''अखिल भारतीय कालिदास चित्र एवं मूर्तिकला प्रदर्शनी'' की स्थापना की। आप आजीवन इसकी स्थायी एवं स्थानीय समिति के सदस्य रहे।

विक्रम विश्वविद्यालय में जब पण्डित सूर्यनारायण व्यास के प्रयास से 1960 ई. में 'प्राचीन भारतीय इतिहास संस्कृति एवं पुरातत्व' विषय खुला तो वाकणकर ने प्रथम बैच के विद्यार्थी के रूप में प्रवेश लिया। इस समय श्रीमती कृष्णा मित्तल आपकी सहपाठी थीं। डॉ. अमरचंद मित्तल इन दिनों इस विभाग में रीडर हुआ करते थे। मुझे डॉ. वाकणकर अपना गुरुभाई मानते थे क्योंकि मैंने भी डॉ. मित्तल के ही मार्गदर्शन में एम.ए. इतिहास की शिक्षा प्राप्त की थी। आगे चलकर वाकणकर ने प्रख्यात पुरातत्त्ववेत्ता डॉ. हँसमुखलाल धीरजलाल सॉंखलिया 'पद्मभूषण' (डेक्कन कॉलेज पूना) के मार्गदर्शन में 1981 में डॉक्टरेट की उपाधि प्राप्त की।

उन दिनों काँग्रेस की सरकार थी जिसमें संघ के स्वयंसेवकों के साथ भेदभाव किया जाता था। फिर वाकणकर तो स्वघोषित स्वयंसेवक थे। वे उन स्वयंसेवकों में से थे जिन्होंने गणवेश धारण कर स्नातक व स्नातकोत्तर परीक्षाएं उत्तीर्ण की थीं। औपचारिक उपाधि प्राप्त करने के कोई 20 वर्षों पूर्व से ही आप पुरातत्त्व उत्खनन एवं सर्वेक्षण से जुड़े हुए थे अतः आपके पुरातत्त्व व इतिहास के प्रति समर्पण को देखकर डॉ. शिवमंगल सिंह ''सुमन'' ने आपको विक्रम वि.वि. उज्जैन में 1962 में पुरातत्व उत्खनन अधिकारी के पद पर नियुक्त किया।

वाकणकर संघ की आजीवन सेवा करना चाहते थे परन्तु उनके अग्रज लक्ष्मण वाकणकर तथा मधुकर वाकणकर जिन्हें क्रमशः बापू तथा नाना के नाम से जाना जाता था; के आग्रह पर बकायदा संघ से अनुमति लेकर विवाह का निश्चय किया। वर्ष 1963 में अपका विवाह अमरावती के श्री मल्लारी वेणी माधव एवं श्रीमती लक्ष्मी ताटके की सुपुत्री लीला ताटके (27.10.1927) के साथ संपंन्न हुआ। विवाह के पश्चात ये श्रीमती लक्ष्मी वाकणकर हो गईं। इन्हें सभी स्नेह से ''वहिनी'' कहकर पुकारते थे। वहिनी ने दो पुत्रों को जन्म दिया था परन्तु उनकी अल्पायु में ही मृत्यु हो गई। लीला वहिनी संस्कृत में एम.ए. थीं और वे वाकणकर के कट्टर विरोधी डॉ. वि.वि. मिराशी (नागपुर) की शिष्या रहीं। वहिनी ने संघ के एक प्रकल्प राष्ट्र सेविका समिति का दायित्व वर्षों तक निभाया।

डॉ. वाकणकर ने मोड़ी, आवरा, मनोटी, इन्द्रगढ़, महेश्वर, नवडाटोली, कायथा, भीमबेटका, मन्दसौर, आजादनगर, दंगवाड़ा, रूनीजा आदि की प्रचीन बस्तियों का उत्खनन कर मालव ताम्राश्म युगीन सभ्यताओं का पता लगाया। इतिहास का सच जानने के लिए उन्होंने खूब घुमक्कड़ी की। वे छोटे-छोटे गाँवों, खेड़ों से लेकर सरस्वती नदी के उद्गम से लेकर गुजरात तक की 4000 कि.मी. यात्रा पर गये। आपको मालवा से अगाध प्रेम था। मुझे उनके निज सेवक के रूप में कार्य करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। जब प्रिन्स आफ वेल्स म्युजियम, मुम्बई के संचालक पद से डॉ. मोतीचन्द्र सेवानिवृत्त हुए तो इस पद पर कार्य करने हेतु डॉ. वाकणकर को आमंत्रित किया गया था। डॉ. वाकणकर ने प्रत्युत्तर में लिखा कि ''मैं मालवा के ताम्राश्म युगीन इतिहास की खोज में ही जीवन व्यतीत करना चाहता हूँ।''

ऐसा नहीं है कि वे मालवा के पुरातत्त्व से दूर नहीं जाना चाहते थे। शैलचित्रों की खोज में उन्होंने भारत के उत्तर से दक्षिण तथा पूरब से पश्चिम तक की अनगिनत यात्राएँ की। यही नहीं, यूरोप तथा अमेरिका के शैलाश्रय भी घूंद डाले। भारतीय शैलचित्रों की प्राचीनता सिद्ध करने का उन्होंने सर्वप्रथम प्रयास किया। उनकी सबसे बड़ी खोज भीमबेटका के शैलाश्रय हैं जो वर्तमान में यूनेस्को का संरक्षित स्मारक है। अपनी इस महान उपलब्धि पर डॉ. वाकणकर का विनम्र कथन था -''मेरे कारण भीमबेटका को प्रसिद्धि नहीं मिली। वरन् भीमबेटका के कारण मुझे 'पद्मश्री' और भारत को विश्व में स्थान मिला है।''

डॉ. वाकणकर संघ के पहले स्वयंसेवक थे जिन्हें आपातकाल के ठीक दो माह पूर्व भारत सरकार ने 'पद्मश्री' से सम्मानित किया था। मुझे ऐसे महान गुरुवर्य का शिष्य होने का अवसर प्राप्त हुआ, यह पूर्वजन्म का कोई पुण्य ही है। कहा भी गया है-

यह तन विष की वेलरी, गुरु रतन धन खान।
सीस दिए गुरु मिले, तो भी सस्ता जान।।

डॉ. वाकणकर हिन्दू धर्म व संस्कृति के सृजन के प्रति पूर्ण समर्पित थे। विश्व हिन्दू परिषद की धर्म संसद के अहमदाबाद अधिवेशन में उन्होंने इतिहास लेखन की धीमी गति की कटु अलोचना की। देश की प्रचीन बस्तियों के उत्खनन पर जोर दिया और कहा कि धर्म निरपेक्षता का तात्पर्य हिन्दू धर्म उपेक्षा नहीं है। मार्च 1988 में डॉ. वाकणकर विश्व हिंदू सम्मेलन में भाग लेने सिंगापुर गए थे। वहाँ 3 अप्रैल, 1988 को होटल के 26वें माले पर रेखांकन करते-करते इतिहास अन्वेषण करने वाला यह अन्वेषणकर्ता स्वयं अपने रेखाकंन में विलीन हो गया।

वर्ष 1978-79 मैं जब विक्रम कीर्ति मन्दिर उज्जैन में दैनिक दर पर मजदूर था तब मैंने सर्वप्रथम 250 रु. खर्चकर डॉ. वाकणकर के अभिनन्दन ग्रंथ का काम प्रारंभ किया था। यह ग्रंथ 1987 में जाकर प्रकाशित हुआ। तब मेरे वरिष्ठ साथियों ने इसलिए विरोध किया था क्योंकि मैं वाकणकर का शिष्य नहीं था। मैं उनका निज सेवक मात्र था। वे विरोधी लाख-लाख रुपये महिने के प्राध्यापक बनकर सेवानिवृत्त हो गए पर अपने गुरुदेव का स्मृति-ग्रंथ न निकाल सके। मैंने डॉ. वाकणकर शताब्दी वर्ष 2019 में ऐसे विद्वानों को चाँदी के तमगे पहनाकर अभिनन्दन कर दिया क्योंकि 'नईदुनिया' के सम्पादक राहुल बारपुते ने अपने 06, अप्रैल, 1988 के संपादकीय में लिखा था- ''उनकी स्मृति में श्रृद्धांजलि अर्पित करते हुए यह विचार मन में आता है कि उनके कृतित्व का लेखा-जोखा एक संग्रह के रूप में प्रकाशित किया जाना निश्चित ही उचित होगा।''

राष्ट्रप्रेम का दीप प्रज्ज्वलित करने वाले महान स्वतंत्रता सेनानी

माखनलाल चतुर्वेदी

'स्वदेशी, स्वभाषा और स्वातंत्र्य' के लिए माखनलाल चतुर्वेदी जी ने अपनी लेखनी और साहित्य के माध्यम से अपनी भूमिका का सार्थक निर्वाह किया। 1920 में सागर के रतौना में जब आधुनिक क़त्लखाने के द्वारा गौवंश ख़त्म करने की साज़िश अंग्रेजों द्वारा रची जा रही थी तब अंग्रेज सरकार के ख़िलाफ़ मुखर होकर आप अपनी पत्रकारिता के माध्यम से जन-जन की आवाज बने। जिस दौर में अंग्रेजों के ख़िलाफ कोई दबी ज़ुबान से भी बोलने की हिम्मत नहीं जुटा पाता था तब आपने अपने समाचार पत्र के माध्यम से अंग्रेजों से सीधी लड़ाई लड़ी और क़त्लखाने खोलने और भारतीय संस्कृति को नष्ट करने के अंग्रेज़ी सरकार के निर्णय को वापस लेना पड़ा।

• निलेश माहूलीकर

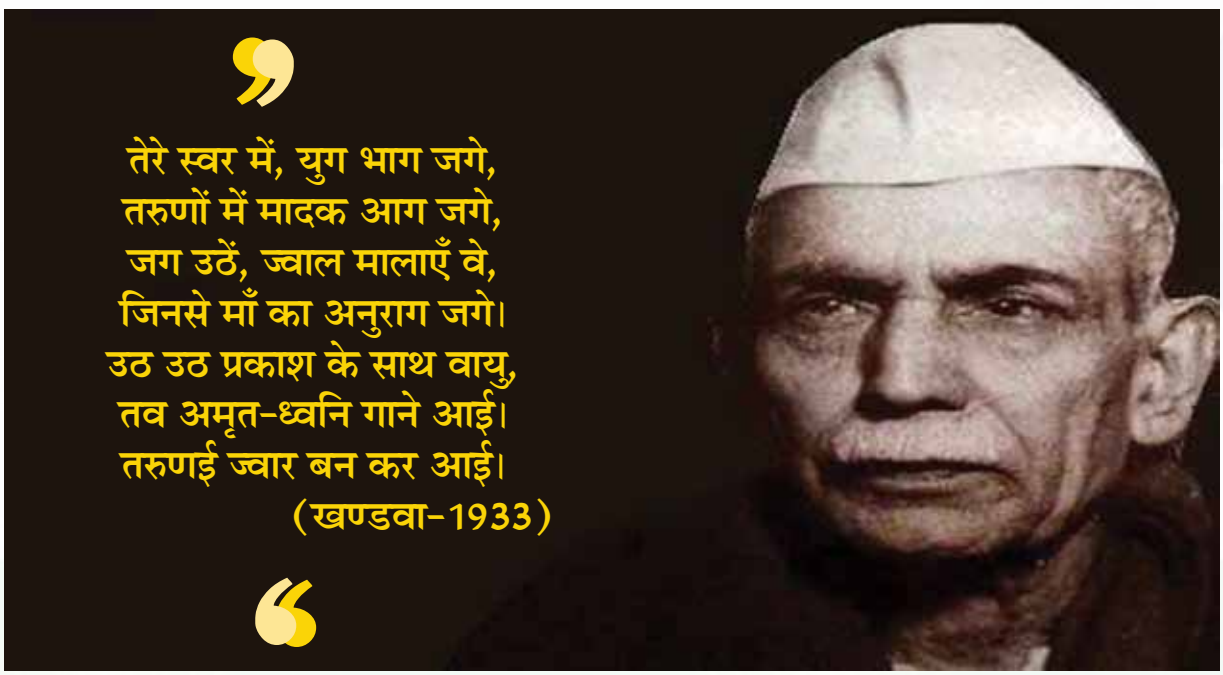

4 अप्रैल, 1889 को होशंगाबाद के बाबई (माखननगर) में जन्मे माखनलाल चतुर्वेदी जी सच्चे देशभक्त थे। अपनी पत्रकारिता एवं साहित्य से राष्ट्रप्रेम का दीप प्रज्ज्वलित करने वाले महान स्वतंत्रता सेनानी माखनलाल चतुर्वेदी भारतीय पत्रकारिता के भी अमिट हस्ताक्षर हैं। एक भारतीय आत्मा के नाम से सम्बोधित किए जाने वाले वे साहित्यकार एवं लेखक हैं जिनका योगदान भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में जन जागरण करने वाले योद्धा के रूप में रहेगा। माखनलाल जी ने कर्मवीर समाचार पत्र के माध्यम से ब्रिटिश सरकार के ख़िलाफ़ मुखर होकर स्वतंत्रता के आंदोलन में युवाओं को देश की स्वतंत्रता के लिए लड़ने का साहस प्रदान किया। इसका परिणाम यह रहा कि युवा पीढ़ी स्वतंत्रता आंदोलन में बढ़-चढ़ कर भाग लेने के लिए प्रेरणा पाती रही।

1908 में माधवराव सप्रे जी के "हिंदी केसरी" द्वारा जब 'राष्ट्रीय आंदोलन एवं बहिष्कार' विषय पर निबंध प्रतियोगिता का आयोजन किया गया तो आपने खण्डवा से एक अध्यापक के रूप में प्रतियोगिया में भाग लिया एवं प्रथम पुरस्कार प्राप्त किया। आपके लेखन कौशल की गहराई एवं राष्ट्रीय आंदोलन में इसकी अपार संभावनाओं को समझते हुए माधवराव सप्रे जी द्वारा 'राष्ट्रीय आंदोलन' में सक्रिय भूमिका के लिए प्रेरित किया। परिणाम यह रहा कि माखनलाल जी सक्रिय रूप से राष्ट्रीय आंदोलन से जुड़ गए और अपने साहित्य और सम्पादन से राष्ट्रप्रेम का जागरण करने लगे। माधवराव जी की प्रेरणा एवं विश्वास का परिणाम यह रहा कि अप्रैल, 1913 में खण्डवा के कालूराम गंगराडे जी द्वारा हिंदी मासिक पत्रिका 'प्रभा' का प्रकाशन प्रारम्भ किया तो इसके सम्पादन का महत्वपूर्ण कार्य आपको मिला। इसके बाद माखनलाल जी ने अध्यापक की सरकारी नौकरी छोड़ दी और पूरी तरह राष्ट्रीय आंदोलन से जुड़कर साहित्य और सम्पादन के लिए समर्पित हो गए।

'स्वदेशी, स्वभाषा और स्वातंत्र्य' के लिए माखनलाल चतुर्वेदी जी ने अपनी लेखनी और साहित्य के माध्यम से अपनी भूमिका का सार्थक निर्वाह किया। 1920 में सागर के रतौना में जब आधुनिक क़त्लखाने के द्वारा गौवंश ख़त्म करने की साज़िश अंग्रेजों द्वारा रची जा रही थी तब अंग्रेज सरकार के ख़िलाफ़ मुखर होकर आप अपनी पत्रकारिता के माध्यम से जन-जन की आवाज बने। जिस दौर में अंग्रेजों के ख़िलाफ कोई दबी जुबान से भी बोलने की हिम्मत नहीं जुटा पाता था तब आपने अपने समाचार पत्र के माध्यम से अंग्रेजों से सीधी लड़ाई लड़ी और क़त्लखाने खोलने और भारतीय संस्कृति को नष्ट करने के अंग्रेज़ी सरकार के निर्णय को वापस लेना पड़ा।

गांधीजी के विचारों से माखनलाल चतुर्वेदी जी बहुत प्रभावित थे। वे अहिंसा से स्वतंत्रता के पक्षधर भी रहे परंतु उन्होंने कभी भी अपने समाचार पत्र कर्मवीर में क्रांतिकारियों के विरोध में कुछ नहीं लिखा। जबलपुर से जब वे कर्मवीर का प्रकाशन कर रहे थे तो उस समय एक क्रांतिकारी माखनलाल जी के पास अंग्रेज पुलिस की गिरफ्तारी से बचने के लिए शरणागत आया। उन्होंने उस क्रांतिकारी की मदद की और स्वयं उसे सुरक्षित रूप से नागपुर तक छोड़ने गए। वहाँ से वह क्रांतिकारी आगे दक्षिण की ओर आगे चला गया। जब उन्होंने ये पूरा प्रसंग महात्मा गांधी जी को बताया तो गांधीजी उनसे नाराज हुए क्योंकि अहिंसा से स्वतंत्रता के पक्षधर होने के कारण वे नहीं चाहते थे कि उनसे जुड़ा कोई व्यक्ति क्रांतिकारियों की मदद करे। पश्चाताप के रूप में माखनलाल जी ने एक दिन का निर्जला व्रत रखा। गांधीजी उनकी भावनाओं को समझ गए और उन्होंने स्वयं उन्हें भोजन करवाकर उनका व्रत तुड़वाया। इस प्रकार हर परिस्थिति में क्रांतिकारियों की मदद करने का उनका भाव क़ायम रहा।

स्वतंत्रता आंदोलन में माखनलाल चतुर्वेदी जी की भूमिका को इसी उदाहरण से समझा जा सकता है कि 1920 के असहयोग आंदोलन और 1930 के सविनय अवज्ञा आंदोलन में महकौशल प्रांत से पहली गिरफ़्तारी दी और जेल भी गए। स्वतंत्रता संग्राम के नायकों में माखनलाल जी का एक अपना स्थान रहा है। माखनलाल चतुर्वेदी जी की पत्रकारिता आज भी युवा पीढ़ी के पत्रकारों के लिए प्रेरणा है। भोपाल का पत्रकारिता विश्वविद्यालय माखनलाल जी के नाम पर ही स्थापित है। माखनलाल चतुर्वेदी जी के साहित्य और पत्रकारिता में स्थापित मानक युवाओं को देशभक्ति की प्रेरणा देने वाले अभिलेख के रूप में स्थापित हैं और युगों तक राष्ट्रीय विचारों की पत्रकारिता के मूल तत्व के रूप में पूजा जाएगा।

मालवा की पत्रकारिता

होलकर रियासत के राज्याश्रय में 6 मार्च, 1849 को इंदौर से मालवा अखबार का प्रकाशन हुआ। यह अखबार रियासत के छापाखाने से प्रकाशित होता था। विद्वान पंडित धर्मनारायण इसके पहले सम्पादक थे। वैसे तो यह द्विभाषी अखबार था, जिसमें हिंदी और उर्दू भाषा का उपयोग होता था लेकिन यह मराठी भाषा में भी प्रकाशित हुआ। राज्याश्रय होने के कारण मालवा अखबार की लेखनी पर कई बंदिश थी और वह राज्य प्रशासन की स्तुति तक ही सीमित था।

• डॉ. मनीष काले

मालवा की पत्रकारिता का इतिहास गौरवशाली रहा है। भारत में पत्रकारिता के 69 वर्ष पूर्ण होने के बाद मालवा में पत्रकारिता का युग आरंभ हुआ। यह एक संयोग ही है कि मालवा क्षेत्र में पत्रकारिता का श्रीगणेश इसी क्षेत्र के नाम से 'मालवा अखबार' से हुआ। वास्तव में यह केवल मालवा क्षेत्र में पत्रकारिता का आरंभ नहीं था बल्कि यह पूरे मध्यप्रदेश में पत्रकारिता की दस्तक थी। मालवा में पत्रकारिता का आरंभ सूचना संचार के उद्देश्य से हुआ लेकिन पत्रकारिता ने आजादी के आंदोलन की मशाल को जलाये रखा। मालवा में पत्रकारिता के आरंभ से लेकर आजादी मिलने तक की बात करे तो ऐसी कई पत्र-पत्रिकाएं हैं, जिनकी भूमिका महत्वपूर्ण रही। मालवा के पहले अखबार 'मालवा अखबार' की सामग्री से यह प्रतीत भी होता है। सन् 1857 के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम के बाद की हलचलों का प्रामाणिक विवरण मालवा अखबार में बिखरा पड़ा है।

होलकर रियासत के राज्याश्रय में 6 मार्च, 1849 को इंदौर से मालवा अखबार का प्रकाशन हुआ। यह अखबार रियासत के छापाखाने से प्रकाशित होता था। विद्वान पंडित धर्मनारायण इसके पहले सम्पादक थे। वैसे तो यह द्विभाषी अखबार था, जिसमें हिंदी और उर्दू भाषा का उपयोग होता था लेकिन यह मराठी भाषा में भी प्रकाशित हुआ। राज्याश्रय होने के कारण मालवा अखबार की लेखनी पर कई बंदिश थी और वह राज्य प्रशासन की स्तुति तक ही सीमित था। 1878 में प्रेस एक्ट लागू होने की कवायद ने अखबार को बगावत करने पर मजबूर कर दिया था। इसके बाद अखबार ने अंग्रेजों के खिलाफ जमकर लिखा, जिसके कारण अखबार को अंग्रेजों के कोप का सामना भी करना पड़ा। मालवा अखबार, अंग्रेजों के आंख की किरकिरी तब बन गया जब उसने लिखा कि नाना साहब किसी भी समय रूसी सेना के साथ मिलकर सतारा, बड़ौदा, नागपुर, झाँसी को फिर से सामंतवादी राज्य बनाना चाहते थे। ये सभी पेशवाओं के पुराने राज्य थे। अखबार ने यह भी लिखा कि इन राज्यों में पेशवाओं का राज्य फिर से स्थापित होगा। इस खबर ने अंग्रेजों की नींद उड़ा दी। इसके बाद तो अंग्रेजों और मालवा अखबार के बीच ठन गयी। अखबार भी अब मुखर हो गया था और सीधे-सीधे अंग्रेजों के खिलाफ लिखते हुए आजादी

माळवाअखबार.
MALWAA KHBAR.

की बात कहने लगा था। अखबार ने एक सपने का जिक्र करते हुए यहाँ तक लिखा- पिछली रात हमने एक सपना देखा, जिसमें एक हिरण ने एक शेर और एक बाघ को अपने कब्जे में कर रखा था।

हालाँकि इंदौर राज्य में प्रेस एक्स लागू नहीं हो पाया था, लेकिन जब होलकर नरेश को अखबार के इन तेवरों का पता चला तो उन्होंने सम्पादक को तीन महीने की कैद का आदेश देते हुए अखबार को बंद करवा दिया था। मालवा अखबार जब तक राज्याश्रय होकर सामग्री का प्रकाशन कर रहा था, तब तक ही वह प्रकाशित होता रहा, लेकिन जैसे ही उसने अंग्रेजों के खिलाफ आवाज उठायी, उसे बंद कर दिया गया। मालवा अखबार ने वैसे तो भारत की स्वतंत्रता के लिये प्रत्यक्ष रूप से कोई आंदोलनकारी खबरों का प्रकाशन नहीं किया, लेकिन प्रेस एक्ट लागू होने की कवायद के बीच ऐसी सामग्री का जमकर प्रकाशन किया, जिसने भारत की आजादी के आंदोलन को हवा दे दी।

प्रभा : हिंदी मासिक पत्रिका प्रभा का प्रकाशन खण्डवा से 7 अप्रैल, 1913 को हुआ। वैसे तो यह साहित्यिक पत्रिका थी, लेकिन इसके लेखों ने आजादी के आंदोलन में लोगों को आंदोलित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी। समाजसेवी कालूराम गंगराड़े पहले सम्पादक थे। श्री गंगराडे पेशे से वकील थे, लेकिन उन्होंने पत्रकारिता के माध्यम से आजादी की लड़ाई में योगदान दिया। पंडित माखनलाल चतुर्वेदी भी इसके सम्पादक रहे। आरंभ में प्रभा के प्रथम पेज पर मां सरस्वती का चित्र मुद्रित होता था, लेकिन कुछ ही अंकों के बाद भारतमाता का चित्र मुद्रित होने लगा था। प्रभा का ध्येय वाक्य भी लोगों को जगाने वाला ही था। प्रभा का ध्येय वाक्य था-

''उठो भाइयो! नींद को छोड़ दो।
जगो, जाल आलस्य का तोड़ दो।
मिटे सर्वदा को अविद्या-निशा।
या निशा सर्व भूतांना तस्यां जागर्ति संयमी।''

प्रभा की खास बात उसके विचारोत्तेजक लेख थे, जो लोगों को वैचारिक स्तर पर आंदोलित करते थे। यही कारण रहा कि प्रभा के लेखों से अंग्रेजी हुकूमत की नींद उड़ जाती थी। फरवरी 1918 तक प्रभा का प्रकाशन खण्डवा से ही होता रहा, लेकिन इसके बाद यह बंद हो गयी। प्रभा जब तक प्रकाशित होती रही, तब तक वह लोगों में आजादी के प्रति और अंग्रेजों के खिलाफ आंदोलित करती रही। जनवरी 1920 में प्रभा वापस से आरंभ हुई, लेकिन इस बार वह कानपुर से प्रकाशित हुई।

नव जीवन : इंदौर से हिंदी मासिक नव जीवन का प्रकाशन 1915 में आरंभ हुआ। श्री द्वारकाप्रसाद सेवक इसके सम्पादक थे। नव जीवन का प्रकाशन वैसे तो 1910 में काशी से हुआ था लेकिन आर्थिक संकट के कारण यह कुछ ही सालों तक प्रकाशित हो सका। 1914 में यह बंद हो गया। एक साल बाद यह इंदौर से प्रकाशित हुआ। इसके सम्पादक का जिम्मा केशवदेव शास्त्री के पास था। स्वदेश, राष्ट्रीयता और स्वधर्म जैसे विषय ही नव जीवन के मूल में थे। नव जीवन के आलेख तो स्वदेश, राष्ट्रीयता से ओत-पोत थे ही लेकिन विज्ञापन में भी इसका ही स्वर झलकता था। विज्ञापन की एक बानगी- नवजीवन- राष्ट्र भाषा हिन्दी का प्रसिद्ध मासिक समाचार पत्र "क्या आपको मालूम है कि स्वदेश और स्वधर्म के प्रति आपके क्या कर्तव्य हैं? क्या आप भारत में एक राष्ट्रीयता के प्रचार के इच्छुक हैं? क्या आप राष्ट्रीय, धार्मिक और सामाजिक उन्नति के उपायों पर देश के सिद्ध महानुभावों के विचार जानना चाहते हैं?" "यदि, हाँ तो आज ही 'राष्ट्र सेवक 'नव जीवन' के ग्राहक बन जाइए।" 'नव जीवन' देश के कठिन किन्तु आवश्यकीय समस्याओं की पूर्ति करने हेतु युगान्तर स्थापित करेगा।

व्यवस्थापक : नव जीवन बीसवीं सदी के दूसरे दशक का एक महत्वपूर्ण समाचार पत्र रहा, जिसने राष्ट्रीयता की अलग जगाए रखी। यहां तक की समाचार पत्र के प्रचार प्रसार में भी राष्ट्रीयता की झलक देखने को मिलती थी।

कर्मवीर : आजादी के आंदोलन के दौर में लोगों में देशप्रेम की अलग जगाने में कर्मवीर का महत्वपूर्ण योगदान रहा। कर्मवीर का सफर काफी लम्बा रहा। कर्मवीर एक साप्ताहिक के रूप में जबलपुर से 17 जनवरी, 1920 में प्रकाशित हुआ, लेकिन यह 1924 में बंद हो गया। 4 अप्रैल, 1925 को कर्मवीर की दूसरी पारी खण्डवा से आरंभ हुई। इसके सम्पादक पंडित माखनलाल चतुर्वेदी थे। प्रथम अंक के 'कर्मवीर का जन्म' शीर्षक से एक टिप्पणी लिखी, जिसमें पंडितजी ने लिखा-

"दोष हो या गुण हमें यह बात स्पष्ट कहनी चाहिए कि राष्ट्र की सेवा के सम्मुख किसी दशा विशेष का कोई पक्ष हमारे पास न होते हुए भी हमारे सामने असहयोग जीवन का एक हिस्सा, जरूरत की आवश्यक पूर्ति और राष्ट्रीयता का एक अग्रगामी स्वरूप है। शासन प्रणाली के पापों और अत्याचारों से झगड़ना किसी भी अन्य देश के हमें पराधीन बनाए रखने वाले मीठे और कड़वे सादे और तीक्ष्ण सब प्रकार के संबंधों को तोड़ना अपनी तथा अपने देश की कमजोरी का अंत करना जो राष्ट्र को हानि पहुंचाकर व्यक्ति को महत्व देती है और जो हमारे आडम्बर अभिमान, आकर्षण और अज्ञान को उभारकर हमें देश की शक्तियों का संयुक्तकारी और निर्माणकर्ता बनाने के बजाए देश के टुकड़े-टुकड़े करने वाला साबित करती है और अपने देश की स्वाधीनता और अपने हृदय के विकास की सबलता को हर स्थान पर आगे बढ़ाना और स्वाधीनता को किसी भी कीमत पर भगवान का स्मरण रखते हुए बेचने को तैयार न होने यही हमारा उद्देश्य है।"

खंडवा से प्रकाशित कर्मवीर में 10 पृष्ठ थे और वार्षिक मूल्य 3 रुपये था। कर्मवीर की अपनी एक पहचान थी। वह सीधे-सीधे स्टेट के खिलाफ लिखने में विश्वास करता था। 9 जून, 1985 को इंदौर दरबार ने कर्मवीर के संपादक महोदय को पत्र लिखा है, जिसमें कर्मवीर की सामग्री की तासीर का पता चलता है।

पत्र में लिखा गया- "आपका पत्र पिछले कुछ समय से स्टेट के विरुद्ध आग भड़का रहा है। उसने स्वच्छंदता से केबिनेट और स्टेट के कतिपय उच्च आफिसरों के विरुद्ध असत्य और शरारत से ओत-प्रोत खबरें प्रकाशित की हैं। ऐसी खबरें प्रकाशित करने वाले व्यक्ति की प्रति-सप्ताह की टीका-टिप्पणियां इस दर्जे की तो हो ही रही हैं, जिन पर फौजदारी की नालिस भी अदालत में दायर की जा सकती है परंतु हमारी यह (अदालती) दिशा संभवतः अप्रत्यक्ष रूप से आपके पत्र का प्रचार बढ़ा दे और चूंकि हमारे पास आप पर प्रभाव डालने के अन्य साधन भी मौजूद हैं, इसलिए हिज हाइनेस की सरकार ने आपके पत्र को रियासत में बन्द कर देना ही निश्चित समझा है। फिर भी आपको गलती सुधारने का मौका दिया जाता है। आप स्टेट में लगातार भ्रांतिपूर्ण सनसनी फैलाने वाली खबरें प्रकाशित किया करते हैं। इससे स्टेट की प्रजा में अनुचित उत्तेजना फैलती और वह हिज हाइनेस की सरकार के प्रति अप्रीति जगाती है। अतः मुझे यह कहने को इजाजत दी गई है कि यदि इस पत्र के प्राप्त होने के एक सप्ताह के अंदर आप अपनी स्टेट संबंधी आलोचना के प्रकाशन के लिए बिना शर्त क्षमा-याचना कर लें और उसे अपने पत्र में प्रकाशित भी कर दें तथा भविष्य में ऐसी गैर जिम्मेदारी और शरारत से भरे लेख प्रकाशित न करने का विश्वास दें, तो हम पत्र की बन्दी का आर्डर जारी नहीं करेंगे।'

'कर्मवीर' का जवाब भी उसकी लेखनी की तरह सीधा और सटीक था। कर्मवीर के जवाब ने इंदौर दरबार की नींद उड़ा दी थी। कर्मवीर के संपादक ने अपने उत्तर में कहा- "इन्दौर दरबार ने यदि 'कर्मवीर' की बातों पर शांति के साथ विचार करके उनकी सच्चाई की छानबीन कर ली हो और वे बातें असत्य पाई गई हों, तो एक तो इसकी सूचना उसी समय संपादकजी को देनी चाहिए थी। इंदौर दरबार की यह दलील, कि अदालती कार्रवाई करने से आपके पत्र का प्रचार बढ़ेगा इसलिए उसे रियासत में बन्द कर देना ही निश्चित समझा है, मेरी समझ में नहीं आया, ऐसी दशा में अदालत में नालिस करना ही सबसे अधिक न्यायोचित होता। कर्मवीर को अपनी सफाई का पूरा-पूरा मौका दिया जाए। इन्दौर दरबार की ये सारी बातें एक तरफा हैं। संभव है न्यायालय के सम्मुख कुछ ऐसी बातें प्रकट होतीं जो इन्दौर मंत्रिमंडल के लिए असुविधाजनक होतीं। शायद इसीलिए मंत्रिमंडल के विद्वानों ने यह मार्ग ग्रहण किया हो। कर्मवीर का निषेध दमन का ही एक रूप है।''

खंडवा के डिप्टी कमिश्नर मि. स्मेली ने कर्मवीर के वर्तमान संपादक पं. सिद्धनाथ माधव आगरकर को दो नोटिस दिए। एक नोटिस द्वारा आपसे कर्मवीर प्रेस और पत्र का नया डिक्लेरेशन जारी करने और दूसरे नोटिस द्वारा कर्मवीर प्रेस आर पत्र के नाम 500-500 सौ रुपए की दो जमानतें दाखिल करने की मांग की गई। श्रीयुत आगरकर जी प्रेस आर्डिनेंस के अनुसार, जमानतें देकर पत्र निकालने की नीति को कांग्रेस की प्रतिज्ञा के प्रतिकूल समझते थे। अतएव उन्होंने लिखा 'जब तक भारत सरकार प्रेस के काले कानून को उठा नहीं लेती तब तक कर्मवीर के प्रकाशन को स्थगित रखने का निश्चय किया है।' 1931 में माखनलालजी ने फिर से कर्मवीर की कमान अपने हाथों में ली। 1959 में माखनलाल चतुर्वेदी ने 'कर्मवीर' को अलविदा कहा। इसके बाद इसकी कमान उनके छोटे भाई बृजभूषण चतुर्वेदी के हाथों में आ गई। 1977 तक कर्मवीर का प्रकाशन होता रहा। इसके बाद कर्मवीर जैसी पत्रिका की डगर कठिन रही। 1997 में विजयादशमी से श्रीधर ने कर्मवीर को भोपाल से फिर निकालना शुरु किया। कर्मवीर का सफर आज भी जारी है।

मध्य भारत : खण्डवा से मध्य भारत का प्रकाशन आरंभ हुआ, जिसके सम्पादक सिद्धनाथ माधव आगरकर थे। यह एक साप्ताहिक समाचार पत्र था, जिसने भी आजादी के आंदोलन को हवा देने का काम किया। अपनी प्रखर लेखनी के कारण यह पत्र अंग्रेजों के आंखों की किरकिरी बना रहा। आजादी की अलख जगाने वाले लेख प्रकाशित करने के कारण अंग्रेजों ने इसके प्रसार पर रोक लगा दी थी। भोपाल सहित अन्य राज्यों में यह प्रवेश नहीं कर सकता था। प्रतिबंधों के चलते ही मध्य भारत को आखिरकार बंद करना पड़ा।

लोकमत : दैनिक समाचार पत्र लोकमत का प्रकाशन वैसे तो जबलपुर से हुआ लेकिन इसका इंदौर संस्करण भी प्रकाशित हुआ। इसके सूत्रधार हिंदीसेवी सेठ गोविंददास थे, जबकि संपादन का जिम्मा संभाला पंडित द्वारकाप्रसाद मिश्र थे। यह बारह पृष्ठ का अखबार था जो 18 फरवरी, 1930 को प्रकाशित हुआ, जिसकी लेखनी ने अंग्रेजों की नाक में दम कर दिया था। इसके चार संस्करण निकलते थे। पहला इंदौर-इटारसी संस्करण, दूसरा जबलपुर संस्करण, तीसरा इलाहाबाद-बिलासपुर संस्करण और चौथा नागपुर संस्करण। लोकमत वास्तव में राष्ट्रीय आंदोलन का प्रखर प्रवक्ता था। यही कारण था कि इस समाचार पत्र ने कदम-कदम पर अंग्रेजी हुकूमत के हाथों प्रताड़ना झेली। लोकमत की लेखनी में राष्ट्रीयता का पुट स्पष्ट रूप से झलकता था। स्वतंत्रता आंदोलन के बारे में लोकमत द्वारा लिखे गए आलेखों को लोग इतना पसंद करते थे कि इसकी प्रसार संख्या 15 हजार के पार हो गई थी। पत्रकारिता के उस काल की बात करें तो यह अपने आप में एक अनोखी घटना थी और इससे यह भी सिद्ध होता था कि लोकमत वास्तव में जनता का प्रतिनिधित्व कर रहा था। लोकमत ने 19 फरवरी, 1931 के अंक में भगत सिंह के फांसी के मुकदमे की सुनवाई को इस तरह से प्रकाशित किया गया कि लोग अंग्रेजी हुकूमत के खिलाफ आंदोलित हो गये। अंग्रेजी हुकूमत के कड़े प्रतिबंधों की परवाह किये बिना लोकमत सामग्री का प्रकाशन किया करता था। इससे यह स्पष्ट होता है कि लोकमत भारत को आजाद कराने के लिये प्रतिबद्ध था। महात्मा गांधी एवं लॉर्ड इरविन के बीच की भेंट वार्ता हो अथवा गोलमेज सम्मेलन, तमाम ज्वलंत मुद्दों पर लोकमत ने दो टूक प्रतिक्रिया दी, जो अंग्रेजी हुकूमत को उखाड़ फेंकने के लिए मील का पत्थर साबित हुई। लोकमत ने न केवल आजादी के लिये अपनी लेखनी चलायी बल्कि देश को कई दिग्गज पत्रकार भी दिये। सत्यकाम विद्यालंकार, कुलदीप सहाय, हुक्मचंद नारद, देवीदयाल चतुर्वेदी जैसे कई पत्रकार लोकमत की ही देन थे। देवीप्रसाद चतुर्वेदी बाद में हिंदी की समकालीन पत्रिका सरस्वती के संपादक रहे और नारदजी ने पत्रकारिता में भारत भर में नाम कमाया।

स्वराज्य : वरिष्ठ पत्रकार सिद्धनाथ माधव आगरकर ने खण्डवा से स्वराज्य का प्रकाशन किया जो कि एक साप्ताहिक समाचार पत्र था। इसका प्रकाशन 1931 में हुआ। विक्रम प्रिंटिग प्रेस की स्थापना करने के साथ ही आगरकर ने स्वराज्य का प्रकाशन आरंभ किया। स्वराज्य जैसा नाम से ही सिद्ध होता था कि यह प्रखर आलेखों वाला पत्र था, जिसका नाम चुनिंदा समाचार पत्रों में शामिल किया जाता था। इसकी लेखनी उच्च कोटी की थी और लोगों को आजादी के लिये आंदोलित भी करती रही। कई बार स्वराज्य को अपनी तीखी लेखनी के कारण ही अंग्रेजों के अत्याचारों का सामना करना पड़ा। आर्थिक संकट और अंग्रेजों की दमनकारी नीतियों के बाद भी स्वराज्य का प्रकाशन जारी रहा। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भी कुछ दिनों तक स्वराज्य का प्रकाशन होता रहा।

प्रजा मंडल पत्रिका : 26 जनवरी, 1940 को इंदौर से साप्ताहिक प्रजा मंडल पत्रिका का प्रकाशन शुरु हुआ। इसके संपादन का दायित्व बैजनाथ महोदय और कृष्णकांत व्यास ने संभाला था। यह इन्दौर राज्य प्रजा मंडल का मुख पत्र था। इसकी खास बात यह थी कि इसमें भारत की स्वतंत्रता और तत्कालीन हुकूमत के विरोध में जमकर लिखा जाता था। इसके संपादकीय में कई बार हुकूमत ही निशाने पर रहती थी। सरकार ने इस पर प्रतिबंध लगा दिया था, लेकिन इसके बाद भी यह गुप्त रुप से साइक्लो स्टाइल बुलेटिन के रुप में जारी रहा। लोगों को पढ़ने के लिये इसे दीवारों पर चिपका दिया जाता था। यह पत्रिका वास्तव में स्वतंत्रता की प्रवक्ता थी और अपनी लेखनी से लोगों को आंदोलित कर रही थी। इसके सम्पादकीय में भी स्वतंत्रता आंदोलन को मजबूत करने के स्वर सुनायी देते थे।

आगामी कल : 1942 में खंडवा से एक साप्ताहिक पत्र प्रकाशित हुआ जिसका नाम 'आगामी कल' था। यह स्वतंत्रता आंदोलन का मुखपत्र था जिसमें अंग्रेजी हुकूमत के खिलाफ जमकर लिखा जाता था। खंडवा के जवाहर गंज में आगामी कल का अपना एक प्रेस था और यहां से ही यह हर सोमवार को प्रकाशित होता था। इसकी एक प्रति का मूल्य 2 आना था। वरिष्ठ पत्रकार प्रभागचंद्र शर्मा इसके संपादक थे। इसमें वैसे तो साहित्यिक सामग्री प्रकाशित की जाती थी लेकिन इसकी बेबाक टिप्पणियां लोगों को अपनी ओर आकर्षित करती थी। इन टिप्पणियों में आजादी की अलख जगाने के लिए भरसक प्रयास किए गए। आजादी के आंदोलन में मालवा की पत्रकारिता के योगदान को कम नहीं आंका जा सकता है। अपनी लेखनी के तेज से पत्र-पत्रिकाओं ने आजादी के महायज्ञ में अपनी आहुति दी और इसको लेकर प्रबंधकों और सम्पादकों को जेल भी जाना पड़ा। आजादी की लड़ाई में मालवा की पत्रकारिता ने अपना पत्रकारिता धर्म पूरी ईमानदारी से निभाया। आजादी के इतिहास में पत्रकारिता के योगदान को जब-जब याद किया जाएगा मालवा की पत्रकारिता को याद करना ही होगा। मालवा की पत्रकारिता के बिना पत्रकारिता का इतिहास अधूरा ही होगा।

ताकत वतन की इनसे है
हिम्मत वतन की इनसे है
इज्जत वतन की इनसे है
ये हैं वतन के रखवाले

हजारों स्वतंत्रता सेनानी जिन्होंने अंग्रेजों के विरुद्ध संघर्ष किया उनके नाम जन सामान्य को ज्ञात नहीं हैं। ऐसे लगभग 10450 स्वतंत्रता सेनानियों को 2018 में पेंशन प्राप्त होती थी। इनमें से लगभग 772 स्वतंत्रता सेनानी तो इंदौर में भी थे। हमारे लिए खुशी की बात है कि इंदौर में पांच स्वतंत्रता सेनानी जीवित हैं। आइये कुछ सेनानियों के बारे में जानते हैं।

इंदौर के तीन जीवित स्वतंत्रता सेनानी

• त्रिपुरारीलाल शर्मा

स्वतंत्रता संग्राम सेनानी वह बलिदानी हैं जिन्होंने राष्ट्र को स्वतंत्र करवाने के लिए अपने प्राणों की आहुति दी थी। जिन्होंने अंग्रेजों के शोषण एवं अन्यायपूर्ण राज्य के खिलाफ आवाज उठाई थी एवं लोगों को अंग्रेजों के शोषण के विरुद्ध प्रतिकार करने के लिए जनसामान्य को प्रेरित भी किया था। 1857 के स्वतंत्रता संग्राम की अलख जगाने वाले श्री मंगल पांडे जी से लेकर झांसी की रानी लक्ष्मीबाई, तात्या टोपे जी, नाना फडणवीस जी, राणा बख्तावरसिंह जी, सआदत खां, भागीरथ सिलावट सहित धार की रानी जीजाबाई एवं उनके भाई भोंसले सहित हजारों सैनिकों ने अपने प्राणों की आहुति दी एवं हंसते-हंसते फांसी के फंदे पर चढ़ गए। 1857 के बाद यह स्वतंत्रता का संघर्ष लगभग 90 वर्ष तक चलता रहा एवं लोकमान्य तिलक जी ने "स्वराज हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है" का नारा दिया, श्री गोपाल कृष्ण गोखले जी, गांधी जी, नेहरु जी, नेताजी सुभाष चंद्र बोस व सरदार पटेल जी, राजगोपालाचारीजी, सुशीला नैयरजी, लाल बहादुर शास्त्रीजी, वीर सावरकर जी सहित भगतसिंह, चंद्रशेखर आजाद, सुखदेव, लाला लाजपत राय, बिपिनचन्द पाल, स्वामी दयानंद सरस्वती आदि अनेक स्वतंत्रता सेनानियों के नाम सर्व ज्ञात हैं परंतु हजारों स्वतंत्रता सेनानी जिन्होंने अंग्रेजों के विरुद्ध संघर्ष किया उनके नाम जन सामान्य को ज्ञात नहीं हैं। ऐसे लगभग 10450 स्वतंत्रता सेनानियों को 2018 में पेंशन प्राप्त होती थी। इनमें से लगभग 772 स्वतंत्रता सेनानी तो इंदौर में भी थे। हमारे लिए खुशी की बात है कि इंदौर में पांच स्वतंत्रता सेनानी जीवित हैं। आइये कुछ सेनानियों के बारे में जानते हैं।

श्री नरेन्द्रसिंह तोमर

श्री नरेन्द्रसिंह तोमर का जन्म 4 मार्च, 1923 को हुआ था।

आपकी वर्तमान में उम्र 99 वर्ष हो गई है। श्री नरेंद्रसिंह तोमर स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान अंग्रेजों के विरुद्ध गीत गाया करते थे एवं ओजस्वी वाणी में भाषण देते थे। इस कारण उन्हें इंदौर एवं खरगोन की जेल में अनेक बार बंदी बनाकर रखा गया था। 1940 के दशक में जब भी इंदौर के सुभाष चौक पर किसी राष्ट्रीय नेता के आगमन पर सार्वजनिक व्याख्यान अंग्रेजों के विरुद्ध रखा जाता था तो श्री तोमर अपनी मधुर वाणी में ओजपूर्ण गीतों से जन सामान्य को अंग्रेजों के विरुद्ध जागृत करने का कार्य करते थे। आपके व्याख्यानों से जनसामान्य जोश से भर जाता था। जब तांगे से नेताओं के भाषण के आयोजन की जानकारी दी जाती थी उस समय भी कहा जाता था कि श्री नाथूसिंह तोमर के गीतों को सुनने के लिये आइये।

श्री बसंतीलाल जी पांडेय

क्रांतिकारियों का जन्म वही होता है जहां की भूमि में क्रांतिकारियों के जन्म के बीज आसानी से अंकुरित हो जाते हैं। इंदौर की भूमि इस

मामले में बहुत उर्वरक है।युगों से यहां क्रांतिकारी जन्मते ही रहते हैं। इंदौर के बहुत समीप चंद्रावतीगंज नामक कस्बे में पांडे परिवार रहता है। इस परिवार के अब वयोवृद्ध निन्यानवे वर्षीय श्री बसंती लाल जी पांडे का जन्म चंद्रावतीगंज में ही हुआ था। एक बार वर्ष 1935 में आपका इंदौर आगमन किसी व्यक्तिगत कारणवश हुआ। आपने देखा कि रेलवे स्टेशन के बाहर बहुत अधिक भीड़ थी और वहां महात्मा गांधीजी अपना भाषण दे रहे थे। श्री पांडे जी भी भीड़ में सम्मिलित हो गए। आपने महात्मा गांधी के भाषण को बड़े मनोयोग से सुना एवं दृढ़ निश्चय कर लिया राष्ट्र को स्वतंत्र कराने के लिए कार्य करेंगे। उस समय इंदौर में प्रजामंडल नामक संगठन के सदस्य भारत माता को अंग्रेजों की पराधीनता से स्वतंत्र कराने के कार्य में बड़े जोर-शोर से लगे थे। प्रजामंडल की पत्रिका भी निकलती थी। श्री बसंती लाल जी पांडे ने 800 से अधिक चिट्ठियां अपने हाथों से लिखकर जन जागरण के उद्देश्य से जनता के बीच बांटी। इस कारण से एक बार वह अंग्रेजों की निगाहों में चढ़ गए। अंग्रेजों ने ना केवल उनकी चिट्ठी को पकड़ लिया अपितु पांडेजी को भी पकड़ लिया। अंग्रेज अधिकारियों ने पांडे जी को डराया-धमकाया और प्रताड़ित भी किया। जेल में ले जाने की धमकी दी। मुकदमा चलाने की धमकी दी परंतु इन्होंने अंग्रेज अधिकारी से कुछ बहस कर ली जिसके परिणामस्वरूप अंग्रेज अधिकारी ने नाराज होकर इनकी तरफ निशाना लगाकर गोली चला दी जो इनके चेहरे के पास से निकल गई।

श्री पांडे जी मौका पाकर भाग गए एवं भूमिगत हो गए तथा प्रजा मंडल के माध्यम से कार्य करते रहे। स्वतंत्रता के पश्चात आपके कार्य को आपके संघर्ष को सरकारी मान्यता नहीं मिल सकी, इस हेतु भी पांडे जी ने संघर्ष किया। वे उच्च न्यायालय गए एवं न्यायालय के निर्देश पर भी सरकारी विभाग में 16 साल लगा दिए जांच पड़ताल करने में ही। अंततः बसंतीलाल जी सर्वोच्च न्यायालय गये और सर्वोच्च न्यायालय ने उनके संघर्ष को मान्यता दिलवाई।

श्री रखबचन्द जी बावेल

इंदौर के समीपस्थ राऊ नामक ग्राम में एक और स्वतंत्रता सेनानी श्री रखबचन्दचंद जी बावेल का जन्म 23 नवंबर, 1926 को हुआ था। श्री रखबचन्दजी गरीबी के कारण प्रारंभिक शिक्षा तो प्राप्त नहीं कर सके थे परंतु स्वतंत्रता के पश्चात श्री रखबचन्दजी ने हिंदी में विशारद की उपाधि प्राप्त की। आपने वर्ष 1942 में गांधीजी के करो या मरो आंदोलन में भाग लिया। उस समय इंदौर में प्रजामंडल नामक संगठन भारत माता को स्वतंत्रता दिलाने

के लिए बहुत सक्रिय प्रयास कर रहा था। प्रजामंडल की पत्रिका को अंग्रेजों ने बैन कर दिया था। परंतु बावेलजी और उनके साथी पत्रिका को हस्तलिखित निकालते रहे और वितरित करते रहे। अंग्रेजों ने इनको पकड़ने के लिए वारंट निकाला तब पकड़ में आने के स्थान पर आप वहां से भाग निकले। आप छह महीने भूखे-प्यासे भूमिगत रहे। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात भारत सेवक समाज के जिला प्रमुख बने, दृष्टिहीन कला संघ में भी कार्य किया एवं जैन महासंघ में भी आपने काफी कार्य किया। 1975 में जब इंदिरा गांधी ने आपातकाल लगाया था उस समय उन्होंने आपातकाल के खिलाफ प्रधानमंत्री कार्यालय को पत्र लिखा था। नतीजे में इंदौर के कलेक्टर कार्यालय से उनसे जानकारी मांगी गई थी। यद्यपि उन्हें पकड़ा नहीं गया था। श्री बावेल जेल तो नहीं गये किंतु स्वतंत्रता के आंदोलन में कार्य करते रहे। भूमिगत रहकर भी अलख जगाते रहे। ऐसे स्वतंत्रता सेनानी को इंदौर कृतज्ञता से याद करते हुए उनका सम्मान करता है।

स्वतंत्रता संग्राम एवं भारतीय सिनेमा

• डॉ. लखन रघुवंशी

वर्ष 1913 में प्रदर्शित हुई पहली भारतीय फिल्म राजा हरिश्चंद के निर्माण के मूल में भी स्वदेशी फिल्म भावना ही थी। इसीलिए अपनी फिल्मों को विदेशों में मिले प्रोत्साहन के बाद भी दादा साहेब फाल्के ने विदेश जाने के अवसर को स्वीकार नहीं किया और अपने ही देश में रहकर फिल्म निर्माण का निर्णय लिया। शुरुआती दौर में धार्मिक महत्त्व की फिल्मों का ही निर्माण हुआ। लेकिन यह कहा जा सकता है कि इस दौर की फिल्मों में प्रतीकात्मक रूप से ब्रिटिश सरकार को अधर्म के रूप में दिखाया।

सिनेमाई गीत और संगीत न केवल मनोरंजन के माध्यम रहे हैं अपितु संघर्ष, स्वतंत्रता और वेदना के साथी भी रहे हैं। सेंसरशिप और अन्य कारणों की वजह से फिल्म निर्देशकों ने कभी भी ब्रिटिश सरकार के विरुद्ध फिल्मों का निर्माण नहीं किया लेकिन अप्रत्यक्ष रूप से ऐसी पटकथाएं

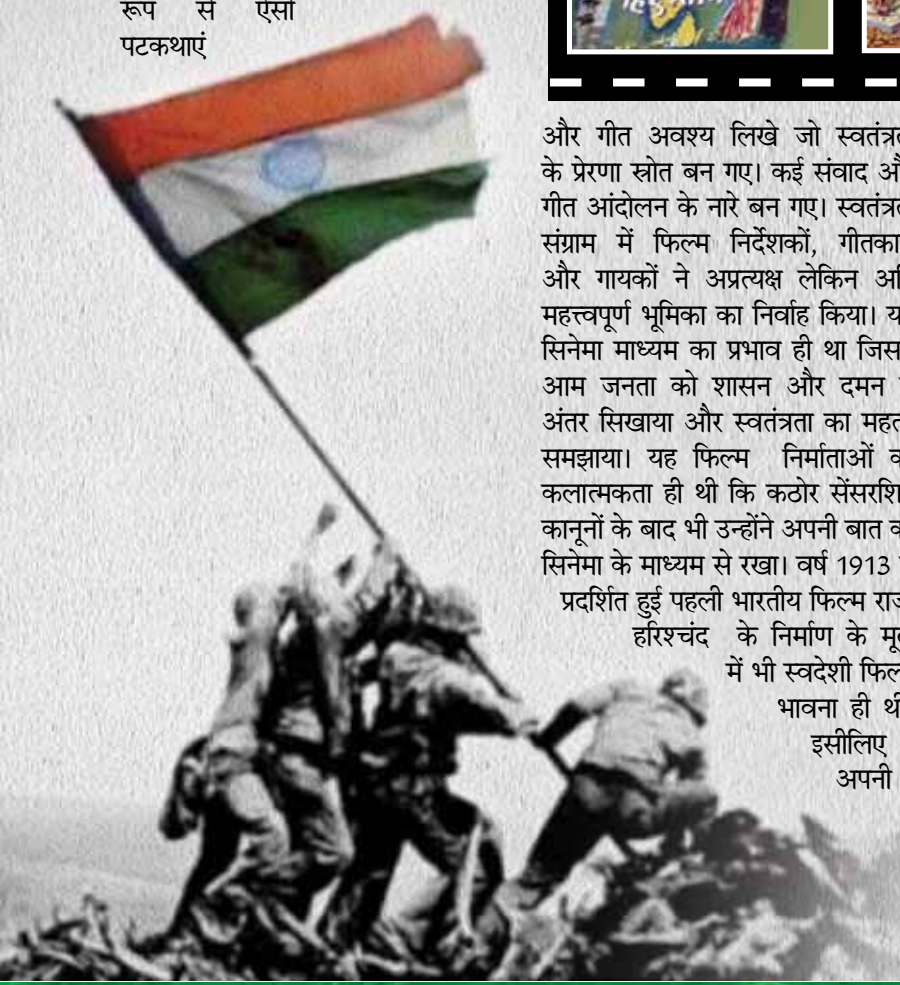

और गीत अवश्य लिखे जो स्वतंत्रता के प्रेरणा स्रोत बन गए। कई संवाद और गीत आंदोलन के नारे बन गए। स्वतंत्रता संग्राम में फिल्म निर्देशकों, गीतकारों और गायकों ने अप्रत्यक्ष लेकिन अति महत्त्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया। यह सिनेमा माध्यम का प्रभाव ही था जिसने आम जनता को शासन और दमन में अंतर सिखाया और स्वतंत्रता का महत्व समझाया। यह फिल्म निर्माताओं की कलात्मकता ही थी कि कठोर सेंसरशिप कानूनों के बाद भी उन्होंने अपनी बात को सिनेमा के माध्यम से रखा। वर्ष 1913 में प्रदर्शित हुई पहली भारतीय फिल्म राजा हरिश्चंद के निर्माण के मूल में भी स्वदेशी फिल्म भावना ही थी। इसीलिए अपनी फिल्मों को विदेशों में मिले प्रोत्साहन के बाद भी दादा साहेब फाल्के ने विदेश जाने के अवसर को स्वीकार नहीं किया और अपने ही देश में रहकर फिल्म निर्माण का निर्णय लिया। शुरुआती दौर में धार्मिक महत्त्व की फिल्मों का ही निर्माण हुआ। लेकिन यह कहा जा सकता है कि इस दौर की फिल्मों में प्रतीकात्मक रूप से ब्रिटिश सरकार को अधर्म के रूप में दिखाया। लेकिन धीरे-धीरे फिल्म कलाकारों ने गीत-संगीत और संवादों के माध्यम से विदेशी सरकार पर कटाक्ष करने शुरु किये। वर्ष 1936 में प्रदर्शित फिल्म अमर प्रेम के एक गीत के बोल हैं हमारा प्यारा हिन्दुस्तान । गीत यह बताता है कि हिन्दुस्तान कोई जमीं का टुकड़ा भर नहीं है जिस पर कोई भी शासन कर ले अपितु यह एक देश है जिसकी अपनी संस्कृति है। ठीक इसी प्रकार 1936 में प्रदर्शित फिल्म जय भारत जिसका निर्देशन होमी वाडिया ने किया था में गीतकार ने लिखा है हम वतन के, वतन हमारा, भारत माता जय, जय, जय।

यह दौर पौराणिक महत्त्व की फिल्मों का था और निर्देशकों ने सामाजिक सुधार से लेकर स्वतंत्रता जैसे विषयों को भी पौराणिक कथाओं के माध्यम से ही दिखाया। यही कारण रहा कि अपनी भूमि को माता की तरह प्रस्तुत किया गया और भारत माता के रूप में प्रतिष्ठित किया गया। 1937 में प्रदर्शित फिल्म समाज पतन में गीतकार ने लिखा है जागो- जागो भारतवासी, एक दिन तुम थे जगत गुरू। इन गीतों के माध्यम से भारत के गौरवशाली इतिहास और प्रतिष्ठा का गुणगान भी किया गया। 1938 में प्रदर्शित हुई फिल्म तूफ़ान एक्सप्रेस के एक गीत के बोल कुछ इस प्रकार हैं- धरती माता, बालक तेरे चरणों में शीष नवाएं। इसी प्रकार 1940 में प्रदर्शित फिल्म वसीयत के एक गीत के बोल हैं- हिंद माता की तुम संतान हो, नौजवानों तुम वतन की शान हो। फिल्म की पटकथा स्वतंत्रता संग्राम पर आधारित न हो लेकिन गीत-संगीत के माध्यम से देशभक्ति और आंदोलन में भाग लेने के लिए प्रोत्साहित करने की भावना है। यही नहीं फिल्मकारों ने स्वतंत्रता सैनानियों के प्रतीकों को भी फिल्मों और गीतों का हिस्सा बनाया। 1940 में प्रदर्शित हुई फिल्म आज का हिन्दुस्तान के एक गीत में देश की महिलाओं को संबोधित करते हुए कहा गया है कि- चरखा चलाओ बहनों, काटो ये कच्चे धागे। चरखा और खादी एक और जहां महात्मा गांधी के प्रतीक हैं वहीं दूसरी ओर गीतकार ने देश की महिलाओं को भी अपनी भागीदारी सुनिश्चित करने का आग्रह किया है।

गांधीजी के स्वदेशी अपनाओ और भारत छोड़ो आंदोलन में महिलाओं ने भी बढ़-चढ़कर हिस्सा लिया था। 1941 में प्रदर्शित हुई फिल्म अमृत के गीतकार ने आग्रह किया है- जागो जवानों, जागो जवानों, नवजुग आया रे। इस दौर की फिल्मों में न केवल आंदोलन और देशभक्ति को सराहा गया अपितु नवभारत की कल्पना को भी साकार करने की बात की गई। इसके साथ ही हिन्दू-मुस्लिम एकता पर भी गीत लिखे गए। कोशिश (1943) में एक गीत के बोल हैं- ऐ हिंद के सपूतों, जागो हुआ सवेरा, हिन्दू हो या मुसलमान, हम सब हैं भाई-भाई। इसी प्रकार वर्ष 1944 में प्रदर्शित फिल्म पहले आप में भी एक गीत है जिसके बोल कुछ इस प्रकार है- हिंदुस्तान के हम हैं, हिंदुस्तान हमारा, हिन्दू-मुस्लिम दोनों की आंखों का तारा। वर्ष 1944 में प्रदर्शित फिल्मभाई के एक गीत में भी एकता की बात की गई। गीत के बोल कुछ इस प्रकार है- हिन्दू, मुस्लिम, सिख, ईसाई, आपस में हैं भाई-भाई। 1943 में शमशाद बेगम ने पूंजी फिल्म में एक गीत गाया जिसके बोल थे- हे माता, अब जाग उठे हैं हम। 1946 में प्रदर्शित फिल्म हमजोली में नूरजहां ने एक गीत गाया जिसके बोल थे- ये देश हमारा, हिंदुस्तान जहां से प्यारा। यह स्वतंत्रता के लिए करो या मरो का दौर था और सिनेमा में भी यह आग्रह बढ़ता ही जा रहा था।

भारत का फिल्म निर्माण उद्योग लाहौर और मुंबई में केंद्रित था और अधिकांश कलाकार लाहौर में काम कर रहे थे जो विभाजन के बाद या तो मुंबई में रह गए अथवा नूरजहां की तरह पाकिस्तान में चले गए। विभाजन की यह पीड़ा स्वतंत्रता के बाद भी फिल्म और गीतों में बनी रही। 1946 में प्रदर्शित हुई फिल्म सोना चांदी में लता मंगेशकर ने भी एक गीत गाया, जिसके बोल थे- प्यारे बापू के चरणों की ले लो कसम, प्यारे-प्यारे तिरंगे की ले लो कसम। अपनी एक्शन फिल्मों के लिए प्रसिद्ध फियरलेस नादिया की फिल्म लुटारू ललना का गीत जुग-जुग चमके हिंद का तारा, झंडा उंचा रहे हमारा आंदोलन का अग्रणी गीत हो गया और सैनानियों के साथ ही बच्चों के बीच भी प्रसिद्ध हो गया। देश भक्ति गीतों में कवि प्रदीप अग्रणी हो गए। उन्होंने कई फिल्मों के लिए गीत लिखे।

1943 में प्रदर्शित फिल्म किस्मत के गीत- आज हिमालय की चोटी से फिर हमने ललकारा है, दूर हटो ऐ दुनिया वालों हिंदुस्तान हमारा है के लिए कवि प्रदीप को काफी प्रशंसा मिली और शीघ्र ही यह दर्शकों के बीच बहुत लोकप्रिय हो गया। 1943 में प्रदर्शित फिल्म मुस्कुराहट का भारत देश हमारा, हरा-भरा हरियाला और 1944 में प्रदर्शित फिल्म चांद का वतन से चला है वतन का सिपाही भी दर्शकों के बीच काफी लोकप्रिय हुए। ठीक इसी प्रकार 1945 में प्रदर्शित नसीब के गीत हम पंछी हैं आज़ाद, हमें कोई पिंजरे में क्यों डाले और इसी वर्ष प्रदर्शित गुलामी के गीत ऐ वतन, मेरे वतन, तुम पर मेरी जान निसार भी देश भक्ति की भावना से ओत-प्रोत थे। इस प्रकार स्वतंत्रता संग्राम को सिनेमाई गीतों ने एक नई आवाज दी। यही नहीं देशभक्ति का यह दौर स्वतंत्रता के बाद भी जारी रहा। 1947 में प्रदर्शित हुई फिल्म जंजीर के गीत नाच रही थी भारत माता, आज़ादी के आंगन में और 1947 में ही प्रदर्शित हुई फिल्म अहिंसा के गीत सदियों से है गुलाम जन्मभूमि हमारी, आज़ाद हैं हम आज से, जेलों के ताले तोड़ दो, अंग्रेजो भारत छोड़ दो भी दर्शकों के बीच काफी लोकप्रिय हुए।

फिल्म निर्देशकों को कई बार कठोर सेंसरशिप के नियमों का भी सामना करना पड़ा। कई फिल्मों का प्रदर्शन रोक दिया गया तो कई फिल्मों को नाम परिवर्तन का आदेश दिया गया। कोहिनूर फिल्म कंपनी की फिल्म भक्त विदुर (1921) का प्रदर्शन यह कहकर रोक दिया कि फिल्म महाभारत के माध्यम से ब्रिटिश शासन की छवि को खराब दिखाती है। परिणामस्वरूप फिल्म को सेंसर बोर्ड ने बड़ी कठिनाई से पास किया। भाल जी. पेंढारकर ने वर्ष 1926 में वंदेमातरम फिल्म कंपनी की स्थापना की ओर 'वंदेमातरम आश्रम' (1926) फिल्म का निर्माण किया, जिसमें ब्रिटिश शिक्षा प्रणाली के दोषों को उजागर किया गया और भारतीय शिक्षा पद्धति पर जोर दिया गया। सेंसर बोर्ड ने फिल्म को प्रतिबंधित कर दिया। तात्कालिन ब्रिटिश सरकार को स्वराज और महात्मा जैसे शब्दों से भी इतनी आपत्ति थी कि शिवाजी के जीवन पर आधारित स्वराज तोरण और संत एकनाथ के जीवन पर आधारित फिल्म महात्मा को भी प्रतिबंधित कर दिया। बाद में स्वराज तोरण उदयकाल के नाम से प्रदर्शित हुई। वहीं महात्मा को धर्मात्मा के नाम से प्रदर्शित किया गया। इस प्रकार सिनेमा ने कभी प्रत्यक्ष तो कभी अप्रत्यक्ष रूप से स्वतंत्रता आंदोलन में अपनी सहभागिता दी और आम जनता को भी स्वतंत्रता के इस संग्राम में भाग लेने के लिए प्रेरित किया।

शिक्षा एवं कौशल संवर्धन के साथ नई पीढ़ी का सर्वांगीण विकास

श्री नरेन्द्र मोदी, प्रधानमंत्री

श्री शिवराज सिंह चौहान, मुख्यमंत्री

उच्च शिक्षा के क्षेत्र में नये युग की शुरुआत

सत्र 2021-22 से राष्ट्रीय शिक्षा नीति लागू करने वाला

मध्यप्रदेश देश का अग्रणी राज्य

राष्ट्रीय शिक्षा नीति के मुख्य बिन्दु

- भारतीय ज्ञान परम्परा का पाठ्यक्रमों में समावेश।
- स्नातक स्तर पर शोध को प्रोत्साहन।
- च्वॉइस बेस्ड क्रेडिट सिस्टम।
- कला, वाणिज्य एवं विज्ञान के विषयों में मिश्रित चयन की स्वतंत्रता।
- व्यावसायिक एवं योग्यता संवर्धन पाठ्यक्रमों में अध्ययन का अवसर।
- इन्टर्नशिप/अप्रेन्टिसशिप/फील्ड प्रोजेक्ट/कम्युनिटी एंगेजमेंट एंड सर्विसेस का प्रथम वर्ष से समावेश।
- SWAYAM/ NPTEL/प्रधानमंत्री कौशल विकास योजना/मुक्त विश्वविद्यालय के माध्यम से व्यावसायिक एवं योग्यता संवर्धन पाठ्यक्रमों में ऑनलाइन अध्ययन की सुविधा।

अकादमिक संरचना का स्वरूप

मेजर विषय	54	क्रेडिट
माइनर विषय	28	क्रेडिट
वैकल्पिक विषय	18	क्रेडिट
कौशल संवर्धन पाठ्यक्रम	12	क्रेडिट
आधार पाठ्यक्रम	24	क्रेडिट
फील्ड प्रोजेक्ट-इंटर्नशिप आदि	24	क्रेडिट
कुल क्रेडिट	160	

- एकल संकायी महाविद्यालयों में बहुसंकायी विषयों के अध्ययन की शुरुआत।
- एन.सी.सी., एन.एस.एस. और शारीरिक शिक्षा को पाठ्यक्रम के रूप में अध्ययन की सुविधा।
- सकल नामांकन अनुपात (GER) में वृद्धि करने का लक्ष्य।
- शिक्षा की पहुंच, समानता और गुणवत्ता पर विशेष ध्यान।
- विद्यार्थियों में रचनात्मक सोच, तार्किक निर्णय एवं नवाचार की भावना को प्रोत्साहन।
- सुगम शिक्षा के लिये डिजीटल शिक्षण को प्रोत्साहन।
- एक विश्वविद्यालय से दूसरे विश्वविद्यालय तथा एक महाविद्यालय से दूसरे महाविद्यालय में स्थानांतरण पर क्रेडिट ट्रांसफर की सुविधा।

"राष्ट्रीय शिक्षा नीति शिक्षा के मूल उद्देश्यों को केन्द्र में रखकर विकसित की गई है। यह नीति हमारी भावी पीढ़ी के कायाकल्प का साधन सिद्ध होगी।"

- डॉ. मोहन यादव
मंत्री, उच्च शिक्षा विभाग

मल्टीपल एंट्री एंड मल्टीपल एग्जिट

प्रथम वर्ष	40 क्रेडिट	सर्टिफिकेट
द्वितीय वर्ष	80 क्रेडिट	डिप्लोमा
तृतीय वर्ष	120 क्रेडिट	डिग्री
चतुर्थ वर्ष	160 क्रेडिट	बैचलर डिग्री विथ रिसर्च

प्रतिवर्ष 40 क्रेडिट अर्जित करना अनिवार्य है।
अंक प्रणाली के स्थान पर अंतर्राष्ट्रीय मानकों के अनुरूप क्रेडिट प्रणाली

"लंबे समय से शिक्षा के क्षेत्र में सुधार की आवश्यकता महसूस की जा रही थी। माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी की दूरदर्शी सोच एवं परिकल्पना पर आधारित राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020, हमारी युवा पीढ़ी को रचनात्मक रूप से शिक्षित और रोज़गार के लिए सक्षम बनाने में मील का पत्थर साबित होगी।"

- शिवराज सिंह चौहान

उच्च शिक्षा विभाग www.highereducation.mp.gov.in /highereducationdeptmp @highereduminmp

कोरोना पर विजय पाना है, टीका जरूर लगवाना है।

स्वराज्य प्राप्ति और भारतीय पत्रकारिता

1 मार्च, 1821 को द बंगाल इवनिंग पोस्ट निकला जिसमें स्वदेशी सूचनाओं पर ही निर्भरता रखी जाए, यह ध्यान रखा गया। विदेशी सूचनाओं का समावेश कम से कम हो तथा भारतीयों की बातों को प्रकाशित किया जाए। सरकार विरोधी होने के कारण संपादक को भारत से निकाल दिया गया। उल्लेखनीय है कि भारतीयता की बात करने वाले संपादक विदेशी थे। 1821 में ही भारतीय समाज में गुलामी के खिलाफ नए प्रकल्पों के साथ राजाराम मोहन राय खड़े हुए।

• डॉ. सोनाली सिंह नरगुन्दे

भारत में स्वदेशी की नींव 1788 को प्रारंभ हुए द एशियाटिक मिरर एंड कमर्शियल एडवरटाइजर के लेख से पता चलती है। लेख में लिखा था कि भारत में मुठ्ठी भर अंग्रेज हैं और शेष जनता यहीं की है। यदि एक-एक भारतीय हम पर अंग्रेजों पर एक-एक कंकड़ भी फेंकें तो हम कहां के रहेंगे? इसके प्रकाशन के बाद ही इसके संपादकों को राजद्रोही माना गया और दंडित किया गया। 1 मार्च, 1821 को द बंगाल इवनिंग पोस्ट निकला जिसमें स्वदेशी सूचनाओं पर ही निर्भरता रखी जाए, यह ध्यान रखा गया। विदेशी सूचनाओं का समावेश कम से कम हो तथा भारतीयों की बातों को प्रकाशित किया जाए। सरकार विरोधी होने के कारण संपादक को भारत से निकाल दिया गया। उल्लेखनीय है कि भारतीयता की बात करने वाले संपादक विदेशी थे। 1821 में ही भारतीय समाज में गुलामी के खिलाफ नए प्रकल्पों के साथ राजाराम मोहन राय खड़े हुए। उन्होंने ना सिर्फ स्वतंत्रता की बात कही बल्कि अपने पत्रों के माध्यम से अनेक सामाजिक मुद्दों में भी जागरूकता का प्रसार किया। सती प्रथा का विरोध करने के साथ ही उन्होंने हिंदुत्व का मजाक उड़ाने वालों को सबक सिखाने के लिए ब्रम्हेनिकल मैगजीन का प्रकाशन प्रारंभ किया। 12 अप्रैल, 1822 को फारसी में मिरात उल अखबार निकाला। इसी के माध्यम से अंग्रेजों के प्रेस आर्डिनेंस के खिलाफ आंदोलन चलाया गया। इस जन आंदोलन की जीत हुई और 1835 में मेटकॉफ ने इस आर्डिनेंस को वापस ले लिया था। 17 मई, 1831 को द एनक्वायरर कोलकाता के युवा बुद्धिजीवियों ने निकाला। इसके संपादक कृष्णमोहन बनर्जी थे। इस पत्र में युवाओं को देश की बातों के प्रति जागरूक करने का काम तार्किक रूप से

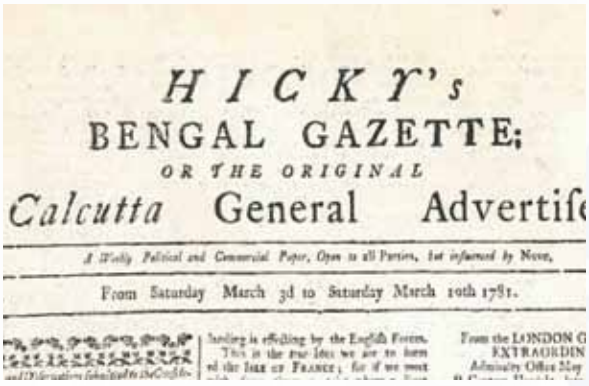
HICKY's
BENGAL GAZETTE;
OR THE ORIGINAL
Calcutta General Advertif
A Weekly Political and Commercial Paper, Open to all Parties, but influenced by None,
From Saturday March 3d to Saturday March 10th 1781.

किया जाता था। 2 अगस्त, 1835 को कोलकाता से फारसी में सुल्तान उल अखबार निकाला। इसके संपादक मोहम्मद ताहिर को राजद्रोह में हिरासत में लिया गया। 1857 तक यह पत्र बंद हो गया। इसी साल देहली उर्दू अखबार के संपादक की अंग्रेजों ने गोली मारकर हत्या कर दी। इसी तरह 16 अगस्त, 1843 को तत्वबोधिनी पत्रिका निकाली गई। इस पत्रिका ने कोलकाता में होने वाले धर्म परिवर्तन के खिलाफ मोर्चा खोला। 1855 तक इसके संपादक अक्षय कुमार दत्त थे, जिन्होंने हिन्दू स्कूल खोले जाने और उन्हें बढ़ाने पर बल दिया। 6 मार्च, 1849 मालवा अखबार निकाला गया। परंतु इसके संपादक को भी होलकर रियासत ने 3 माह के लिए दंडित किया।

स्वतंत्रता संग्राम के पहले दौर में राजाराम मोहन राय का बंगदूत था तो दूसरी तरफ दादा भाई नेरौजी के रस्तीगुफतार के साथ कई अन्य व्यक्ति सामाजिक सुधारों में लगे हुए थे। 1857 में पयाम ए आजादी जो कि हिन्दी और उर्दू में निकलता था; ने पहली बार अंग्रेजों से लोहा लिया था।

इसकी भूमिका इतनी महत्वपूर्ण थी कि यदि किसी के हाथ में इसकी कॉपी मिलती थी तो उसे सीधे न्यायालय का सामना करना पड़ता था। इसी के साथ दैनिक समाचार सुधावर्षण और उर्दू के दूरबीन और सुल्तान उल अख्तर को भी कोर्ट का फरमान मिला जब उन्होंने बहादुर शाह जफर का फरमान अंग्रेजों के खिलाफ छापा था। यह कुख्यात लार्ड कनिंग के गेगिंग एक्ट के तहत किया गया। द हिन्दू पेट्रियाट जो कि 1853 में गिरीशचंद्र घोष ने निकाला था इन्होंने इसमें लेखक की भूमिका का निर्वाह बखूबी किया। इसके संपादक हरीशचंद्र मुखर्जी थे। 9 जून, 1854 को कोलकाता से समाचार सुधावर्षण निकला। हालांकि इसकी प्रतियां उपलब्ध नहीं है, परंतु अन्य पत्रों में प्रकाशित सामग्री इसके विद्रोही होने का सबूत है। इसी कारण 1857 के बाद लगभग या तो अधिकांश पत्रों ने अपने आप को जीवित रखने के लिए विद्रोह की बातें तथा सरकार की बुराईयां कम कर दी थी। परंतु श्यामसुंदर सेन के संपकदत्व में निकलने वाले सुधावर्षण ने जमकर अंग्रेज सरकार का विरोध किया। वे भारतीय समाचार पत्रों की स्वतंत्रता के पक्षधर थे इसलिए लेखन में इतनी अस्पष्टता रहती थी कि विरोधियों को इन संकेतों को समझने में वक्त लग जाता था। इसी कारण वे अपने आप को लंबे समय तक अखबार के जरिये लोगों तक पहुंचा पाए। 1857 में यह पत्र विप्लवी शक्तियों का मुखपत्र था। साहस और जोश के साथ इसमें सूचनाएं दी जाती थी। 26 मई, 1857 के अंक में लिखा कि हाल ही में अंग्रेजों ने हमारे धर्म को भ्रष्ट किया है अतः ईश्वर उन पर क्रुद्ध है। ऐसा आभास मिलता है कि ब्रिटिश साम्राज्य का अब अंत आ गया है। जब दास मालिक को जवाब देने लगता है तब समझ लो कि मालिक का अंत निकट है। बहादुरशाह जफर के फरमान को इस पत्र ने ज्यों का त्यों छाप दिया इसी कारण उत्तेजना भड़की और उसे रोकने के लिए लार्ड केनिंग ने 13 जून, 1857 को प्रेस एक्ट पारित कर दिया। यह कानून गलघोंटू कानून के नाम से कुख्यात हुआ। इसी कानून के तहत दूरबीन, सुलतान उल अखबार और सुधावर्षण के संपादकों पर मुकदमे कायम किए गए। 1857 फरवरी को दिल्ली से पयाम ए आजादी का प्रकाशन प्रारंभ हुआ। इसके संपादक महान क्रांतिकारी अजीमउल्ला खां तथा बहादुरशाह जफर के पौत्र बेदार बख्त इसके प्रकाशक थे। इस पत्र के मुखपत्र पर छपने वाली पक्तियां थी हम हैं इसके मालिक, हिन्दुस्तान हमारा। पाक वतन है कौम का, जन्नत से भी प्यारा। यहां पाक का अर्थ पवित्र से समझा जाए क्योंकि उस समय तक हमारे देश में अलगाववादी आतंक नहीं था। हिन्दी उर्दू का यह पत्र ज्यादा जीवित नहीं रहा परंतु जब तक जिया शोलों की तरह जिया, भारत में स्वतंत्रता की चेतना जाग्रत की। 1857 की पहली लड़ाई की असफलता के बाद बेदार बख्त को फांसी पर चढ़ा दिया गया। पयाम ए आजादी की प्रतियां जिनके पास भी मिली उन्हें मौत के घाट उतार दिया गया। 1861 में प्रकाशित नील दर्पण ने भी अंग्रेजों की नाक में दम कर दिया था। इसी के बाद नील की खेती करने वालों के लिए नील आयोग बना। इसे बाद में ईश्वरचंद्र विद्यासागर ने संभाला। इस समाचारपत्र ने बड़ी सख्ती के साथ मांग की थी कि शासन में भारतीयों को भी नियुक्ति किया जाए।

15 नवंबर, 1858 को ईश्वरचंद्र विद्यासागर ने साप्ताहिक सोमप्रकाश का प्रकाशन प्रारंभ किया। प्रशासन में भारतीयों के साथ होने वाले व्यवहार को लेकर सोमप्रकाश ने अनेक बार मोर्चा खोला। 17 नवंबर, 1862 के अंक में साफ लिखा कि लाठी का जवाब लाठी से, पत्थर का जवाब पत्थर से और घूंसे का जवाब घूंसे से दिया जाना चाहिए। तब तक गरम दल और नरम दल की अवधारणा बन चुकी थी और सोमप्रकाश ने उग्रपंथी नेताओं को आगे बढ़ाने का काम किया। 1 अगस्त, 1866 को सिंध सुधार पत्र जिसके संपादक नारायण जगन्नाथ वैद्य थे। फारसी लिपि में छपने वाले पत्र में फिरंगी हुकूमत की जमकर आलोचना की जाती थी। 1867 में मलयालम पत्रिका संदिष्टवादी निकली जिसे शासन ने बंद कर दिया। महादेव गोविंद रानाडे ने ज्ञान प्रकाश निकाला जो कि मराठी पत्रकारिता में एक महत्वपूर्ण स्तंभ की तरह खड़ा रहा। इसके बाद इंदु प्रकाश का प्रकाशन किया। इन दोनों पत्रों ने शोषित जनता की आवाज को बुलंद किया। इंडियन मिरर भी जनता के बीच लोकप्रिय था। 20 फरवरी, 1868 को अमृत बाजार पत्रिका निकला जो कि आज तक जारी है। इसने पत्रकारिता से जुड़े अधिकारों और कानूनों पर जमकर कार्य किया। इसने अनेक मोर्चों पर अंग्रेजों और उनकी विचारधारा से जमकर लड़ाई लड़ी और भारतीयता के मौलिक मानदंड स्थापित किए। पत्र प्रकाशन के चार माह बाद ही एक अंग्रेज द्वारा महिला छेड़छाड़ की भर्त्सना में छापा तो लिखने वाले को तथा संपादक को एक-एक माह की सजा हो गई। इसके संपादक शिशिर कुमार घोष तथा मोतीलाल घोष थे। शिशिर कुमार नैसर्गिक रूप से स्वतंत्रता को मानव का पहला अधिकार मानते थे। इसी पत्र के समाचारों के बाद अंग्रेज सरकार ने भारतीयों की बौद्धिकता को माना और माना जाने लगा कि प्रशासकीय कार्यों में भारतीयों को भी पद देने पड़ेंगे। तब यह महसूस किया गया कि देश में राष्ट्रीय आंदोलन संचालित करने के लिए प्रभावी राजनीतिक संस्था की स्थापना आवश्यक है। इस कारण 23 सितंबर, 1875 को शिशिर कुमार घोष ने इंडियन लीग की स्थापना की। इसका उद्देश्य राष्ट्रीयता की भावना और राष्ट्रीय शिक्षा को बढ़ावा देना था। इस पत्र में ऐसा कोई समाचार नहीं छूटता था जो स्वतंत्रता आंदोलन को बल देता हो।

अमृत बाजार पत्रिका ने 2 जुलाई, 1909 को एक अंक में लिखा कि एक जनवरी 1907 से उकसाने वाले जिन 58 लेखों और भाषणों पर मुकदमे चलाए गए उनका विवरण दिया गया। इससे यह तथ्य उजागर हुआ कि दो साल से भी कम समय में 50 से 60 भारतीयों को सजा हुई, जिनकी मियाद 150 साल होती है। भारी जुर्माने के अलावा बहुत सी प्रेस को राजसात भी कर लिया गया। यह पता चला कि इन सजा पाए पत्रकारों में कई तो युवा ही थे उनके से अधिकांश को सश्रम कारावास मिला। कुछ को देश निकाला दिया गया। खुलकर टिप्पणी करना पत्रिका की खासियत थी। इसमें एक ऐतिहासिक स्कूप छापा गया। यह समाचार आठवें किंग एडवर्ड के अपहरण का था। उस समय पत्र के संवाददाता रेमसे मैक डोनाल्ड थे जो बाद में ब्रिटेन के प्रधानमंत्री हुए।

1868 में ही सतारा से महादेव गणेश कोल्हटकर ने महाराष्ट्र मित्र का प्रकाशन किया। इसकी नीति थी समाचार पत्र स्वदेशाभिमान और स्वराज नीति का बहुत बड़ा खजाना है। समाचारपत्र प्रजा प्रेम व्यक्त करने वाला एक सुलभ यंत्र है। 1972 में प्रारंभ हुए हिन्दू पंच के संपादक कृष्णाजी काशीनाथ फडके को भी तिलक की सजा होने पर छपे आलेख पर मानहानि देनी पड़ी और उस समय प्रेस को भी जप्त कर लिया गया। ऐसे ही 1873 को अक्षयकुमार सरकार ने साधारणी का प्रकाशन किया पर वर्नाकूलर प्रेस एक्ट के बारे में लिखने पर बलि चढ़ा दिया गया। बिहार में पहले बंगला जानने वाले लोग अधिक थे परंतु बिहार बंधु के प्रकाशन के बाद बिहार में हिन्दी का वातावरण बना। यह 1873 से 1923 तक चला। हिन्दी प्रदीप के बंद होने का कारण श्री माधव शुक्ल की कविता बम क्या है बनी। हिन्दी वर्द्धिनी सभा के प्रायोजन से सितंबर 1877 को हिन्दी प्रदीप का प्रकाशन प्रारंभ किया। पं. बालकृष्ण भट्ट ने इसके संपादक रहते हुए बहुत सी चुनौतियों का सामना किया। हिन्दी को बढ़ावा देने के साथ ही स्वराज्य की सभी चुनौतियों को अपने शब्द दिए। 31 वर्षों के अपने जीवन में हिन्दी प्रदीप ने राजनीति से समाज तक के अनेक मुकामों को अपने पत्र में स्थान दिया। इसी कड़ी का अखबार भारत मित्र रहा जिसके संपादकों को भी सरकार के कोप का भाजन बनना पड़ा। इनमें बाबूराव विष्णु पराडकर, नारायण राव गर्दे थे।

20 सितंबर, 1878 को छः युवकों ने द हिन्दू की स्थापना की तब तक किसी को नहीं पता था दक्षिण भारत का यह पत्र अंग्रेजों की नजर में भारतीय षडयंत्रकारियों का अड्डा बन जाएगा। द हिन्दू की संपूर्ण गतिविधयों का वैयक्तिक अध्ययन किया जाना चाहिए। जब प्रथम महायुद्ध अपने निर्णायक दौर में था तब भारत के कुछ संपादकों को ब्रिटेन बुलाया गया। लेकिन कुछ पत्रों को ब्रिटेन में प्रतिबंधित कर दिया गया वे थे द हिन्दू, एनी बेसेन्ट का न्यू इंडिया, बॉम्बे क्रानिकल और अमृत बाजार पत्रिका। 13 जनवरी, 1879 को प्रारंभ हुए सारसुधा निधि के संपादक सदानंद मिश्र थे। इसमें फिरंगियों की चालबाजियों के खिलाफ उग्र लेख छपा करते थे।

1 जनवरी, 1881 को लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक ने केसरी का शुभारंभ किया। इसी के बाद चिपलूणकर तथा आगरकर ने साप्ताहिक निकाला जिसका नाम मराठा था। डेक्कन स्टार के संपादक नामजोशी ने भी मराठा में सहयोग प्रदान किया। केसरी ने संपादक के लिए देशभक्ति, विद्वता, भाषा, चरित्र और जनसंपर्क ये गुण प्रमुख माने। केसरी के संपादकों को सजा होती रही। इस कारण तिलक जेल में रहे जहां उन्होंने गीता पर टीका भी लिखी। केसरी के तेवर कभी भी सुस्त नहीं रहे। उसमें सरकार की नीतियों की जमकर आलोचनात्मका टिप्पणी की जाती रही। 2 फरवरी, 1881 को द ट्रिब्यून शीतलकांत चटर्जी ने निकाला। इनके बाद शीतलचंद्र मुखर्जी, विपिनचंद्र पाल, अलफ्रेड नंदी तथा नरेन्द्र नाथ गुप्त ने इसके संपादक का काम संभाला। 1917 से इसके संपादक कालीनाथ राय हुए जिन्हें जलियांवाला बाग कांड के बाद विरोध करने पर हिरासत में ले लिया गया। पंडित नारायण प्रसाद ने ब्राह्मण निकाला। इसमें भी देश की परिस्थितियों पर खूब लिखा गया। इसके बाद बहुत से पत्र निकलते रहे जिन्होंने भारतीय पत्रकारिता में अपना नाम बनाया। उन पत्रों ने राजनीति समझ और सामाजिक जागरूकता के क्षेत्र में बहुत से काम किए। 1883 में प्रतापगढ़ के राजा रामपाल सिंह ने लंदन से हिन्दोस्थान का प्रकाशन प्रारंभ किया। इस पत्र में ब्रिटिश संसद में भारतीयों को प्रतिनिधित्व देने की मांग उठाई थी। इसी के कारण 1886 में दादाभाई नेरौजी को ब्रिटिश संसद में स्थान मिला। इस पत्र में अमृतलाल चक्रवर्ती संपादक बने। बाद में मदनमोहन मालवीय जी को कोलकाता के ओजस्वी भाषण के बाद संपादक बनाया गया। इनके सहयोगियों में बालमुकुन्द गुप्त, शशिभूषण चटर्जी, प्रताप नारायण मिश्र सहयोगी संपादक रहे।

इसके बाद ऐसे अनेक अखबार निकले जो धन के अभाव में तथा शासन की मुखालफत करने के कारण बंद हो गए। साहित्यिक, सामाजिक पत्र-पत्रिकाओं की एक लंबी फेहरिस्त है। इसी कड़ी में पं. महावीर प्रसाद द्विवेदी की सरस्वती रही। इसके बारे में राहुल सांस्कृतायन ने कहा किसी भाषा के बारे किसी एक व्यक्ति और एक पत्रिका ने उतना काम नहीं किया, जितना हिन्दी के बारे में इन दोनों ने किया। 1900 में छत्तीसगढ़ से छत्तीसगढ़ मित्र के प्रकाशक वामन बलीराम सखा थे और संपादक पं. रामराव चिंचालकर तथा पं. माधवराव सप्रे थे। भास्कर विष्णु फडके के संपाकदत्व में मुंबई से बिहारी निकला जो कि तिलक के विचारों का समर्थक था।

बाद में यही पत्र दामोदर विनायक सावरकर की अभिनव भारत संस्था का मुख पत्र बना। इसके संपादक फडके को दो साल की कैद और 300 रूपए जुर्माना हुआ। इसके दूसरे संपादक रामचंद्र मांडलिक को भी दो साल की सजा सुनाई गई। 1905 में पुणे से भाला शुरू हुआ। इसके संपादक भास्कर बलवंत भोपटकर थे। सरकारी दमन के कारण भाला बंद हो गया।

1906 को विपिनचंद्र पाल, चित्तरंजन दास और सुबोधचंद्र मलिक ने कोलकाता से वंदे मातरम् निकाला। अहिंसात्मक प्रतिकार के कारण पाल को छ माह की कारावास सजा दी गई। इसी तरह युगांतर के संपादक के साथ भी किया गया। 1907 में रामानंद चटर्जी ने मार्डन रिव्यू का संपादन प्रकाशन किया। इनकी टिप्पणियां दो टूक होती थीं। स्वराज की उम्र रही कुल ढाई साल। इसके कुल संपादक रहे 8 और उन सभी को सजा हुई। इसी साल तिरूअनंतपुरम से निकले संस्कृत के पत्र जयंती के संपादक कोमल मारूताचार्य तथा लक्ष्मीनंदन स्वामी को भी जेल भेजा गया। राष्ट्रमत भी इसी बात का शिकार हुआ। लीडर मदनमोहन मालवीय ने 24 अक्तूबर, 1909 को इलाहाबाद से निकाला। परंतु गांधीजी के असहयोग आंदोलन की खबरें न देने के कारण आलोचना का शिकार हुआ। 1913 का प्रताप कानपुर से निकला जिसके संपादक गणेशशंकर विद्यार्थी थे। इसका ध्येय वाक्य था 'जिसको न निज गौरव तथा निज देश का अभिमान है। वह नर नहीं, नर पशु निरा है और मृतक समान है।' पत्र का गौरव ही था कि 1915 को प्रेस की तलाशी ली गई, सारा सामान जब्त कर लिया गया। जमानत मांगी गई, गांधी जी का सहयोग करने के कारण विद्यार्थी और मिश्र जी को जेल और जुर्माना दोनों हो गया। इसी के बाद पत्र का कार्यभार माखनलाल चतुर्वेदी ने संभाला था।

1919 के उडिया के गोपबंधु दास के समाज को उडिया पत्रकारिता का उत्कर्ष माना जाता है। इन्हें भी दो साल की कैद हुई थी। लोकमत, नवजीवन, यंग इंडिया जैसे पत्र जन-जागरण का कार्य करने लगे। तरुण भारत, लोक संग्रह, स्वदेश, प्रजा पक्ष, विजय, भविष्य पत्रों ने सामाजिक चेतना की अलख जगाई। सैयद हबीब ने लाहौर से 1919 में सियासत निकाला। इसमें रोलेक्ट एक्ट और जलियांवाला कांड पर खूब लिखा गया। इस कारण इन्हें तीन साल की कैद हुई। इसी साल प्रकाशित उखुवत और रैयत के संपादक को भी सजा सुनाई गई। लाला लाजपतराय ने द पंजाबी, वन्देमातरम और पीपुल का प्रकाशन लाहौर से प्रारंभ किया। इसी प्रकार महात्मा गांधी ने दक्षिण अफ्रीका से लाकर इंडियन ओपिनियन यहां प्रारंभ किया। इसके बाद यंग इंडिया, नवजीवन हरिजन और हरिजन सेवक के साथ हरिजन बंधु भी प्रकाशित किए। स्वराज्य का मार्ग बम और गोलियों से प्रारंभ नहीं हुआ था। इसमें समाचार-पत्रों ने बड़ी महती भूमिका अदा की थी। इसमें बरिंद्र कुमार घोष का युगातंर एक काल परिवर्तन का कारक रहा है। इसके बाद अमेरिका से लाला हरदयाल ने गदर निकाला जो कि एक ही साल में गुजराती, मराठी, हिन्दी, अंग्रेजी पंजाबी और उर्दू में निकलने लगा। विदेशी कपड़ों के साथ इसे विदेश से भारत लाया जाता था। 1920 में काशी से हिन्दी दैनिक आज निकला जिसमें छपता था पराधीन सपनेहु सुख नाहीं। बाबूराव विष्णु पराडकर, रामकृष्ण रघुनाथ खाडिलकर, श्रीकांत ठाकुर विद्यालंकार, कमलापति त्रिपाठी तथा विद्याभास्कर ने इसका संपादन किया। पराडकर जी भारतमित्र में कार्य के दौरान सरकार की नजर में आए फिर उन्हें शिवप्रसाद गुप्त ने आज से जोड़ लिया। सरकार ने आज कार्यालय में धावा बोला और तत्कालीन संपादक को जेल भेज दिया। यह पत्र देश के सभी बड़े संपादकों का साधना स्थल रहा है। कर्मवीर, श्री शारदा, स्वतंत्र, छात्र सहोदर, तरूण राजस्थान, देश, वर्तमान, सिंध आब्जर्वर जैसे पत्रों ने फिरंगी हुकूमत पर अपने शब्दों से धावा बोला। इसी साल जमाना, एहरार, वंदे मातरम्, किर्लोस्कर, उदय, मूकनायक, कौमी दर्द तथा सर्वेंट निकाला। 1921 को पैगाम, खिलाफत, तरूण भारत तथा तिलक निकले। 1923 का नवाकाळ मुंबई से कृष्णाजी प्रभाकर खाडिलकर ने निकाला। इसके संपादक यशवंत खाडिलकर भी थे। स्वतंत्रता आंदोलन की खबरें इसमें प्रमुखता से छापी जाती थी। इस कारण संपादक को जेल भी हुई। इसी वर्ष के मिलाप में पंडित सुंदरलाल की पुस्तक भारत में अंग्रेजी राज के अंश प्रकाशित किए गए इस कारण संपादक खुशालचंद को राजद्रोह के आरोप में 9 माह की जेल तथा दो सौ रूपए का जुर्माना भी किया गया। 1925 के सैनिक में संपादक श्रीकृष्णदत्त पालीवाल ने अपने संपादकीय में कहा कि देशवासी अहिंसात्मक सत्याग्रह संग्राम की सन्निहित शक्तियों और महती संभावनाओं को समझें। इसके बाद के सालों में महावीर, सत्यवादी, आलोक, भारत विजय, सुधा, वीणा जैसे अनेक पत्र-पत्रिकाओं का प्रादुर्भाव देखने को मिला। इसके बाद सुकवि, विशाल भारत, भारतेंदु, वीर भारत, समस्त, यशवंत, युवक जैसे पत्र आए। इसी कड़ी में सकाळ, जागरण, प्रतिभा, प्रभात, स्वराज्य जैसे पत्रों ने सेंसरशिप तथा भारत की स्वतंत्रता संबंधी अनेक विषयों को प्राथमिकता देने का कार्य किया। युगांतर के बाद 1933 में बापू का हरिजन, हरिजन सेवक और हरिजन बंधु प्रकाशित हुआ। नागपुर टाईम्स, देश, सुबह वतन, निर्भीड, विहंगम, संजीवनी, सनातन धर्म जैसे अनेक पत्र स्वतंत्रता की चाह में चलते रहे और वर्तमान में भी जारी है।

स्वराज ७५ जिलाश:

विभाग	जिला	कुल नगरीय बस्ती	कितनी बस्ती में कार्यक्रम हुए	कुल कार्यक्रम	कुल संख्या	कुल वक्ता	कुल ग्रामीण मंडल	व
देवास	शाजापुर	२८	१६	२४	१६८०	११	७३	
	देवास	४६	४२	१०२	३२००	३६	६३	
	कन्नोद	२१	१०	१०	८६०	११	६१	
उज्जैन	आगर	१६	१०	१५	४८९	१२	६१	
	उज्जैन ग्रामीण	१०	१०	१०	२२३	४	७३	
	नागदा	२७	२३	३४	१८४५	४४	६०	
	उज्जैन महान	५९	३७	८४	३७२२	७३		
मंदसौर	नीमच	४०	३५	६१	२३२८	४८	७६	
	गरोठ	१८	१८	२०	२३४	२०	५०	
	मंदसौर	३३	२९	१२२	५१२९	६५	७४	
रतलाम	जावरा	२२	१६	२४	१३२१	२३	५७	
	रतलाम	४९	३०	५१	२४५०	५५	४९	
	झाबुआ		१०	११	५३३	८		
धार	आलीराजपुर	१०	१०	६१	१३४४	६१	६७	
	कुक्षी							
	धार	४९	४१	८०	३०४०	६५	८८	
इंदौर	द्वारिका	८०	६९	२५२	१२४४२	१५०		
	बद्रीनाथ	७६	६१	१७६	१७२८	२४		
	जगन्नाथ	२४	१४	६३	३३६९	०		
	रामेश्वरम	७९	४५	१०८	४७२०	३९		
	महू	२९	१८	४६	१४१०	२६	६५	
खरगोन	बडवानी							
	सेंधवा	१४	१४	४३	१०२०	१४	३०	
	खरगोन	२४	२१	२१	१२६०	१८	६८	
	बडवाह	२३	१३	१३	२६०	१३	३८	
खंडवा	ओंकारेश्वर	७	७	७	११९	७	४८	
	खंडवा	२७	२७	१२०	४८००	८५	४२	
	ब्रम्हपुर	३६	७	७	७०९	५	२७	
८	२८	८४७	६३३	१५६५	६०२३५	९१७	११७०	

वृत (मालवा प्रांत)

कितने मंडलों में कार्यक्रम हुए	कुल ग्राम	कितने ग्रामों मे कार्यक्रम सम्पन्न हुए	कितनी संख्या	कुल वक्ता	कुल कार्यक्रम स्थान	(नगरीय+ ग्रामीण) कुल कार्यक्रम	कुल संख्या	कुल वक्ता
२१	५९२	१४०	१८६०	३२		१६४	३५४०	४३
६३	५५९	८७	१८६०	१६		१८९	५०६०	५२
२९	५६५	६९	१३८०	३२	७९	८०	२२४०	४३
३६	५११	८४	१६०८	७६		१०३	२०९७	८९
५६	७०६	४१२	२५००	६५		४२२	२७२३	६९
२८		७९	१३११	६३		११३	३१५१	१०७
						८४	३७२२	७३
४९	७०३	८३	१५६०	५८	११८	१४४	३८८८	१०६
३८	४०५	१८५	३५७०	१८५		२०६	३८०४	२०३
५०	५४३	१२१	२३५७	४५		२४३	७४८६	११०
३८	४४५	८१	३४९६	७६	५४	१०५	४८१७	९९
२४	६३४	७०	२२५०	५०		१२१	४७००	१०५
	२८	३४	९७४	३५	३८	४५	१५०७	४३
३४	५४२	८१	१८९९	८२		१४२	३२८३	१४३
५५	९३३	२१८	५७५८	१६३		२९८	८७९३	२२८
						२५२	१२४४२	१५०
						१७६	१७२८	२४
						१४	३३६९	०
					४५	४५	४७२०	३१
३२	६१८	१६९	४५८२	५९	२१५	१४७	५९९२	८५
१६	३२९	५९	९२२	१२		७७	१९५०	२६
४८	७४०	९८	१५६०	२१		११९	२८२०	३९
१२	३९८	१२	३६०	१२	१२	२५	६२०	२५
३७	३९२	३७	२४५०	३७		४२	२५६९	४२
२३	३२३	१४०	६८००	१४		२६०	११६००	९९
१७	२४१	५४	३७४०	३२		६१	४४४९	३९
७०६	१०२०७	२३१३	५२७९७	११६५	५६१	३६७७	११३०७०	२०७३

आजादी का अमृत महोत्सव के तहत हुई चित्रकला प्रतियोगिता

पुलिस डायरी

BHOPAL | SATURDAY | FEBRUARY 12, 2022
www.freepressjournal.in FREE PRESS

Seminar held to mark Azadi Ka Amrit Mahotsav

JAORA: A seminar was organised in Sardar Patel Nursing College, Jaora as a part of the ongoing `Azadi Ka Amrit Mahotsav-celebrating 75 years of India`s Independence. Jaora district coordinator advocate Yash Jain introduced the guests and gave a welcome address. The main speaker in the seminar was Rashtriya Swayamsevak Sangh Vibhad Sanchalak Tejram Mangroda, chairman of Maharishi Patanjali Sansthan Board Bharat Bairagi, Nursing College professor Suresh Chide. At the beginning of the event, the guests garlanded the picture of Goddess Sharda and Vallabhbhai Patel, followed by the national anthem by all the students, teachers and guests present. Mangroda, who was keynote speaker, said that just as the country celebrates the festivals of Holi and Diwali, in the same way we should celebrate the Swaraj Amrit Mahotsav. Later tributes were also paid to Lata Mangeshkar, who passed away recently.

स्वतंत्रता संग्राम सेनानी की 100वीं जयंती पर दी श्रद्धांजलि, योगदान को किया याद

• पुराना एबी रोड स्थित जय स्तंभ के पास आयोजित किया कार्यक्रम

विभिन्न खेल संगठनों के ... ने मास्क लगाकर किया ...

व्यायामशालाओं के पहलवानों ने मलखंभ की प्रस्तुति दी, मेडल देकर सम्मान किया

महाराणा बख्तावरसिंह ने परतंत्रता को स्वीकार नहीं किया -दीक्षित

500 खिलाड़ियों ... सूर्य नमस्कार

75 स्थानों पर ध्वज फहराए जाएंगे

खंडवा| 26 जनवरी से 15 अगस्त 22 तक स्वतंत्रता के अमृत महोत्सव के कार्यक्रम होंगे। आयोजनों की श्रृंखला में विचार गोष्ठियां, तिरंगा यात्राएं, भारत माता पूजन, विभिन्न सांस्कृतिक प्रतियोगिताएं, अनाम स्वतंत्रता योद्धाओं का जीवन परिचय

ॐ

ॐ

विश्व संवाद केन्द्र, इन्दौर

विश्व संवाद केन्द्र प्रिन्ट, इलेक्ट्रॉनिक, सोशल व वर्तमान में प्रचलित मीडिया के परिस्थितिजन्य संसाधनों के माध्यम से राष्ट्रीय विचारों, समसामायिक विषयों व घटना के विविध आयामों- जो राष्ट्रहित के लिए सर्वोपरि हों, के प्रचार-प्रसार का कार्य पूरी निष्ठा व प्रामाणिकता से करता है।

विश्व संवाद केन्द्र (मालवा प्रांत)

जी-1, केसरदीप एवेन्यु, 72 नारायणबाग इन्दौर (मप्र)
पिनकोड - 452007

☎ 0731-3551341, 6262000102

www.vskmalwa.com vskmalwa@gmail.com

/vskmalwa /vskmalwa / vskmalwa / vskmalwa

Azadi Ka Amrit Mahotsav

SHAKTI
PUMPING LIFE

सूर्य ही नई शक्ति

शक्ति सोलर होम लाईट एंड चार्जिंग सिस्टम

सौर ऊर्जा का उपयोग एवं अपार फ़ायदों को सभी जानते है, और इसलिये हर जगह एवं हर क्षेत्र में इसका अस्तित्व दिखने लगा है. अब सौर ऊर्जा का उपयोग उद्योगों के साथ साथ घरेलु बिजली के उपयोग में भी होने लगा है.

शक्ति पत्पस् ने शक्ति सोलर होम लाईट एंड चार्जिंग सिस्टम को विकसित किया है.

MRP 29500/-

शक्ति सोलर होम लाईट एंड चार्जिंग सिस्टम

- 150 वॉट का एक सोलर पेनल
- लिथीयम एंड फास्फेट (LFP) बैटरी 60 Ah
- MPPT चार्ज कंट्रोलर 20 A
- डीसी सिलिंग फैन
- 02 व्हाईट एलईडी बल्ब 6 वॉट

विशेषताएं

शक्ति सोलर होम लाईट एंड चार्जिंग सिस्टम में एक बार का निवेश जो आपको साल-दर-साल फायदा पहुंचाएं.

- बिजली के बिल में कमी
- लम्बे समय तक चले
- भरोसेमंद एवं बाधा रहित परफॉर्मेंस
- रख-रखाव एवं चलाना आसान
- पर्यावरण-अनुकूल
- प्रचुर मात्रा में उपलब्धता
- परंपरागत ऊर्जा के स्रोतों पर निर्भरता से मुक्त
- सरल संचालन
- लिथियम बैटरी की लाईफ अन्य सामान्य बैटरी की तुलना में अधिक है एवं यह बहुत जल्दी चार्ज होती है.

सोलर कंट्रोलर की विशेषताएं

HIGH PERFORMANCE CHIP | MULTIPLE PROTECTION | AUTOMATIC RECOGNITION | LIGHT EFFICIENCY TIME CONTROL | PWN CHARGE | SIMPLE INSTALLATION

कार्यप्रणाली

India : Toll Free No. 1800 103 5555

शक्ति पम्पस् (इंडिया) लिमिटेड

सेक्टर - 3, औद्योगिक क्षेत्र, पीथमपुर, जिला-धार (म.प्र.) - इंडिया फोन.: +91-7292-410500
ई-मेल: info@shaktipumps.com, वेब: www.shaktipumps.com. टोल फ्री नं.: 1800 103 5555

* नियम व शर्तें लागू.

आजादी की दुल्हन अपनी हुई 75 साल की

जय भारत का महापर्व है, इस पर हमको बड़ा गर्व है
हो जाओ तैयार साथियो और सजाओ पालकी
आजादी की दुल्हन अपनी हुई 75 साल की....

सत्तर ऊपर 300 का गजरा लाई कश्मीर से
और अयोध्या जाकर लाई शुभाशीष रघुवीर से
अखंड सुहागन है यह दुल्हन, अब होगा कोई तलाक नहीं
पीओके लेकर आएगी, सच कहता कोई मजाक नहीं
खुशी के मारे खिल जाएगी, कली-कली हर डाल की
आजादी की दुल्हन अपनी हुई 75 साल की....

सैंतालीस में थी उन्नीसी, लेकिन अब बीसीआई है
बीसी तो बीसी है लेकिन, उस पर इक्कीसी आई है
सात पांच को जोड़ कर देखो, संख्या बारा हो जाएगी
अब लगता है अपने भारत की, पो बारा हो जाएगी
सुलझ जायेगी सभी पहेली, कठिन से कठिन सवाल की
आजादी की दुल्हन अपनी हुई 75 साल की....

पचहत्तर को उल्टा कर दो, तो सत्तावन आता है
स्वातन्त्र्य समर की हम सबको, वह भी याद दिलाता है
शहीद हुए झांसी की रानी, मंगल नहीं अमंगल था
जीत कर भी हार गए हम, वह एक ऐसा दंगल था
यादें भूल नहीं पाए हम, लाल बाल और पाल की
आजादी की दुल्हन अपनी हुई 75 साल की....

राजगुरु सुखदेव भगत सिंह का, फांसी का फंदा याद हमें
तुष्टिकरण की राजनीति का, गोरखधंधा याद हमें
भारत माता का बंटवारा हमें, अभी तक खलता है
कितना अत्याचार हुआ था, सुनकर खून उबलता है
लाशों के ऊपर का प्रधान प्रतिष्ठा, हुई जवाहरलाल की
आजादी की दुल्हन अपनी हुई 75 साल की....

पूछ रहा हूं बापू तुमसे, ऐसी मन में ठानी क्यों
एक विधर्मी था जिन्ना तो, उसकी बातें मानी क्यों
आजादी के नायक थे तुम, कैसे खलनायक जीत गए
माता के बंटवारे को, पचहत्तर साल बीत गए
हमें अधूरी थी आजादी, बिना खड़क और ढाल की
आजादी की दुल्हन अपनी हुई 75 साल की....

सुभाष का उपहास उड़ाया और नेहरू से मोह किया
आजाद हिंद हो सारा अपना, सेना ने विद्रोह किया
गांधीजी के अनुयायी सब, गीत अहिंसक गाते थे
मर्दों की जब पड़ी जरूरत, वो नपुंसक बनाते थे
चरखा-चरखा कहते थे सब, जब जरूरत पड़ी मशाल की
आजादी की दुल्हन अपनी हुई 75 साल की....

▪ देवकृष्ण व्यास